MAPSY 07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Clinical Psychology

नैदानिक मनोविज्ञान

MAPSY 07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक	अध्यक्ष
प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो. एल.आर. गुर्जर**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

** संयोजक	* संयोजक
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर	**प्रो. एच. बी. नंदवाना**
निदेशक (अकादमिक)	निदेशक, सतत शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. विजयलक्ष्मी चौहान (सेवानिवृत्त)	**प्रो.आशा हिंगर (सेवानिवृत्त)**
मनोविज्ञान विभाग	मनोविज्ञान विभाग
मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर	राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
प्रो. दामीना चौधरी (सेवानिवृत्त)	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. कीर्ति सिंह**
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा
डॉ. पतंजलि मिश्र	**डॉ. अखिलेश कुमार**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

*डॉ. रजनी रंजन सिंह ,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 13.06.2015 तक
** डॉ. अनिल कुमार जैन, सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 14.06.2015 से निरन्तर

समन्वयक एवं सम्पादक मण्डल

समन्वयक

डॉ. अनिल कुमार जैन
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

विषय वस्तु एवं भाषा संबंधीसम्पादन

प्रो. विजयलक्ष्मी चौहान
सेवानिवृत्त आचार्य मनोविज्ञान
विभाग
मोहनलाल सुखाडिया
विश्वविद्यालय, उदयपुर

डॉ. अखिलेश कुमार
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा

इकाई लेखन

1 **डॉ संजय कांत प्रसाद (इकाई 1,2,3)**
निदेशक,
एनसीडी, इग्नू, नई दिल्ली

2 **डॉ अंजना पुरोहित (इकाई 4,5,6)**
मनोविज्ञान विभाग, एमएलएस
यूनिवर्सिटी, उदयपुर(राजस्थान)

3 **डॉ. विभूति भटनागर (इकाई 7,8,9)**
मनोविज्ञान विभाग, BNPG कॉलेज,
उदयपुर

4 **डॉ. रचना खण्डेलवाल (इकाई 10,11,12)**
मनोविज्ञान विभाग, BNPG कॉलेज,
उदयपुर

5 **डॉ प्रतिभा जेम्स (इकाई 13,14,15,16)**
मनोविज्ञान विभाग, BNPG कॉलेज,
उदयपुर

आभार

प्रो. विनय कुमार पाठक
पूर्व कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो .एल.आर .गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. करण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

डॉ. सुबोध कुमार
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

उत्पादन 2015, ISBN : 978-81-8496-511-7

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि.वि., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि.वि., कोटा के लिए कुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा (राजस्थान) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

MAPSY 07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पेज नं.
1	नैदानिक मनोविज्ञान : स्वरूप एवं विकास	1
2	पेशेवर प्रशिक्षण, विनियमन एवं आचार संहिता	17
3	नैदानिक मनोविज्ञान अध्ययन की विधियाँ	32
4	नैदानिक वर्गीकरण, DSM-IV वर्गीकरण तथा असामान्यता का वर्गीकरण	62
5	मनोचिकित्सा एवं मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा	77
6	व्यवहार चिकित्सा	90
7	चिन्ता विकृति	105
8	मनोविदिलता तथा पैरानोइया	123
9	व्यक्तित्व विकृतियाँ	140
10	संज्ञानात्मक एवं स्मृतिलोपीय विकृतियाँ	153
11	विभिन्न चिकित्सा	165
12	सामूहिक चिकित्सा तथा पारिवारिक चिकित्सा	180
13	नैदानिक हस्तक्षेप	194
14	मनोचिकित्सकों की समस्याएं, प्रशिक्षण सीमाएं, वास्तविक लक्ष्य तथा स्थानांतरण एवं भिड़ंत प्रतिस्थापन	208
15	हस्तक्षेप	221
16	बिने परीक्षण, वेश्लर बुद्धि मापनी तथा अनुभवजन्य उपागम: एम एम पी आई का नैदानिक महत्व	234

इकाई – 1

नैदानिक मनोविज्ञान : स्वरूप एवं विकास

Clinical Psychology : Nature and development

नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्य, नैदानिक मनोविज्ञान एवं सम्बधित क्षेत्र असामान्य एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अन्तर

Activities of Clinical Psychologist, Clinical Psychology and other related fields, difference between abnormal and Clinical psychology

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नैदानिक मनोविज्ञान की परिभाषा, स्वरूप एवं विकास

1.31 परिभाषा एवं स्वरूप

1.3.2 नैदानिक मनोविज्ञान का विकास

1.4 नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्य एवं भूमिका

1.4.1 आंकलन एवं मूल्यांकन

1.4.2 चिकित्सकिय प्रक्रिया

1.4.3 अनुसंधान कार्य

1.4.4 परामर्श एवं प्रशासकीय भूमिका

1.5 नैदानिक मनोविज्ञान एवं सम्बन्धित क्षेत्र

1.6 असमान्य एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अन्तर

1.7 सारांश

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1.10 संदर्भग्रंथसूची

1.1 प्रस्तावना

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक व्यवहारिक शाखा हैं, जो मनोवैज्ञानिक समस्या से ग्रस्त व्यक्तियों के मानसिक स्वास्थ्य को ठीक करने के लिए वैसे व्यवहारिक चिकित्सा पद्धति का इस्तेमाल करता है, जो विभिन्न मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। जैसा की हम जानते हैं कि मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान है और मनोविज्ञान के विभिन्न विधियों द्वारा मानव-व्यवहार का अध्ययन किया जाता है । इन मानव-व्यवहारों का अध्ययन किसी न किसी वातावरण के संदर्भ में किया जाता है। वातावरण के विभिन्न कारकों के द्वारा हमारा व्यवहार प्रभावित होता है। इसी व्यक्ति एवं वातावरण के अन्त:क्रिया के दौरान, वातावरण में उपस्थित नकारात्मक कारक एवं उद्दीपन के द्वारा व्यक्ति वातावरण के साथ सामन्जस्य स्थापित करने में कठिनाई महसूस करता है और वह वातावरण से अपना नियंत्रण खो देता है, ऐसी परिस्थिति में जो व्यवहार होते हैं वह उस व्यक्ति के लिए तथा वातावरण के लिए कष्टदायक होते हैं । उसे हम 'असामान्य' व्यवहार कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जब मानव में एक वातावरण को समझने की शक्ति का ह्रास होता है, तो वातवरण के अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता का भी ह्रास होता है। परिणामस्वरूप व्यक्ति का व्यवहार मौजूदा वातावरण के अनुकूल नहीं होता है तो इसे हम असामान्य व्यवहार की संज्ञा देते हैं।'' ये असामान्य व्यवहार सीधे तौर पर व्यक्ति की प्रतिदिन की क्रिया कलाप से जुड़ा होता है, और उसे प्रभावित करता है। इन असामान्य व्यवहार को अध्ययन हम असामान्य मनोविज्ञान में करते हैं। परन्तु उन असामान्य व्यवहारों को दूर कर व्यक्ति को सामान्य व्यवहार करने के योग्य बनाने की प्रक्रिया का अध्ययन हम ''नैदानिक मनोविज्ञान'' में करते हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप नैदानिक मनोविज्ञान का अर्थ, इसके स्वरूप इसका विकास, नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्य एवं भूमिका तथा सामान्य एवं नैदानिक मनोविज्ञान में मुख्य अन्तर इत्यादि का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाइ को पढ़ने के बाद, आप

- नैदानिक मनोविज्ञान का अर्थ बता सकेंगे एवं परिभाषा को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- नैदानिक मनोविज्ञान के क्षेत्र एवं स्वरूप को बता सकेंगे ।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्य की व्याख्या कर सकेंगे ।
- असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान के अन्तर को स्पष्ट कर सकेंगे । और
- नैदानिक मनोविज्ञान से सम्बन्धि क्षेत्रों का वर्णन कर सकेंगे ।

1.3 नैदानिक मनोविज्ञान की परिभाषा , स्वरूप एवं विकास

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक व्यवहारिक शाखा है। वैसे तो हम मनोविज्ञान को भावात्मक संदर्भ में परिभाषित करते हैं, परन्तु जब हम इसको कार्यात्मक संदर्भ में परिभाषित करना चाहेंगे, तो हमे यह देखना होगा, कि मनोवैज्ञानिक को कार्य क्या है, और जब हम मनोवैज्ञानिक के विभिन्न कार्यों को देखते हैं, तो नैदानिक मनोविज्ञान एक मुख्य व्यवहारिक मनोविज्ञान के रूप में

उभर कर सामने आता है। साथ ही हम यह भी पाते हैं कि इसका स्वरूप समस्त मानव व्यवहार के सामन्जस्य को समझ कर व्यक्ति को वातावरण के साथ एक सार्थक एवं संतुलित सम्बन्ध स्थापित करने सहायता प्रदान करना है। विभिन्न श्रोतों एवं विद्वानों के द्वारा नैदानिक मनोविज्ञान को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। कुछ मुख्य परिभाषाएं निम्नलिखित है।

1.3.1 परिभाषा एवं स्वरूप

Collins English dictionary (2012) के अनुसार '' Clinical Psychology is a branch of Psychology that studies and treat mental illness and mental retardation''.

इस परिभाषा के अनुसार नैदानिक मनोविज्ञान मानसिक बीमारी एवं मानसिक मंदता का अध्ययन एवं उपचार करता है। परन्तु यदि हम इस परिभाषा पर निर्भर करते हैं तो नैदानिक मनोविज्ञान का स्वरूप काफी सीमित हो जाता है। यानि मानसिक बीमारी एवं मानसिक मंदता का अध्ययन एवं उपचार ही नैदानिक मनोविज्ञान का मुख्य कार्य है, जबकि इसका क्षेत्र व्यवहारिक रूप से इससे बहुत ज्यादा है।

एक अन्य Dictionary, जिसका प्रकाशन 2015 में हुआ, ने इसे परिभाषित करते हुये कहा कि ''It is a branch of Psychology dealing with the diagnosis and treatment of personality and behavioural disorders.'' (Random House Dictionary, publisihed by Random House Inc. (2015) इस परिभाषा ने नैदानिक मनोविज्ञान के क्षेत्र एवं स्वरूप को विस्तृत किया है। इसके अनुसार नैदानिक मनोविज्ञान व्यक्तित्व विकृति एवं व्यवहार विकृति का निदान एवं उपचार करता है। इसके अन्तर्गत व्यक्तित्व एवं व्यवहार दोनों को सम्मिलित किया गया है, जो अपने आप में काफी विस्तृत एवं व्यापक है।

Clinical Psychology, के प्रत्यय को सबसे पहले Lightner Witner (1907) ने परिभाषित किया था। उन्होंने इसे परिभाषित करे हुये कहा कि ''Clinical Psychology study the individual, by observation or experimentation with the intension of promoting change''.इस परिभाषा के अनुसार नैदानिक मनोविज्ञान व्यक्ति का अध्ययन के अनुसार नैदानिक मनोविज्ञान व्यक्ति का अध्ययन, अवलोकन के द्वारा या प्रयोग के द्वारा करता है, तथा उसका मुख्य उद्देश्य होता है, उस व्यक्ति विशेष में बदलाव करना, जिससे वह ज्यादा व्यवस्थित रूप से वातावरण में अथवा समाज में अपने आप को स्थापित कर सके।

American Psychologist (1968) के अनुसार ''Clinical Psychology is 'science profession whose gradnates are equally qualified for scholarly and service careers.''

इसके अनुसार नैदानिक मनोविज्ञान एक वैज्ञानिक व्यवसायी को तैयार करता है, जो पूरे तौर पर विद्वत एवं विभिन्न सेवाओं, जो वैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा किया जाता है, करने में सक्षम होते हैं।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि नैदानिक मनोविज्ञान विभिन्न मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप के द्वारा व्यक्ति की अवस्था को समझने का प्रयास करता है। इन अवस्थाओं को समझने के लिए व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा आंकलन करना तथा आंकलन के परिणाम के अनुसार

व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं कार्य प्रणाली में बदलाव लाना तथा विभिन्न मनोचिकित्सा प्रविधियों के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार को संतुलित तथा वातावरण के अनुकूल बनाने में सहायता करता है।

नैदानिक मनोविज्ञान के स्वरूप को समझने के लिए हमें व्यक्तिवादिता एवं उनके समस्याओं को समझना ज्यादा जरूरी है। जैसा कि हम जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशेषताओं के कारण जाना जाता है, इन विशेषताओं के अन्तर्गत शारीरिक क्षमता के साथ-साथ चेहरे का भाव, शरीर की विभिन्न मुद्राओं तथा व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक विशेषतायें, जैसे उसके सोचने समझने की क्षमता, वातावरण के साथ संतुलन स्थापित करने की क्षमता इत्यादि शामिल होता है। वातावरण के उपस्थित विभिन्न उत्तेजनाओं एंव व्यक्ति की जरूरत एवं जरूरतों को पूरा करने के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व्यक्तिगत क्षमताओं में यदि तारतम्य नहीं हो तो व्यक्ति अपने आप को संकट की स्थिति में घिरा हुआ पाता है। ऐसी कई परिस्थितियों में व्यक्ति को समझने एवं उसके कार्य प्रणाली को सुचारू रूप देने के लिए मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। इन मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप के लिए हम नैदानिक मनोवैज्ञानिक का सहारा लेते हैं। ये नैदानिक मनोवैज्ञानिक मनोविज्ञान का विभिन्न सिद्धान्तों पर आधारित मनोचिकित्सा अथवा व्यवहार चिकित्सा का उपयोग करके व्यक्ति को उसके एवं वातावरण के बीच समन्वय स्थापित करने में सक्षम बनाता है।

1.3.2 नैदानिक मनोविज्ञान का विकास

नैदानिक मनोविज्ञान की शुरूआत करीब 1896 ई. में Lightner Witmer द्वारा प्रथम मनोवैज्ञानिक चिकित्सा केन्द्र (Clinic) खोलने के उपरांत माना जाता है। 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में नैदानिक मनोविज्ञान केवल मनोवैज्ञानिक आंकलन पर ज्यादा केन्द्रित था, तथा उपचार पर बहुत कम ध्यान दिया जाता था। परन्तु 1940 के द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत इसमें काफी बदलाव आया, क्योंकि उस समय काफी संख्या में प्रशिक्षित नैदानिक मनोविज्ञान की आवश्यकता महसूस किया गया। उसी समय से नैदानिक मनोविज्ञान के दो मुख्य शैक्षिक प्रतिमान विकसित हुए। ये प्रतिमान है, Ph.D. डिग्रीधारक वैज्ञानिक (पी.एच.डी स्तर के शोध प्रबंध के साथ-साथ नैदानिक हस्तक्षेप में महारथी होते थे, इस प्रतिमान को व्यवसायी प्रतिमान कहते हैं। दूसरा प्रतिभाषा जो मुख्य संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रचलित था, वह Psy.D. व्यवसायी, जिसे विद्वत प्रतिमान (Scholar Model) भी कहते हैं।

नैदानिक मनोविज्ञान के उद्भव से पहले मानसिक रूप से अस्वस्थ व्यक्तियों के उपचार के लिए ज्यादातर झाड़ फूक इत्यादि का सहारा लिया जाता था। परन्तु वैज्ञानिक समुदाय इस प्रकार के उपचार को अपनी सहमति नहीं देते थे, तथा मनोविज्ञान इस संबंधमें ज्यादा जुड़ा हुआ नहीं था। 19वीं सदी के उत्तरार्थ में मानसिक रोग से पीड़ित व्यक्तियों का उपचार के लिए मनोविज्ञान की भूमिका की चर्चा होने लगी। इसी के उपरांत 1896 में Witmer ने प्रथम मनोवैज्ञानिक क्लीनिक की स्थापना की, जो कि मुख्य रूप से अधिगम अक्षमता वाले बच्चों के लिए कार्य कर रहा था। इसके करीब 10 वर्षों के उपरांत 1907 में ''Clinical Psychology'' को मनोविज्ञान के एक शाखा के रूप में पहचान दी गई।

20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में विश्वविद्यालय के प्रयोजनों से नये मनोवैज्ञानिक चिकित्सा केन्द्र की शुरूआत की गई। 1914 तक इनकी संख्या करीब 20 थी (Watson 1953) इसी दौरान हॉस्पिटल में मनोविकृति वाले रोगियों पर विभिन्न शोध किए जाए। मनोवैज्ञानिक मानसिक परीक्षण का विकास करने में लगे रहे। इस समय तक कुछ मनोवैज्ञानिक अपने को मानसिक परीक्षण के विशेषज्ञ के रूप में

स्थापित किए, तथा अपना काम मानसिक परीक्षण का उपयोग करने तथा उसके द्वारा प्राप्त परिणामों पर प्रतिवेदन तैयार करने में लगे रहे।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान नैदानिक मनोविज्ञान का काफी विकास हुआ। क्योंकि उस समय सेना को विभिन्न लोगों की योग्यताओं में विभेद करने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस कार्य को करने के लिए काफी संख्या में मनोवैज्ञानिक आगे आए और इस चुनौतिपूर्ण कार्य को करने मे अपनी रूचि दिखाई। इसी के परिणामस्वरूप सामुहिक बुद्धि परीक्षण का विकास हुआ, जिसे ''आर्मी-अल्फा शाब्दिक परीक्षण'' कहते हैं, जो मुख्य योग्यताओं जैसे - गणित, निर्णय लेने की क्षमता, निर्देश को पालन करना, तथा शब्द संग्रह का परीक्षण करता था। इसी के समानान्तर ''आर्मी बीटा परीक्षण'' का विकास हुआ, जो एक अशाब्दिक परिक्षण था, और जिसका उपयोग अनपढ़ लोगों पर किया जाता था। इसी समय वुडवर्थ (woodworth) के द्वारा Psychoneurotic inventory का विकास किया गया, जिसके द्वारा वैसे सिपाहियों की पहचान की जाती थी, जो संवेगात्मक समस्या से ग्रस्त थे।

दूसरे एवं तीसरे दशक के दौरान नैदानिक मनोवैज्ञानिक चिकित्सकीय सेटिंग (Therapeutic Setting) में कार्य करते रहे, और उनका मुख्य कार्य था, बच्चों के बौद्धिक एवं शैक्षणिक क्रियाकलापों का आंकलन करना। इसी दौरान बाल निर्देशन आंदोलन की शुरूआत हुई, और कई नये मनोवैज्ञानिक चिकित्सा केन्द्र स्थापित किए गए और कार्य शैली में Team Approach का उद्भव हुआ।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान काफी संख्या में नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को सेना अस्पताल के मानसिक रोग इकाई में मनोचिकित्सकों एवं सामाजिक कार्यकताओं के साथ कंधा से कंधा मिलाकर काम करते देखा गया।

विश्वयुद्ध के समाप्त होने के तुरन्त बाद अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएसन (APA) ने David Shako के अध्यक्षता में नैदानिक मनोविज्ञान के प्रशिक्षण का प्रतिमान का दर्शन (Philosophy) को निर्धारित करने के लिए एक समिति का गठन किया (APA Committee on Training of Clinical Psychology 1947)।

इसके उपरांत नैदानिक मनोवैज्ञानिक को ''Scienist Professional'' (वैज्ञानिक व्यावसायिक) कहा जाने लगा, और उनका विधिवत् प्रशिक्षण विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान विभाग में होने लगे, साथ ही उन्हें चिकित्सकीय व्यवस्था में ''अनिवार्य-निवासी सेवा'' (Internship) भी करना पड़ता था। यानि कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण में सैद्धांतिक प्रशिक्षण के साथ-साथ व्यवहारिक प्रशिक्षण की एक आवश्यक अंग बन गया। इसका मतलब था कि पहले उन्हें मनोवैज्ञानिक का प्रशिक्षण दिया जाता था, तथा इसके उपरांत नैदानिक कार्यों का, तब जाकर वे नैदानिक मनोवैज्ञानिक बनते थे। पूर्णत: प्रशिक्षित नैदानिक मनोवैज्ञानिक स्वायत्त रूप से कार्य करने एवं निदान, मनोचिकित्सा एवं अनुसंधान में कार्य करने में पूर्णरूप से सक्षम होते थे। इसका मुख्य कारण था कि Ph.D कार्यक्रम के अंतर्गत व्यवहारिक प्रशिक्षण एवं अनिवार्य निवासी सेवा को प्रशिक्षण का आवश्यक अंग माना जाता था।

1950 और 1960 के दशक में नैदानिक मनोविज्ञान का प्रसार निरन्तर होता रहा। इसी दौरान APA के द्वारा नैतिक मापदंड को विकसित किया गया। साथ ही अमेरिकरण बोर्ड ऑफ प्रोफेसनल

साइकोलॉजी के परीक्षण के तत्वाधान में इनके लिए परीक्षा की प्रणाली तथा इन्हें मान्यता देने के लिए समुचित्त प्रणाली का विकास किया गया।

वर्तमान में कुल प्रशिक्षित नैदानिक मनोवैज्ञानिक में से करीब 25 प्रतिशत पूर्ण रूप से चिकित्सकीय कार्य से जुड़े हुए हैं, बाकी सभी अन्य जगहों पर ज्यादातर शिक्षण एवं अनुसंधान कार्य में लगे हुए हैं।

70 के दशक से नैदानिक मनोविज्ञान एक व्यवसाय एवं शैक्षिक क्षेत्र के रूप में उभर कर सामने आया है। अमेरीका में यह एक व्यवसाय एवं शिक्षा के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में विकसित हुआ है। वर्तमान में इसकी सही संख्या का अनुमान लगाना तो कठिन है, परन्तु ऐसा अनुमान किया गया है कि 1974 से 1990 के बीच अमेरीका में नैदानिक मनोवैज्ञानिक की संख्या 20,000 से बढ़कर 63,000 हो गई। इसके साथ ही इनके कार्य का दायरा बढ़ने लगा, और वे मनोवैज्ञानिक एवं आंकलन से आगे निकलकर खेल के संबंधित् वृद्धावस्था में होने वाले मनोवैज्ञानिक लक्षण तथा आपराधिक न्याय प्रणाली में भी हिस्सा लेने लगे, जिसके कारण नैदानिक मनोविज्ञान का क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया।

United Kingdom में भी यह काफी लोकप्रिय विषय के रूप में उभर कर सामने आया है। प्रत्येक वर्ष करीब-करीब 15000 लोग इसमें स्नातक की उपाधि प्राप्त करते हैं।

अभ्यास एवं जाँच 1

1. i) नैदानिक मनोविज्ञान .....
    a) मनोविज्ञान की एक शाखा है।
    b) दर्शनशास्त्र की एक शाखा है।
    c) समाजशास्त्र की एक शाखा है।
    d) उपरोक्त सभी

   ii) ..... को नैदानिक मनोविज्ञान का जनक कहते हैं।
    a) Williom Wundt
    b) David Shakow
    c) Lightmer Witmer
    d) कोई भी नहीं

   iii) Clinical Psychology शब्द .....उत्पत्ति हुई।
    a) 1907
    b) 1896
    c) 1916
    d) 1945

2. नैदानिक मनोविज्ञान को परिभाषित करें।

.....

.....

.....

3. APA द्वारा दी गई परिभाषा को लिखे।

.....

.....

.....

1.4 नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्य एवं भूमिका

नैदानिक मनोवैज्ञानिक की सेवाओं एवं कार्य करने का क्षेत्र काफी विस्तृत है। इस प्रकार से नैदानिक मनोवैज्ञानिक कई प्रकार की सेवायें देने में सक्षम होते हैं। जैसे,

- मनोवैज्ञानिक आंकलन एवं परीक्षण का बंदोबस्त करना तथा उससे प्राप्त परिणामों का विवेचन करना।
- मनोवैज्ञानिक शोध करना।
- परामर्श (खासकर मनोचिकित्सा केन्द्र में, मानसिक स्वास्थ्य संरचना में, विद्यालय में तथा वे अन्य जगह जहाँ उनकी सेवाओं की जरूरत महसूस हो।
- मानसिक एवं व्यवहार समस्या का रोकथाम एवं उपचार की व्यवस्था करना।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक किसी व्यक्ति विशेष के साथ साथ, अन्य जैसे परिवार एवं समूह में भी कार्य कर सकते हैं। उसको अलावा विभिन्न प्रकार की संरचनाओं, जैंसे निजी प्रैक्टिस, मानसिक स्वास्थ्य संगठनों, स्कूल, व्यावसायिक संगठन इत्यादि के साथ और इत्यादि के लिए कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त वैसे नैदानिक मनोवैज्ञानिक जो शैक्षिक कार्य एवं अनुसंधान से जुड़े हुए हैं, वे निम्नलिखित में किसी क्षेत्र में अपनी विशेषज्ञता स्थापित कर सकते हैं।
    - स्वास्थ्य मनोविज्ञान
    - मनोशारीरिक औषधि
    - नैदानिक स्नायुतंत्र मनोविज्ञान
    - बाल मनोविकृति
    - स्कूल मनोविज्ञान
    - मानसिक विकृति (मनोवैज्ञानिक अभिघात, नशे की आदत, खाने संबंधी विकृति, शयन विकृति, यौन विकृति, चिन्ता, भय, अवसाद तथा मनोविकृति इत्यादि)

1.4.1 आंकलन एवं मूल्यांकन (Assessment and Evaluation)

नैदानिक मनोवैज्ञानिक का यह एक महत्वपूर्ण कार्य है। ऐसा देखा गया है कि करीब करीब 91 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने प्रतिदिन के कार्य में आंकलन एवं मूल्यांकन को मूल कार्य मानते हैं। आंकलन एवं मूल्यांकन करने का मुख्य उद्देश्य होता है, व्यक्ति की मनोदशा को समझना, उससे संबंधित एक सूझ का विकास करना, और उसके मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समस्या से

संबंधितपरिकल्पना (hypotheses) का विकास करना, जिसके कारण व्यक्ति को दिए जाने वाले उपचार को एक दिशा प्रदान की जा सके। आंकलन एवं मूल्यांकन के लिए विभिन्न विधियाँ जैसे - औपचारिक परीक्षण, नैदानिक साक्षात्कार, पूर्व में किए गए गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करना तथा व्यवहार का अवलोकन का उपयोग करते हैं।

आंकलन एवं मूल्यांकन के लिए उपयोग किए जाने वाले कुछ मुख्य मनोवैज्ञानिक परीक्षण निम्नलिखित है।

बुद्धि एवं उपलब्धि परीक्षण - इन परीक्षणों का निर्माण ज्ञानात्मक कार्यों के कुछ पहलुओं का मापन करने के लिए किया गया है, जिसके महत्वपूर्ण है, बुद्धिलब्धि का मापन। इन परीक्षणों के द्वारा व्यक्तित्व के भिन्न गुणों जैसे-सामान्य ज्ञान, शाब्दिक समझ, याददास्त,ध्यान,एकाग्रता, तार्किक, दृश्य एवं स्थान प्रत्यक्षीकरण इत्यादि का आंकलन करते हैं।

व्यक्तित्व परीक्षण - व्यक्तित्व परीक्षण के द्वारा व्यवहार की रूपरेखा, सोच एवं अनुभव, सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता, वातावरण में सफलतापूर्वक अभियोजन करने की क्षमता इत्यादि का आंकलन किया जाता है।

ये व्यक्तित्व परीक्षण दो प्रकार के होते हैं, वस्तुनिष्ठ एवं प्रक्षेपण परीक्षण। वस्तुनिष्ठ परीक्षण से उत्तर को दिए गए विकल्पों में से चयन करते हैं, जैसा हाँ/ना, सही/गलत इत्यादि-प्रक्षेपण परीक्षण के द्वारा अचेतन स्तर के मनोवैज्ञानिक गतिशिलता जैसे - प्रेरणा एवं प्रत्यक्षीकरण इत्यादि की जाँच की जाती है, और प्राप्त परिणामों के आधार पर व्यक्ति की व्यवहार एवं व्यक्तित्व के विभिन्न गुणों की व्याख्या एवं विश्लेषण की जाती है। इसके अतिरिक्त मनोस्नायू परीक्षण के द्वारा भी व्यक्ति के ज्ञानात्मक क्रियाकलाप की व्याख्या की जाती है।

नैदानिक साक्षात्कार - नैदानिक मनोवैज्ञानिक व्यवहार का अवलोकन करके व्यक्ति से संबंधित जानकारी प्राप्त करने में भी प्रशिक्षित होते हैं। अत: व्यक्ति के उपचार के लिए उचित योजना तैयार करने के लिए इस विधि का भी सहारा लिया जाता है।

1.4.2 मनोचिकित्सीय कार्य (Psychotheraputic activities)

नैदानिक मनोवैज्ञानिक का एक प्रमुख कार्य है, मनोचिकित्सा। मनोचिकित्सा का तात्पर्य है, लोगों के मानसिक समस्याओं को समझना एवं उसका समाधान करना। इसके अंतर्गत कई प्रकार के मनोचिकित्सा प्रविधि का उपयोग किया जाता है, जैसे व्यवहार चिकित्सा, व्यक्तिगत परामर्श पारिवारिक चिकित्सा, माता-पिता का प्रशिक्षण, व्यक्तिगत केन्द्रित मनोचिकित्सा इत्यादि। सबसे ज्यादा प्रचलित मनोचिकित्सा विधि है, व्यक्ति एवं मनोवैज्ञानिक दोनों एक साथ बैठकर समस्या की चर्चा करते हैं, और नैदानिक मनोवैज्ञानिक उस समस्या समाधान में व्यक्ति को मदद करता है।

According to Norcross et-al (1997b) ‘‘The prototype of Psychotherapy is one to one meeting between the therapist and the client to discuss the client's problems. This form of therapy referred to as individual Psychotherapy, is the most common form of therapy engaed by Clinic Psychology.

मनोचिकित्सा नैदानिक मनोवैज्ञानिक के द्वारा सर्वाधिक किया जाने वाला कार्य माना जाता है। Norcross et-al (1997-b) के अनुसार ''Eighty four percent of clinical psychologists in a recent survey reported that they engaged in psychothrephy.''

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विगत 40 वर्षों से मनोचिकित्सा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक विकासात्मक क्षेत्र रहा है।

1.4.3 अनुसंधानकार्य (Research work)

ज्यादातर नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने स्नातक एवं स्नातकोत्तर प्रशिक्षण के दौरान कम से कम एक अनुसंधान कार्य अवश्य किए हुए होते हैं, जो उन्हें प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए जरूरी होता है। वास्तव में अनुसंधान प्रक्रिया में प्रशिक्षण नैदानिक मनोवैज्ञानिक की एक महत्वपूर्ण विशेषता होती है, जो उन्हें अन्य पेशेवर से अलग श्रेणी में खड़ा करता है। चूंकि प्रशिक्षण के दौरान नैदानिक मनोवैज्ञानिक को अनुसधान का काफी हद तक प्रशिक्षण दिया जाता है, इसलिए अपने पेशेवर जीवन में भी नैदानिक मनोवैज्ञानिक किसी न किसी प्रकार के अनुसंधान कार्य में लगे रहते हैं। अनुसंधान कार्य के द्वारा उन्हें मनोचिकित्सा एवं अन्य पेशेवर गतिविधियों में नये नये आयाम प्राप्त होते रहते हैं।

Norcross, Karg and Prochaska (1997b) के अनुसार ''Although many clinical psychologists are involved in research in one form or another, a minority consider ''researcher'' to be their primary professional identity.''

यद्यपि नैदानिक मनोवैज्ञानिक द्वारा किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों का काफी बड़ा क्षेत्र है, फिर भी मानसिक समस्याओं, मानसिक विकृतिओं, व्यक्तित्व संबंधी समस्या, सामंजस्य स्थापित करने में समस्या व्यवहार विकृति, नशे की आदत, विभिन्न मानसिक रोग इत्यादि नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का पसंदीदा अनुसंधान विषय रहा है। जैसा कि Norcross (1976) ने अपने अध्ययन में पाया कि वे नैदानिक मनोवैज्ञानिक जो विश्वविद्यालय में प्रोफेसर है, अपने पेशेवर, समय का एक चौथाई हिस्सा अनुसंधान कार्य करने में व्यतीत करते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक का एक महत्वपूर्ण कार्य ''अनुसंधान'' होता है। यानि अनुसंधान उनके पेशेवर जीवन का एक अभिन्न अंग बन जाता है।

1.4.4 सलाह एवं प्रशासन (Consultation and Administration)

आजकल नैदानिक मनोवैज्ञानिक को विभिन्न संगठन सलाह के लिए उनकी सेवाओं को लेते हैं। जैसे - एक स्कूल अपने वैसे विद्यार्थियों के मूल्यांकन एवं सलाह के लिए नैदानिक मनोवैज्ञानिक की सेवाओं को लेते हैं जो विद्यार्थी किसी न किसी तरह के व्यवहार समस्याओं को प्रदर्शित करते हैं। यहाँ मनोवैज्ञानिक समस्या व्यवहार प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों का मूल्यांकन करता है और स्कूल के शिक्षकों एवं अन्य स्टाफ के साथ कार्य करके वैसे विद्यार्थियों के लिए शैक्षिक वातावरण तैयार करता है। एक व्यापारिक संगठन में नैदानिक मनोवैज्ञानिक की सेवाओं को लिया जाता है, जिससे की वह उनके कर्मचारियों को तनाव मुक्त रहने में उचित्त सलाह दे सकें और उन्हें मदद कर सके। सुधारात्मक दिशा में कार्य करने वाले संगठन नैदानिक मनोवैज्ञानिक की सेवाओं व आत्म हत्या रोकने में स्टाफ के सदस्यों को प्रशिक्षण देने के लिए लेते हैं। Hatcher, Mohanlie, Turner and

Gelles (1999) के अनुसार ''Clinical Psychologist have been dired by law enforcement agencies to assist in hostage negotiations''.

इसके अतिरिक्त बहुत सारे नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रशासनिक उत्तरदायित्वों का भी निर्वाह करते हैं। विश्वविद्यालय में नैदानिक मनोवैज्ञानिक, विभागीय अध्यक्ष, समकुलपति एवं कुलपति के पद पर भी आसीन होता है। अस्पताल, मानसिक आरोग्यशाला, एवं अन्य मानसिक स्वास्थ्य संस्थान में ये प्रशासक के रूप में अपनी सेवाएं प्रदान करते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्यकलापों का क्षेत्र काफी विस्तृत है। परंतु मुख्य रूप से ये, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का व्यक्तियों का मानसिक स्वास्थ्य, व्यक्तित्व एवं अन्य आयामों का आंकलन, मनोचिकित्सा, अनुसंधान सलाह एवं प्रशासनिक कार्य महत्वपूर्ण है। ये सारे कार्य किसी न किसी तरह से एक दूसरे से जुड़े हुए हैं।

अभ्यास एवं जाँच 2

सही गलत की जाँच करें।

1. a) नैदानिक मनोवैज्ञानिक केवल अनुसंधान कार्य करते हैं? सही/गलत
   b) मनोचिकित्सा नैदानिक मनोवैज्ञानिक का एक कार्य है- सही/गलत
   c) व्यक्ति के आंकलन के लिए नैदानिक मनोवैज्ञानिक कई मनोवैज्ञानिक परीक्षण का उपयोग करते हैं - सही/गलत
   d) अनुसंधान नैदानिक मनोवैज्ञानिक का पंसदीदा विषय रहा है। सही/गलत
   e) वैसे नैदानिक मनोवैज्ञानिक, जो विश्वविद्यालय प्रोफेस है, अपने पेशेवर जीवन का ..... भाग अनुसंधान कार्य में व्यक्त करते हैं?

1.5 नैदानिक मनोविज्ञान एवं संबंधित क्षेत्र

मनोचिकित्सक एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिक - एक सबसे ज्यादा जो बात लोगों के मन में आती है, कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सक में क्या अंतर है। एक आम बोलचाल भी भाषा मे जो उत्तर होता है, वह है, मनोचिकित्सक मानसिक रोगी को दवा दे सकता है, जबकि नैदानिक मनोवैज्ञानिक दवा नहीं दे सकते परंतु यह उत्तर पर्याप्त नहीं है। दोनों में मुख्य अंतर निम्नलिखित है।

मनोचिकित्सा एवं चिकित्सा की एक विशेष बात है। मनोचिकित्सक चार साल का प्रशिक्षण चिकित्साशास्त्र के अंतर्गत प्राप्त करते हैं, और मेडिकल डाक्टर की उपाधि प्राप्त करते हैं। मनोचिकित्सक के चार वर्षों का प्रशिक्षण अन्य चिकित्सा शास्त्र के विशेषज्ञों के समान ही होती है। इसके उपरांत उन्हें मानसिक रोग संबंधी दवाओं में एक साल का अनिवार्य निवासी सेवा करनी पड़ती है।

परंतु नैदानिक मनोवैज्ञानिक का प्रशिक्षण बिल्कुल भिन्न होता है। नैदानिक मनोवैज्ञानिक का प्रशिक्षण मनोविज्ञान की सिद्धांतों एवं विधियों से शुरू होता है, तथा मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं को पढ़ते हुए, नैदानिक मनोविज्ञान में विशेषता हासिल करते हैं। अंततः पीएच.डी. के दौरान एक साल का अनिवार्य निवासी सेवा, जो कि किसी दूसरे संस्थान में करनी पड़ती है, पूर्ण रूप

से नैदानिक स्वरूप का होता है। इसके उपरांत पीएच.डी. की उपाधि शोध को पूरा करके प्राप्त होती है।

नैदानिक मनोविज्ञान एवं परामर्श मनोविज्ञान

परामर्श मनोविज्ञान को भी मनोविज्ञान की एक विशेष शाखा के रूप में देखा जाता है, जो नैदानिक मनोविज्ञान के काफी मिलता जुलता है। परामर्श मनोवैज्ञानिक का भी प्रशिक्षण पांच वर्षों का होता है, जिसमें एक वर्ष अनिवार्य निवासी सेवा भी करनी पड़ती है। कई देशों में नैदानिक मनोवैज्ञानिक एवं परामर्श मनोवैज्ञानिक, दोनों को एक ही अधिनियम के अंतर्गत प्रैक्टीस करने के लिए लाइसेंस दी जाती है। परामर्श मनोवैज्ञानिक के कार्यों में मनोवैज्ञानिक आंकलन, चिकित्सा एवं सलाह मुख्य है।

परामर्श मनोवैज्ञानिक अधिकांश रूप से शैक्षिक क्षेत्र में कार्य करते हैं, साथ ही इन क्षेत्रों में सांमजस्य संबंधीसमस्या का भी समाधान करने में लोगों को मदद करते हैं। वर्तमान में परामर्श मनोवैज्ञानिक के कार्य क्षेत्र का विस्तार होता जा रहा है, और जल्द ही नैदानिक मनोवैज्ञानिक एवं परामर्श मनोवैज्ञानिक के कार्यों में अंतर काफी सीमित हो सकता है। Vredenburgh, Carlosssis stein (1999) Zook Swalon (1989) के अनुसार Counselling psychologist-has expanded their work setting to include private practice health care (Ruth-Roemer, Kurpin & Cermin (1998) and psychiatric institution.'').

स्कूल मनोविज्ञान

स्कूल मनोविज्ञान एक और मनोविज्ञान की शाखा है, जिसकी नैदानिक मनोविज्ञान से काफी समानता है। स्कूल मनोवैज्ञानिक स्कूल जाने वाले उम्र के बच्चों के बौद्धिक, सामाजिक एवं सवेंगात्मक जरूरतों को समझने एवं उन्हें उचित्त माध्यम से उपभोग करने के लिए शिक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों के साथ मिलकर कार्य करते हैं।

स्कूल मनोवैज्ञानिक के कार्य का एक मुख्य घटक मनोवैज्ञानिक परीक्षण हैं, क्योंकि वे ज्यादातर बौद्धिक परीक्षण, शैक्षिक उपलब्धि एवं कार्यात्मक व्यवहार में विश्वास करते हैं। स्कूल मनोवैज्ञानिकों की सहायता, अधिगम अक्षमता, ध्यान भंग, अतिसक्रियता विकृति (Attention defict Hyperactive disorder) तथा मानसिक मंदता की पहचान एवं निदान करने के लिए ली जाती है। स्कूल मनोवैज्ञानिक शिक्षकों को अपने कक्षा प्रबन्धन कौशल को और विकसित करने के लिए सहायता करते हैं।

उपरोक्त क्षेत्रों के अलावा भी कई ऐसे क्षेत्र है, जो नैदानिक मनोविज्ञान से काफी समानता रखते हैं। परंतु ये भी स्पष्ट है कि नैदानिक मनोविज्ञान एवं उपरोक्त वर्णित संबंधित क्षेत्रों के कार्यों में विभेद करना इतना आसान भी नहीं है।

अभ्यास एवं जाँच 3

सही गलत की जाँच करें।

1. a) मनोचिकित्सक एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्यों में कोई अंतर नहीं है। सही/गलत

   b) स्कूल मनोवैज्ञानिक अधिगम अक्षमता की पहचान करने

में सहायक होते हैं। सही/गलत

c) परामर्श मनोवैज्ञानिक अधिकांशत: वृत एवं शैक्षिक परामर्श के लिए कार्य करते हैं। सही/गलत

d) स्कूल मनोवैज्ञानिक के कार्यों का एक मुख्य घटक मनोवैज्ञानिक परीक्षण है। सही/गलत

e) स्कूल मनोवैज्ञानिक, शिक्षकों को कक्षा प्रबंधन कौशल विकसित करने मं सहायता करते हैं। सही/गलत

1.6 असामान्य एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अंतर

असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान दोनों मनोविज्ञान की शाखा है। परंतु दोनों मे कई विभेद और अंतर है।

1. असामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति के असामान्य व्यवहार का अध्ययन करता है, असामान्य व्यवहार से तात्पर्य वैसे व्यवहार से हैं, जो सामान्य व्यवहार की पैमाना से विघटित है। नैदानिक मनोविज्ञान में हम व्यक्ति के असामान्य व्यवहार को दूर कर सामान्य करने के विभिन्न प्रविधियों का उपयोग करते हैं।
2. असामान्य मनोविज्ञान में व्यवहार के विभिन्न सिद्धांतों का अध्ययन करते हैं, जबकि नैदानिक मनोविज्ञान में उन सिद्धांतों के आधार पर बनाये गये प्रविधियों का अध्ययन एवं उपयोग करते हैं। नैदानिक मनोविज्ञान में हम व्यक्ति के असामान्य व्यवहार को दूर कर सामान्य करने के विभिन्न प्रविधियों का उपयोग करते हैं।
3. असामान्य मनोविज्ञान का स्वरूप सैद्धांतिक होता है, क्योंकि यह शुद्ध मनोविज्ञान का एक प्रमुख भाग है। नैदानिक मनोविज्ञान व्यवहारिक मनोविज्ञान का एक भाग है, और उसके अंतर्गत हम ज्ञान का उपभोग करते हैं। इसके साथ ही नैदानिक मनोवैज्ञानिक एक चिकित्सीय व्यवस्था में मानसिक रोगियों या वैसे व्यक्तियों के साथ कार्य करते हैं, जिन्हें किसी न किसी प्रकार की पेशेवर मानसिक रोग विशेषज्ञ की सहायता की आवश्यकता होती है।

उपरोक्त विवेचना के बावजूद असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान में काफी समानताएं है, क्योंकि दोनों के विकास का आधार एक ही है।

मनोविज्ञान की इन दो प्रमुख शाखाओं को कॉलेज में एक साथ ही पढ़ाया जाता है। परंतु दोनों की असमानताएं उनके परिभाषा में निहित है।

असामान्य मनोविज्ञान, असामान्य व्यवहारों एवं मानसिक विकृतियों का वैज्ञानिक अध्ययन-व्यवहारों के तरीकों का वर्णन और उन्हें बदलाव के तरीकों की व्याख्या एवं बदलाव आने की संभावनाओं की भविष्यवाणी करती है। परंतु नैदानिक मनोविज्ञान एक पेशेवर एवं शैक्षिक शाखा है, जो मानसिक विकृतियों एवं असामान्य व्यवहारों के आंकलन एवं चिकित्सा के लिए वैज्ञानिक पद्धतियों का उपभोग करने की व्याख्या करता है।

Oltmanns, Martin, Neale and Davision (2012) के अनुसार - Abnromal Psychology is the scientific study of abnormal behaviour and mental disorder, whereas clinical Psychology is the professional and academic discipline that is concerned with the application of psychological science to the assessment and treatment of the mental disorder.

इस तरह असामान्य मनोविज्ञान मानसिक विकृति के वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुसंधान पर जोर देता है। इन अनुसंधानों में मुख्य रूप से असामान्य व्यवहारों के कारणों का पता लगाने से हैं। जबकि नैदानिक मनोविज्ञान का उद्देश्य है, उन व्यवहारों का आंकलन करके उनके चिकित्सा की रूपरेखा तैयार करना एवं चिकित्सा प्रविधियों का उपभोग करके व्यवहारों में परिवर्तन करना होता है।

Trull and Prinstein (1913) के अनुसार - ''For the year prior to 1890, there is very little in the history of clinical psychology to separate it from the history of abnormal psychology .''

1.7 सारांश

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक व्यवहारिक शाखा है, जो विभिन्न वैज्ञानिक पद्धतियों पर आधारित मनोचिकित्सा प्रविधियों का उपभोग करता है। नैदानिक मनोविज्ञान की विभिन्न परिभाषाएं दी गई। नैदानिक मनोविज्ञान के प्रत्यय को सबसे पहले lightner witmer ने 1907 ई. में किया था। इसी कारण से witmer को नैदानिक मनोविज्ञान का जनक कहा जाता है।

विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण करने से नैदानिक, मनोवैज्ञानिक का स्वरूप स्पष्ट होता है, कि नैदानिक मनोविज्ञान विभिन्न मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप के द्वारा व्यक्ति की अवस्था को समझने का प्रयास करता है। इन अवस्थाओं को समझने के लिए व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा आंकलन करना एवं आंकलन के परिणाम के आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं कार्य-प्रणाली में बदलाव लाना तथा विभिन्न मनोचिकित्सा प्रविधियों द्वारा व्यक्ति के व्यवहार को संतुलित तथा वातावरण के अनुकूल बनाने में सहायता करता है।

नैदानिक मनोविज्ञान के विकास का इतिहास 1896 ई. के करीब शुरू होता है और 1907 में नैदानिक मनोविज्ञान को मनोविज्ञान के एक शाखा के रूप में पहचान दी गई। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान मनोविज्ञान की इस व्यवहारिक शाखा का काफी विकास हुआ और विकास की कई सीढीयों को पार करता हुआ द्वितीय विश्व युद्ध की सेवाओं को सेना की मानसिक स्वास्थ्य इकाई में एक महत्वपूर्ण पेशेवर के रूप में लिया गया। 20वीं सदी के 70 के दशक के आते आते यह पूर्ण रूप से मान्यता प्राप्त पेशे के रूप में विकसित हो गया।

नैदानिक मनोवैज्ञानिक के मुख्य कार्यों में मानसिक विकृति एवं व्यवहार समस्याओं का आंकलन एवं मूल्यांकन, मनोचिकित्सीय कार्य, अनुसंधान कार्य एवं प्रशासनिक तथा सलाह संबंधीकार्य मुख्य है।

नैदानिक मनोविज्ञान से मिलते जुलते कई संबंधितक्षेत्र है, जिसके कारण नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्यों को विभेद करना मुश्किल है। इन क्षेत्रों में प्रमुख है। परामर्श मनोविज्ञान, स्कूल मनोविज्ञान तथा मनोचिकित्सा इत्यादि।

अंत में असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अंतर स्पष्ट करते हुए कह सकते हैं कि असामान्य मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक सैद्धांतिक शाखा है, जिसके द्वारा विभिन्न मानसिक समस्याओं एवं लक्षणों का अध्ययन करते हैं। व्यवहारिक शाखा है, जो मनोवैज्ञानिक आंकलन, परीक्षण एवं विभिन्न मनोचिकित्सा प्रविधियों का उपयोग मानसिक विकृतियों एवं व्यवहार समस्याओं को दूर करने में करता है।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

स्वयं अभ्यास एवं जाँच 1

1. i) (a) -
   ii) Lightmer Witmer
   iii) 1907
   iv) 1896

स्वयं अभ्यास एवं जाँच 2

(a) गलत

(b) सही

(c) सही

(d) .....

(f) 25%

स्वयं अभ्यास एवं जाँच 3

(a) गलत

(b) सही

(c) सही

(d) सही

(f) सही

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. नैदानिक मनोविज्ञान की परिभाषा दे, एवं उसके स्वरूप एवं क्षेत्र का वर्णन करें।
2. नैदानिक मनोविज्ञान के विकास का इतिहास का संक्षिप्त में वर्णन करें।
3. नैदानिक मनोविज्ञान एवं इसके संबंधितक्षेत्र का तुलनात्मक व्याख्या करें।
4. असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अंतर स्पष्ट करें।
5. नैदानिक मनोवैज्ञानिक के कार्यों का वर्णन करें।

1.10 संदर्भ सूची

- Collins English Dictionary - Complete and unabridged (2012) Digital Edition Harper Collins Publisher.
- Random House Disctionary (2015), Random House Inc. American Psychological Association (1968) Psychology as a Profession, American Psychologists 23, 195.200.
- Campas, Bruce and Gotlib, lan (2002), Introduction to clinical psychology, New York, NY. McGraw Hill.
- Witmer L (1907) Clinical Psychology. The Psychological Clinic 1, 1-9, Reprint American Pschologist, Vol 51 (3) March 1996, 248-251.
- Watson J.B. Behaviourism, New York Norton, 1924.
- Watson R.I. (1953), A brief history of clinical Psychology Psychological Bulletin.
- American Psychological Association (1947) - Committee on training in clinical psychology. Recommended graduate training programme in Clinical Psychology Amercian Psychologist - 529-558.
- John C Norcross, Christie P Karpiak and Shannon O.
- Santoro (2005) Clinical Psychologist across the years, The division of clinical psychology from 1960 to 2003, Volume 61, Issue 12.
- Vredonburgh, Carloggiz & Stein (1999) - Burnout in counselling psychologist, type of practice, setting and pertinent deneorgaphis - counselling pschologist - Quarterly - 12, 293-302.
- Zook and Walton (1989) - Theoritical orientation and work selting of clinical and counselling psychologist: A curroat perspective.
- Professional Psychology, Research and Practice, Vol. 20, issues
- Ruth. Roemer, Kurpin Carmin (1998) Introduction to Clinical Psychology, Publish in 2007 by Dorling, Kindersley (India) Pvt. Ltd.
- Oltmanns T.F. Martin, M.T. Neale, J.M. & Davison G.C. (2012) - Case Studies in Abnormal Psychology (9th ed.) Hoboken N.J. John Wiley & Sons.
- Trull T. J. & Prinstein M.J. (2013) - Clinical Psychology (8th ed.) Belmont CA Wadsworth.

- Jeffrey E. Hecker, Geoffrey L. Thorpe (2012) - Introduction to Clinical Psychology, Science, Practice and Ethics, Dorling Kinderley (India) Pvt. Ltd.
- Sheldon J.Korehin (2004), Modern Clinical Psychologyh.
- CBS Publishers and Distributors Pvt. Ltd.

इकाई - 2

पेशेवर प्रशिक्षण, विनियमन एवं आचार संहिता

Professional Training, Regulation and Ethics

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 पेशेवर प्रशिक्षण

- 2.31 पूर्व स्नातकीय एवं स्नातकीय प्रशिक्षण
- 2.3.2 स्नातकोत्तर प्रशिक्षण
- 2.3.3 डॉक्टरल प्रशिक्षण
- 2.3.4 नैदानिक मनोविज्ञान प्रशिक्षण की नई दिशाएं

2.4 पेशेवर विनियमन एवं पेशेवर आचार संहिता

- 2.4.1 पेशेवर मापदंड प्रबन्धन
- 2.4.2 आचार संहिता मापदंड

2.5 सारांश

2.6 स्व-अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.8 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या का जन्म और उसके रोकथाम एवं समाधान दिशा में जो बदलाव आ रहे हैं, उसे ध्यान में रखते हुये यह निर्णय करना कठिन है कि इस क्षेत्र में पेशेवर मनोवैज्ञानिक की भूमिका कहाँ तक तय कि जाएँ। एक तरफ तो वह व्यक्ति है, जो विभिन्न प्रकार के मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या से ग्रस्त है, और वह इससे आराम चाहता है, तो वही दूसरी तरफ उसका व्यवहार दूसरों के लिए काफी कष्टदायी है, इसलिए अन्य सारे व्यक्ति उसके आराम और समस्या समाधान के लिए पेशेवर व्यक्तियों की सहायता चाहते हैं।

परम्परागत तौर पर वैसे व्यक्ति को, जो किसी प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक समस्या से ग्रस्त है, चिकित्सा शास्त्र के अनुसार ''पेशेंट'' कहते हैं। परन्तु यदि चिकित्सीय शब्द का उपयोग न करना चाहे तो वैसे समस्या ग्रस्त व्यक्ति को ''Client'' कहते हैं। दूसरी तरह ''Clinician'' शब्द का उपयोग वैसे व्यक्ति को इंगित करता है, जो एक क्रमबद्ध रूप से हस्तक्षेप करके व्यक्ति को समस्या से

निजात दिलाने की कोशिश करता है। ऐसे ही क्रमबद्ध हस्तक्षेप का कार्य नैदानिक मनोवैज्ञानिक विभिन्न मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व एवं व्यवहार समस्याओं को दूर करने में करते हैं।

नैदानिक मनोविज्ञान, जैसा की हम प्रथम इकाई में अध्ययन कर चुके हैं मनोविज्ञान की सबसे बड़ी शाखा है जिसका अध्ययन कर नैदानिक मनोवैज्ञानिक पेशेवर रूप से व्यक्तित्व को मनोवैज्ञानिक सहायता पहुँचाते हैं। अब सवाल यह पैदा होता है, कि ये नैदानिक मनोवैज्ञानिक तैयार कैसे होते हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिक को प्रशिक्षण देने के कितने स्तर होते हैं और नैदानिक मनोवैज्ञानिक से जुड़े विभिन्न नैतिक मूल्य क्या है, जिसका पालन करना किसी भी नैदानिक मनोवैज्ञानिक के लिए आवश्यक है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- नैदानिक मनोवैज्ञानिक के विभिन्न प्रशिक्षण के स्तरों का वर्णन करने योग्य होंगे।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक के विभिन्न प्रशिक्षणों से सम्बन्धित विनियमों (regulation) की व्याख्या करने योग्य होंगे।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक के पेशागत नैतिक मूल्यों एवं आचार संहिता की चर्चा करने योग्य होंगे।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक के पेशागत समस्याओं की चर्चा करने योग्य होंगे।

2.3 पेशेवर प्रशिक्षण

पेशेवर प्रशिक्षण का तात्पर्य वैसे प्रशिक्षण से है, जो व्यक्ति को क्रमबद्ध तरीके से हस्तक्षेप करने के योग्य बनाता है। यानि ''नैदानिक मनोवैज्ञानिक'' एक पेशेवर प्रशिक्षण का ही परिणाम होता है। अर्थात् जो व्यक्ति सैद्धान्तिक रूप से मनोविज्ञान के सिद्धान्तों एवं विधियों की जानकारी रखता है उसे मनोवैज्ञानिक, व्यवहारिक एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी समस्याओं में क्रमबद्ध रूप से हस्तक्षेप करने के व्यवहारिक तरीकों का वैज्ञानिक प्रशिक्षण देकर एक निपुण पेशेवर के रूप में व्यवस्थित करना ही पेशेवर प्रशिक्षण है।

नैदानिक मनोविज्ञान की पेशेवर प्रशिक्षण कई स्तरों का होता हे, जिनकी चर्चा एवं उल्लेख आगे आने वाले अनुच्छेद में मिलेगा।

2.3.1 स्नातकीय प्रशिक्षण

नैदानिक मनोविज्ञान में प्रशिक्षण स्नातक स्तर पर शुरू होता है लेकिन स्नातक स्तर प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने के लिए व्यक्ति को स्नातक स्तर की सैद्धांतिक शिक्षा होना आवश्यक है। मनोविज्ञान में पूर्व स्नातक स्तर की शिक्षा, नैदानिक मनोविज्ञान में विशेष प्रशिक्षण के लिए अच्छी मानी जाती है। इसके लिए मनोविज्ञान के आधारभूत पाठ्य क्षेत्र जैसे-व्यवहार का जैविक आधार, अधिगम, ज्ञान, प्रत्यक्षीकरण एवं विकासात्मक मनोविज्ञान आदि विशेष प्रशिक्षण के लिए एक ठोस आधार प्रदान करते हैं।

स्नातक स्तर के प्रशिक्षण में नामांकन के लिए निम्न बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। क्योंकि ज्यादातर विश्वविद्यालय या संस्थान, जहाँ नैदानिक मनोविज्ञान में स्नातक स्तर प्रशिक्षण कार्यक्रम का संचालन किया जाता है, सारे इच्छुक व्यक्तियों को एक प्रतिभागी वातावरण का सामना करना पड़ता है। इस प्रतियोगिता के अन्तर्गत प्रशिक्षाणार्थियों का चयन संस्थान के प्रबन्धन के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। अत: प्रशिक्षण के लिए योग्य उम्मीदवारों का चयन करने के लिए ये पाँच कारक काफी महत्वपूर्ण है,

1) औसतन उच्च श्रेणी प्राप्तांक (High Grade Point Average)
2) ग्रेजुएट रिकॉर्ड परीक्षा में अच्छा प्राप्तांक (Good Score on GRE)
3) अनुसंधान का अनुभव (Research experience)
4) उचित्त नैदानिक अनुभव (Relevant clinical experience)
5) अनुशंसा पत्र

उपरोक्त पृष्टभूमि के आधार पर स्नातक स्तर प्रशिक्षण कार्यक्रम में नामांकन मिलने की संभावना प्रबल रहती है।

ज्यादातर स्नातक स्तर कार्यक्रम के लिए मनोविज्ञान के आधारभूत पाठ्यक्रम की जरूरत होती है।

ये आधारभूत पाठ्यक्रम जो स्नातक स्तर प्रशिक्षण कार्यक्रम में सम्मिलित किये जाते हैं, वे है, व्यवहार का जैविक आधार, व्यवहार का ज्ञानात्मक एवं भावात्मक आधार, व्यवहार का सामाजिक एवं व्यक्तिगत आधार (Belar and Perry, 1991) अब इन आधारभूत विषयों को प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान किस प्रकार पढ़ाते हैं, ये वहाँ पढ़ाने वाले संकाय सदस्यों के योग्यता, लगन एवं सूची पर निर्भर करता है। विभिन्न पाठ्यक्रमों की पाठ्य सामग्री उपरोक्त वर्चित आधारभूत पाठ्य क्षेत्रों पर निर्भर करता है, जैसे व्यवहार का जैविक आधार सम्बन्धी पाठ्यक्रम को पूरा करने के लिए स्नायु मनोविज्ञान, स्नायु संरचना (neurology) एवं शरीर संरचना, तथा व्यवहार पर अंतस्रावी नलिकाओं के कार्यों का प्रभाव इत्यादि। इसी प्रकार से मनोविकृति व्यक्तित्व सिद्धान्त एवं बाल विकास इत्यादि भी व्यक्तिगत भिन्नता के अध्ययन एवं समझ का विकास करने के लिए काफी महत्वपूर्ण है।

स्नातक स्तर प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए पाठ्य कार्य (Course work) एवं नैदानिक मनोविज्ञान में अनुभव प्रशिक्षण केन्द्र में होते हैं फिर भी मनोवैज्ञानिक आंकलन, मनोचिकित्सा एवं मनोविकृति इत्यादि मुख्य नैदानिक पाठ्यक्रम पाठ्य कार्य क्षेत्र में सम्महित रहते हैं।

स्नातक प्रशिक्षण के दौरान स्नातक छात्रों के लिए नैदानिक प्रशिक्षण क्लास रूम (Classroom) से बाहर ही होता है। नैदानिक प्रशिक्षण कार्यक्रम व्याहारिक प्रशिक्षण, प्रशिक्षण के दूसरे वर्ष के दौरान होता है। प्रशिक्षणार्थियों को वास्तविक रूप से क्लाईन्ट (Client) के साथ किसी लाइंसेस प्राप्त मनोवैज्ञानिक के देख रेख में करना पड़ता है। Hecker, Fink, he Vasseur and Parkor (1995) के अनुसार ''Practicum training may occur in a training clinic affiliated with the graduate programme, or it may take place in the field. Students offer obtain 1000 or more hours of practicum training prior to internship''.

2.2.3 स्नातकोत्तर प्रशिक्षण (Post Graduate Training)

नैदानिक मनोविज्ञान के ज्यादातर व्यवहारिक पहलुओं का प्रशिक्षण छात्रों के स्नातक कार्यक्रम से निकलने और डाक्टरेट उपाधि प्राप्त करने के पहले तक जारी रहता है। कई देशों में स्नातक स्तर पर केवल मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अध्ययन करते हैं और स्नातकोत्तर स्तर पर नैदानिक मनोविज्ञान का सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक अध्ययन किया जाता है, तथा उसमें विशेषज्ञता प्राप्त की जाती है।

स्नातकोत्तर स्तर के प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान नैदानिक मनोविज्ञान में अनुसंधान का भी विशेष महत्व है। इस दौरान छात्रों को अनुसंधान संरचना (Research Design) एवं सांख्यकीय विश्लेषण की विशेष आवश्यकता होती है। इसी कारण से अनुसंधान प्रक्रिया प्रशिक्षण के लिए भी नैदानिक क्रिया प्रशिक्षण की तरह विभिन्न प्रकार के हस्तक्रिया प्रशिक्षण दिये जाते हैं। इस प्रशिक्षण के दौरान छात्र विभिन्न सम्मेलनों, संगोष्ठी इत्यादि में शोध पत्र प्रस्तुत करते हैं, ये शोध पत्र किसी अन्य लेखक के साथ हो सकते हैं, खुद छात्र का भी हो सकता है। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षार्थी अपने शोध कार्य का प्रकाशन कराते हैं पुस्तक में पाठ लिखने के साथ साथ अन्य विद्धत कार्य भी करते हैं। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अनुसंधान सम्बन्धी प्रशिक्षण में अनुसंधान पर्यवेक्षक के महत्व की चर्चा की है। Blount, Frank, and Smith (1993) के अनुसार ''The relationship between student and his or her research advisor can be one of the most important associations in the professional development of a clinical psychologist particularly for those interested in career and emphasize research''.

2.3.3 डॉक्टरल प्रशिक्षण (Doctoral Training)

डॉक्टरल प्रशिक्षण कार्यक्रम में शामिल होने के लिए छात्रों को पात्रता (Qualifying) परीक्षा उत्तीर्ण करनी पड़ती है। इस परीक्षा के द्वारा केवल छात्र के ज्ञान का मूल्यांकन ही नहीं किया जाता है, बल्कि यह भी देखा जाता है कि छात्र के पास उसके अपने विचारों को पेश करने का तरीका कैसा है।

डॉक्टरल प्रशिक्षण के दौरान शोध कार्य का विशेष महत्व है। शोधकार्य विश्वविद्यालय स्तर पर किया जाता है और किसी वरिष्ठ शोध पर्यवेक्षक के पर्यवेक्षण में शोध प्रबन्ध तैयार किया जाता है। इस शोध कार्य में व्यवहारिक एवं वास्तविक परिस्थिति में व्यक्ति एवं उससे सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन एवं विश्लेषण कर शोध प्रबन्ध तैयार करते हैं। डॉक्टरल प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान किया गया नैदानिक कार्य नैदानिक मनोवैज्ञानिक के नैदानिक अनुभव की दिशा से महत्वपूर्ण योगदान करता हैं।

2.3.4 भारत में नैदानिक मनोविज्ञान का प्रशिक्षण

हमारे देश में मनोविज्ञान की पढ़ाई +2 यानि 10^{th} पास करने के बाद शुरू होती है। उच्च माध्यमिक शिक्षा के दौरान मनोविज्ञान की पढ़ाई शुरू होती है। स्नातक स्तर तक सामान्य मनोविज्ञान की सैद्धान्तिक पढ़ाई करनी पड़ती है, साथ ही मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों जैसे अधिगम, प्रेरणा, संवेग, प्रत्यक्षीकरण, संवेदना, इत्यादि से सम्बन्धित सिद्धान्तों का व्यवहारिक ज्ञान विभिन्न प्रयोगात्मक शिक्षण के द्वारा की जाती है।

स्नातकोत्तर शिक्षा के अंतर्गत मनोविज्ञान के विभिन्न शाखाओं में विशेषज्ञता प्राप्त करते हैं, और इसके उपरांत एम.फिल एवं पीएच.डी. के दौरान नैदानिक मनोविज्ञान के व्यवहारिक पहलु का समुचित्त प्रशिक्षण प्राप्त किया जाता है। वर्तमान में कई विश्वविद्यालय एवं संस्थान है, जो नैदानिक

मनोविज्ञान में प्रशिक्षण कार्यक्रम का संचालन करते हैं। इनमें मुख्य है, केन्द्रीय मन:चिकित्सा संस्थान, रांची, राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य एवं तंत्रिका विज्ञान संस्थान, बंगलौर। इसके अतिरिक्त बहुत सारे विश्वविद्यालय में नैदानिक मनोविज्ञान में डॉक्टरल डिग्री कार्यक्रम की व्यवस्था है।

2.3.5 नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण की नयी दिशाएं

नैदानिक मनोविज्ञान में प्रशिक्षण के लिए वैज्ञानिक व्यवसायी प्रतिमान (Scientist professional model) को अमेरीकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन (APA) के सभी सम्मेलनों में अनुमोदित किया गया। परन्तु 1973 में APA के सम्मेलन में ''व्यवसायी प्रतिमान (Professional model) को एक अच्छे विकल्प के रूप में चर्चा की गई, जिसमें इस प्रतिमान को पीएच.डी. प्रशिक्षण कार्यक्रम के विकल्प के रूप में देखा गया।

इसी विकल्प को ध्यान में रखते हुये University of illinois ने पीएच.डी. प्रशिक्षण के अलावा Doctor of Psychology (Psy.D) को लागू किया। इसमें वैसे विद्यार्थी जो नैदानिक मनोवैज्ञानिक बनकर व्यवसाय के रूप में अपनाने में ज्यादा रूचि रखते थे शामिल किया जाता था। Peterson (1969) के अनुसार ''Graduate of Psy. D. Programme have moved into good clinical positions and are apparently satisfied with their education.''

Ph.D. प्रशिक्षण कार्यक्रम के विकल्प के रूप में व्यवसायी विद्यापीठ, जो पूरी तरह से मनोवैज्ञानिक सेवा प्रशिक्षण से जुड़ा हुआ है, की महत्व को देखते हुये Adelpic University ने 1973 ई. में और Rutgers University ने 1974 ई. में ऐसे विद्यापीठों की स्थापना की और Psy. D कार्यक्रम का संचालन किया जाने लगा। ऐसे संस्थान और विद्यापीठ पूरी तरह से व्यवसायी मनोवैज्ञानिक तैयार करने के लिए तथा सारे प्रशिक्षण, पूरी तरह से व्यवसायी मनोवैज्ञानिक द्वारा की जानी वाली सेवाओं से मुक्त थे।

इसके बावजूद मानसिक स्वास्थ्य सेवा के लिए नये व्यवसायी की आवश्यकता महसूस हुई, जो न तो नैदानिक मनोवैज्ञानिक हो, न ही मनोचिकित्सक हो और न ही मनोचिकित्सा समाज सेवक ही हो, बल्कि वो व्यवसायी इन सभी का मिश्रण हो, जो विशेष रूप से नैदानिक सेवा के लिए आवश्यक समझे जाने वाले ज्ञान, कौशल और मनोवृत्ति से युक्त हो। इस प्रकार के प्रथम प्रशिक्षण कार्यक्रम University of California के San francisco एवं Berkeley कैम्पस में मनोचिकित्सा विभाग Mount Zion Hospital Sanfransisco के सहयोग से शुरू किया गया। (Abroms G.M. & Green Field, 1973)

स्व अभ्यास एवं जांच प्रश्न -

(i) नैदानिक मनोवैज्ञानिक का प्रशिक्षण ..... स्तर से शुरू होता है।

(ii) नैदानिक मनोविज्ञान में प्रशिक्षण के लिए मुख्य पांच योग्यताएं के नाम लिखें।

.....

.....

.....

(iii) परम्परागत तौर पर ''पेशेंट '' (Patient) किसे कहते हैं, लिखें।

.....

.....

.....

(iv) Clinician शब्द किस तरह के व्यवसायी अथवा व्यक्ति को इंगित करता है, लिखे।

.....

.....

.....

(v) पेशेवर प्रशिक्षण का तात्पर्य लिखें।

.....

.....

.....

(vi) नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण में अनुसंधान का महत्व है। सही/गलत

(vii) नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण के दौरान वास्तविक व्यवहारिक प्रशिक्षण दूसरे प्रशिक्षण वर्ष के दौरान होती है। सही/गलत

(viii) नैदानिक मनोविज्ञान प्रशिक्षण के लिए उम्मीदवारों का चयन प्रतियोगी परीक्षा के द्वारा की जाती है। सही/गलत

(ix) Psy.D कार्यक्रम को Ph. D स्तर के प्रशिक्षण को विकल्प के रूप में अपनाया गया। सही/गलत

(x) व्यवसायी विद्यापीठ की स्थापना सबसे पहले Adephi विश्वविद्यालय में 1973 ई. में हुई। सही/गलत

2.4 पेशागत विनियमन एवं आचार संहिता

किसी भी व्यवसाय के सफल संचालन के लिए कुछ विनियमन एवं आचार संहिता का होना अनिवार्य है। अमेरिका एवं अन्य विकसित राष्ट्र में नैदानिक मनोवैज्ञानिक एवं अन्य मानसिक स्वास्थ्य व्यवसायी के लिए लाइसेन्सिंग व्यवस्था है यानि वे अपना प्रशिक्षण पूरा करने के बाद एक व्यवसायी के रूप में अपने आप को स्थापित करने के लिए सरकार द्वारा प्रदान किये जाने वाले ''लाइसेंस'' को प्राप्त करने की पात्रता की शर्तों को पूरा करते हैं।

पेशागत विनियमन एवं आचार संहिता के अन्तर्गत मनोवैज्ञानिक के उन क्रिया कलापों को शामिल किया जाता है, जो उनके वैज्ञानिक, शैक्षिक एवं व्यवसायिक भूमिका को दर्शाता है। उनके क्रिया कलापों के मुख्य क्षेत्र है, नैदानिक परामर्श मनोवैज्ञानिक का विद्यालय में सेवा देना, सामाजिक हस्तक्षेप, आंकलन के लिए निर्देश का विकास करना, आंकलन करना इत्यादि।

वैसे तो APA के द्वारा समय समय पर आचार संहिता का प्रकाशन किया गया है ऐसे आचार संहिताओं का प्रकाशन APA के द्वारा '' Ethical standard of Psychologist'' के नाम से Professional Psychologist Journal में 1953, 1959, 1963, 1968, 1977, 1979, 1981, 1990 एवं 1992 में किया गया। परन्तु नीचे दिये जा रहे आचार संहिता एवं नैतिक सिद्धान्त American Psychological Association के द्वारा 2002 में ग्रहण किया गया, और June 2003 में लागू किया गया।

APA द्वारा 2003 में अपनाये गये नैतिक सिद्धान्त एवं आचार संहिता की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं।

सामान्य सिद्धान्त (General Principles) इसके अंतर्गत निम्नलिखित सिद्धान्त आते हैं।

A. उपकारशीलता एवं हानि रहित सेवा (Beneficeace and Nonmaleficeace)

मनोवैज्ञानिक अपने व्यवसायी क्रिया के द्वारा उस व्यक्ति के जिसके साथ वे व्यवसायिक रूप से जुड़े हैं, उनके कल्याण के पूरी तरह से सुरक्षित रखने में मदद करते हैं, और हमेशा ये प्रयास किया जाता है कि जुड़े हुये व्यक्ति के लाभ पहुंचाने सम्बन्धित क्रिया कलापों से कोई समझौता नहीं किया जाएँ, और व्यक्ति को किसी प्रकार से हानि न हो।

B. निष्ठा एवं उत्तरदायित्व (Fidelity and Responsibility)

मनोवैज्ञानिक निष्ठा के साथ व्यवसायिक कार्य का सम्पादन करते हैं और समाज, समुदाय जहां वे कार्य कर रहे हैं और उस व्यक्ति के प्रति जिसके साथ कार्य कर रहे हैं, पूरी निष्ठा के साथ अपनी भूमिका एवं उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर व्यक्ति (Client) को उचित्त परामर्श देकर उचित्त व्यवसायिक जगह पर भेजना, अन्य व्यवसायिकों से सलाह करना, एवं उस व्यक्ति को लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से सारे व्यवसायिक सहायता पहुंचाना भी मनोवैज्ञानिक के कार्य विनियमन में शामिल हैं

C. अखण्डता (Integrity)

मनोवैज्ञानिकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने व्यवसायी जीवन में ईमानदारी, सच्चाई, शुद्धता को बढ़ावा दे यानि मनोवैज्ञानिकों से किसी भी प्रकार की बेइमानी, ठगी इत्यादि का अपेक्षा नहीं की जाती है। कभी कभी ऐसी स्थिति आती है कि मनोवैज्ञानिक को Client के हित को ध्यान में रखते हुये कुछ धोखेबाजी भी करनी पड़ सकती है, जिसके कारण व्यक्ति को ज्यादा से ज्यादा लाभ पहुंचेगा और हानि होने की संभावना को कम किया जा सकता है, ऐसी स्थिति में मनोवैज्ञानिक को इससे उत्पन्न होने वाले सम्भावित परिमाणों पर गौर करते हुये निर्णय लेनी चाहिए साथ ही उत्पन्न परिणाम से हानि हो की स्थिति में क्या उत्तरदायित्व का निर्वाह करना है, इसकी भी समुचित्त योजना पहले से सुनिश्चित करनी होती है।

D. न्याय (Justice)

मनोवैज्ञानिकों को इसकी भलीभांति समझ होनी चाहिए कि सभी व्यक्तियों को मनोवैज्ञानिक सेवा प्रदत्त किये जाने वाली प्रक्रियाएँ एक समान तथा न्यायसंगत होनी चाहिए।

E. लोगों के अधिकार एवं गरिमा का सम्मान करना (Respect for People's Rigths and Dignity)

मनोवैज्ञानिक, लोगों की निजता, गोपनीयता एवं स्व निर्धारण क्षमता के अधिकार का सम्मान करता है। इसके अलावा मनोवैज्ञानिक व्यक्ति, संस्कृति तथा उम्र, लिंग, लिंग पहचान, प्रजाति,जातीयता, राष्ट्रीयता, लैगिंक अभिमुखीकरण विकलांगता, भाषा एवं सामाजिक आर्थिक दशा आदि का सम्मान करते हुये सभी के अधिकारों एवं मर्यादाओं का सम्मान कर, सभी के साथ समान रूप से कार्य एवं व्यवहार करते हैं।

2.4.1 पेशागत मापदण्ड प्रबंधन (Maintaining Professional Standard)

एक उत्तरदायी व्यवसाय के लिए व्यवसायिकों के ज्ञान, कौशल एवं अखण्डता के परखने के लिए व्यवसायिक मापदण्ड का होना आवश्यक है। इसके लिए कोई न कोई संगठन कार्य करता है, जो व्यवसायी को सम्बन्धित क्षेत्र में सेवा प्रदान करने के लिए अधिकृत करता है।

समिति द्वारा प्रमाणीकरण (Board Certification)

अमेरिका में व्यवसायिक मनोवैज्ञानिकों को व्यवसायिक दक्षता का प्रमाण पत्र अमेरिकन बोर्ड ऑफ प्रोफेसनल साईंकोलॉजी (ABPP) द्वारा प्रदान की जाती है। 1968 तक इसे American Board of Examiners in Professional Psychology कहा जाता था। ABPP द्वारा क्रमश: चार क्षेत्रों, नैदानिक मनोविज्ञान, परामर्श मनोविज्ञान, औद्योगिक एवं संगठनात्मक मनोविज्ञान एवं स्कूल मनोविज्ञान में प्रमाण पत्र प्रदान किये जाते हैं।

राज्य द्वारा प्रमाणीकरण एवं लाईसेंस देना (State Certification and Licensure)

व्यवसायिक मापदंड को स्थापित करने का दूसरा तरीका जो खासकर अमेरिका एवं अन्य देशों में अपनाया जाता है, वह है राज्य के द्वारा संवैधानिक प्रक्रिया को अपनाकर प्रमाण पत्र का लाइंसेस प्रदान करना। इस प्रमाण पत्र या लाइसेंस के आधार पर मनोवैज्ञानिक अपने को व्यवसायिक मनोवैज्ञानिक के तौर पर स्थापित कर सकते हैं।

व्यावसायिक मान्यता प्रदान करने के लिए सामान्यत: दो प्रकार के विद्यायी विनियमन है, एक है प्रमाण पत्र प्रदान करना, तथा दूसरा है लाइसेंस प्रदान करना। प्रमाण पत्र नियम यह सुनिश्चित करता है कि ''केवल वे ही व्यवसायी मनोवैज्ञानिक'' का प्रमाणित मनोवैज्ञानिक हो सकते हैं, जो एक निश्चित मानदंड को पूरा करते हैं।

इसके विपरीत लाईसेंस व्यवसाय को व्यवसायी के कार्य एवं उसके द्वारा ग्रहित गुणात्मक योग्यता के आधार पर परिभाषित करता है। यानि जिस व्यवसायी को लाइंसेस नहीं दिया गया है, वे अपने को व्यवसायी की श्रेणी में नहीं रख सकते हैं।

भारत में मनोवैज्ञानिकों के लिए कोई लाईसेंस की व्यवस्था नहीं है, फिर भी विभिन्न मनोवैज्ञानिक व्यवसायिक संगठन द्वारा सदस्यता दिये जाते हैं, जिससे खासकर नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपनी अलग पहचान बनाने में सफल हो पाते हैं। परन्तु 1992 ई. में भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम (RCI Act 1992) के पारित होने के बाद नैदानिक मनोवैज्ञानिक का निबंधन पुनर्वास व्यवसायी के रूप में किया जाने लगा। भारतीय पूर्नवास परिषद ऐसे निबन्धित मनोवैज्ञानिकों की सूची भी समय

समय पर लोगों की जानकारी के लिए जारी करता है, जिससे लोग गुणवत्तापूर्ण मनोवैज्ञानिकों की सेवा का लाभ ले सके।

2.4.2 आचार संहिता मापदंड (Ethical Standard)

मनोवैज्ञानिक पेशा को आत्मसात करने के लिए अथवा मनोवैज्ञानिक के रूप में समाज को अपनी सेवा देने के लिए कुछ नैतिक मूल्यों का पालन करना आवश्यक है। जिसका पालन करके एक सफल मनोवैज्ञानिक की भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में APA द्वारा दस मुख्य मानक तय किये गये हैं, जिसका पालन करना सभी पेशेवर मनोवैज्ञानिकों के लिए आवश्यक है। वे नैतिक मानक इस प्रकार है।

(1) नैतिक मुद्दों का समाधान करना (Resolving ethical issues)

मनोवैज्ञानिक सेवा प्रदान करने के लिए आचार संहिता के अन्तर्गत अपने कार्य को दुरूपयोग करने की इजाजत नहीं है। यदि किसी स्तर पर मनोवैज्ञानिक का किसी भी कानून, विनियमन तथा अन्य विधिक अभिकर्ताओं के साथ संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है, तो मनोवैज्ञानिक को अपने नैतिक आचार संहिता के अन्दर रहकर ही उस संघर्षपूर्ण स्थिति का समाधान करना चाहिए। इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक का उसके संगठन और नैतिक आचार संहिता के साथ कोई मतभेद या संघर्ष होता है तो मनोवैज्ञानिक को आचार संहिता के अन्तर्गत अपनी दृढ़ता प्रदर्शित करनी चाहिए।

यदि किसी भी मनोवैज्ञानिक को दूसरे मनोवैज्ञानिक के द्वारा आचार संहिता उल्लंघन का पता चलता है, तो उस मनोवैज्ञानिक को यह बात दूसरे मनोवैज्ञानिक को ध्यान में लाकर उस मुद्दे का समाधान करने में मदद करनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त किसी भी मनोवैज्ञानिक को तब तक शिकायत दायर नहीं करनी चाहिए, जब तक की वह पूरी तरह से स्थापित नहीं हो जाए।

(2) दक्षता (Competence)

मनोवैज्ञानिक को मनोवैज्ञानिक सेवा, पठन-पाठन या अनुसंधान अपनी दक्षता के अनुरूप ही करनी चाहिए। आचार संहिता के अंतर्गत यह भी प्रावधान है कि यदि जरूरत पड़े जो अपनी दक्षता को पूर्ण करने के लिए अतिरिक्त प्रशिक्षण भी लेनी चाहिए। संक्षेप में कहा जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक को अपनी दक्षता की सीमा की पहचान होनी चाहिए।

मनोवैज्ञानिकों के लिए संकटकालीन अवस्था में सेवा प्रदान करना जरूरी है, चाहे वह उस प्रकार की सेवा देने में समर्थ नहीं हो या उसके पास उस सेवा से सम्बन्धित आवश्यक प्रशिक्षण न हो, फिर भी वह सेवा प्रदान करने से मना नहीं कर सकता। अत: प्रत्येक मनोवैज्ञानिक को अपनी दक्षता को निरन्तर बढ़ाने के लिए एवं उसे बरकरार रखने के लिए प्रयासरत रहनी चाहिए।

(3) मानव सम्बन्ध (Human Relation)

इस आचार संहिता के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक को अन्यायपूर्ण भेदभाव, लैगिंक उत्पीड़न अन्य प्रकार के उत्पीड़न नहीं करनी चाहिए। उन्हें अपने Client के साथ तथा समाज के साथ मानवीय स्तर पर कार्य करनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक को उस व्यक्ति के साथ, जिसे वह अपनी सेवाएं दे रहा है, अन्य प्रकार के सम्बन्ध एवं भूमिका का निर्वाह नहीं करनी चाहिए। मनोवैज्ञानिक को ऐसी कोई भी सम्बन्ध नहीं बनाने चाहिए, जिससे उसके पेशेवर उद्देश्य को प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न होने की सम्भावना हो। इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक को अपने अंतर्गत कार्य करने वाले सहकर्मियों जिसका वह अधिक्षण कर रहा है, तथा यदि वह किसी छात्र को पढ़ा रहा हो या किसी के अनुसंधान कार्य का निर्देशन कर रहा हो, तो उसे अपने अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को उत्पीड़ित नहीं होने देना चाहिए। यानि उत्पीड़न बचाना भी मनोवैज्ञानिक का कर्तव्य है।

(4) निजता एवं गोपनीयता (Privacy and Confidentiality)

मनोवैज्ञानिक का यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वह गोपनीय जानकारी को सुरक्षित रखने के लिए ज्यादा से ज्यादा सावधानी बरते। मनोवैज्ञानिक, जिस व्यक्ति को सेवा प्रदान करता है, तो उसे यह जानकारी देनी होती है, कि वह किस सीमा तक गोपनीयता को बनाए रख सकता है।

इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक किसी व्यक्ति को जिसको वह अपनी सेवा दे रहा है, यदि उसके आवाज या छवि का रिकार्ड (Record) करना चाहता है, तो उसे उस व्यक्ति से उचित्त मंजूरी लेना आवश्यक है।

यदि मनोवैज्ञानिक अपने सहकर्मी से कुछ चर्चा करना चाहता है, तो उसे सम्बन्धित जानकारी को इस प्रकार प्रस्तुत नहीं करनी चाहिए, जिससे उस व्यक्ति का पहचान सार्वजनिक हो जाए। यानि किसी भी स्तर पर चर्चा के दौरान किसी व्यक्ति से सम्बन्धित जानकारी का उल्लेख करना अनैतिक है।

(5) विज्ञापन एवं अन्य लोक वक्तव्य (Advertising and other Public Statement)

मनोवैज्ञानिक को झूठा और धोखापूर्ण वक्तव्य देने से परहेज करनी चाहिए। यानि की मनोवैज्ञानिक को अपनी दक्षता, अपना प्रशिक्षण एवं पढ़ाई अथवा अपनी अनुभव से सम्बन्धित झूठा वक्तव्य नहीं देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक को अपनी सेवा के बदले सेवा लेने वाले व्यक्ति से प्रशंसापत्र की भी मांग नहीं करनी चाहिए।

यदि मनोवैज्ञानिक किसी प्रिन्ट एवं इलेक्ट्रॉनिक मिडिया के माध्यम से सारी जनता को कोई सामूहिक समस्या से सम्बन्धी सलाह देता है, तो उसे यह सुनिश्चित करनी चाहिए, और सावधानी बरतनी चाहिए कि वह सलाह उसके पेशेवर ज्ञान प्रशिक्षण एवं अनुभव के अनुरूप हो।

(6) आलेख रखरखाव एवं शुल्क (Record Keeping and Fees)

मनोवैज्ञानिक अपने नियंत्रण वाले अभिलेख हेतु आलेख का अधिक से अधिक गोपनीयता बरतते हैं। यदि मनोवैज्ञानिक को सेवा लेने वालों व्यक्ति ने शुल्क नहीं दिया है और उसे उस

आलेख की किसी संकटकालीन परिस्थिति के कारण जरूरत है, तो वह केवल इस कारण से आलेख देने से मना नहीं कर सकता, क्योंकि उसने शुल्क नहीं जमा किया है।

जहाँ तक मनोवैज्ञानिक को अपनी सेवा शुल्क लेने का सम्बन्ध है, वह इसे केवल सरकार अथवा अन्य विनियमन अभिकरण द्वारा तय शुल्क ही ले सकता है।

यदि सेवा लेने वाला व्यक्ति किसी कारणवंश या अन्य अभिप्राय से मनोवैज्ञानिक को उसका सेवा शुल्क नहीं देता है, तो मनोवैज्ञानिक को यह अधिकार है कि वह उसे क्लेक्सन एजेंट के द्वारा वसूल कर सकता है, अथवा न्यायिक विधियों द्वारा भी वसूल कर सकता है।

(7) शिक्षा एवं प्रशिक्षण (Education and Training)

मनोवैज्ञानिक को किसी भी शिक्षा या प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए रूपरेखा तैयार करने में अपनी उचित ज्ञान एवं उचित अनुभव का उपयोग करना चाहिए। इसमें मनोवैज्ञानिक को पूरी तरह से प्रशिक्षण का उद्देश्य, प्रशिक्षण का विषय, इसके विभिन्न चरणों में संचालन इत्यादि का विस्तृत ब्यौरा देनी चाहिए। साथ ही उसे यह भी सुनिश्चित करनी चाहिए कि प्रशिक्षण में दी जाने वाली तथ्यों की सारी जानकारी सही एवं साक्ष्यों से युक्त हो।

(8) अनुसंधानएवं प्रकाशन (Research and Publication)

जब अनुसंधान कार्य के लिए संस्थागत अनुमोदन की आवश्यकता होती है, तो मनोवैज्ञानिक के लिए यह जरूरी होता है कि वह अनुसंधान के प्रस्ताव को संस्थागत अनुमोदन के लिए प्रस्तुत करे। साथ ही जब अनुसंधान कार्य का कार्यान्वयन करते हैं, तो अनुसंधान में शामिल होने वाले सहभागियों को इससे सम्बन्धित पूरी जानकारी देनी चाहिए, यानि अनुसंधान का उद्देश्य सम्भावित समय, प्रक्रिया इत्यादि के साथ प्रतिभागी के अधिकार के बारे में भी वह कैसे अपने को इस कार्य से अलग कर सकता है। इसके साथ ही प्रतिभागियों की जानकारी देकर उनकी रेकार्डिंग करने के लिए स्वीकारोक्ति होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त प्रतिभागियों को यह मौका भी दिया जाता है कि वह अनुसंधान से सम्बन्धित विभिन्न जानकारियों, (जैसे - स्वरूप, परिणाम एवं निष्कर्ष, इत्यादि) प्राप्त कर सकते हैं।

(9) आंकलन (Assessment)

व्यक्ति का आंकलन करने के लिए भी मनोवैज्ञानिक को सम्बन्धित व्यक्ति से स्वीकारोक्ति लेनी पड़ती है। आंकलन से सम्बन्धित द्वारा का विश्लेषण करने के लिए आंकलन का उद्देश्य के साथ-साथ परीक्षण के विभिन्न कारणों का ध्यान रखना पड़ता है। मनोवैज्ञानिक कभी भी आंकलन प्रक्रिया को करने के लिए अकुशल और अनाधिकृत व्यक्ति को बढ़ावा नहीं देते हैं। जो भी मनोवैज्ञानिक दूसरे मनोवैज्ञानिक के लिए आंकलन एवं स्कोरिंग सेवा प्रदान करते हैं वह उस परीक्षण के उद्देश्य, मानक, वैद्यता,विश्वसनीयता एवं प्रक्रिया का समुचित वर्णन करते हैं। इसके अलावा उस आंकलन परिणाम की व्याख्या करना एवं परीक्षण को सुरक्षा का भी समुचित ध्यान मनोवैज्ञानिक को रखना पड़ता है।

(10) मनोचिकित्सा (Therapy)

जब मनोवैज्ञानिक सम्बन्धित व्यक्ति को जानकारी देकर मनोचिकित्सा के लिए स्वीकारोक्ति लेता है, तो उसे चिकित्सा का स्वरूप एवं सम्भावित योजना के बारे में व्यक्ति को समुचित्त जानकारी देनी पड़ती है।

चिकित्सा के दौरान मनोवैज्ञानिक कभी भी लैंगिक रूप से किसी भी तरह से व्यक्ति से सम्बन्धित नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त पुराने Client के साथ भी लैंगिक सम्बन्ध नहीं बना सकता। यह पूरी तरह से अनैतिक है और आचार संहिता के अंतर्गत इसकी कोई जगह नहीं है, यानि पूरी तरह से प्रतिबंधित है।

स्व जांच एवं अभ्यास प्रश्न 2

(a) पेशागत आचार संहिता के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक के कौन कौन से क्रिया कलाप को शामिल किया जाता है?

.....

.....

.....

(b) ABPP का पूर्ण रूप लिखें।

.....

.....

.....

(c) व्यवसायिक मापदंड का होना क्यों आवश्यक हैं?

.....

.....

.....

(d) भारतीय पुर्नवास परिषद अधिनियम कब लागू हुआ?

.....

.....

.....

(e) मनोवैज्ञानिकों को अन्यायपूर्ण, भेदभाव नहीं करनी चाहिए?

.....

.....

.....

2.5 सारांश

नैदानिक मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक शाखा है, जिसका अध्ययन कर नैदानिक मनोवैज्ञानिक पेशेवर रूप से व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक सहायता पहुँचाते हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिक का काफी सुनियोजित प्रशिक्षण होता है। इस सुनियोजित प्रशिक्षण को पेशेवर प्रशिक्षण कहते हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिक इस पेशेवर प्रशिक्षण का ही परिणाम है।

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए विभिन्न स्तर के प्रशिक्षणों में स्नातक स्तर, स्नातकोत्तर स्तर एवं पीएच.डी. स्तर के प्रशिक्षण प्रमुख है। इन प्रशिक्षणों को प्राप्त करने के उपरांत नैदानिक मनोवैज्ञानिकों एक व्यवसायी के रूप में सेवा प्रदान करने के लिए प्रभावित किया जाता है। यह प्रमाणीकरण या तो बोर्ड द्वारा होता है या किसी राज्य स्तरीय प्रमाणीकरण अभिकरण द्वारा। भारत में नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का निबंधन भारतीय पुर्नवास परिषद द्वारा किया जाता है।

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के कार्य को दिशा निर्देश देने के लिए कुछ विनियमन (Regulations) एवं आचार संहिता तैयार किये गये हैं, जिसमें मुख्य विनियमन है, उपकार शीलता एवं हानि रहित सेवा, निष्ठा एवं उत्तरदायित्व, अखण्डता, न्याय, लोगों के अधिकार एवं गरिमा का सम्मान करना इत्यादि।

आचार संहिता मापदण्ड के अन्तर्गत नैतिक मूल्यों का समाधान करना, दक्षता, मानव सम्बन्ध, निजता एवं गोपनीयता विज्ञापन एवं अन्य लोक वक्तव्य, आलेख रखरखाव एवं शुल्क, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, अनुसंधान एवं प्रकाशन, आंकलन का मनोचिकित्सा मुख्य है। इन सभी बातों में मनोवैज्ञानिक को आचार सहित का ध्यान रखना पड़ता है।

2.6 स्व-अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. (i) स्नातक

   (ii) औसतन उच्च श्रेणी प्राप्तांक

   GRE में अच्छ प्राप्तांक

   अनुसंधान में अनुभव

   उचित्त नैदानिक अनुभव

   अनुंशसा पत्र

   (iii) वैसा व्यक्ति, जो किसी प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक समस्या से ग्रस्त है, चिकित्सा शास्त्र के अनुसार पेशेंट कहते हैं।

   (iv) Clinician शब्द वैसे व्यक्ति को इंगित करता है, जो एक क्रमबद्ध रूप से हस्तक्षेप करके समस्या ग्रस्त व्यक्ति को समस्या से निजात दिलाने की कोशिश करता है।

   (v) पेशेवर प्रशिक्षण, का तात्पर्य वैसे प्रशिक्षण से है, जो व्यक्ति को क्रमबद्ध तरीके से हस्तक्षेप करने के योग्य बनाता है।

   (vi) सही

   (vii) सही

(viii) सही

(ix) सही

(x) सही

2. (a) पेशागत विनियमन एवं आचार संहिता के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक के उन क्रिया कलापों को शामिल किया जाता है, जो उनके वैज्ञानिक, शैक्षिक एवं व्यावसायिक भूमिका को दर्शाता है।

(b) American Board of Examination in professional psychology

(c) एक उत्तरदायी व्यवसाय के लिए व्यवसायियों के ज्ञान, कौशल एवं अखण्डता को परखने के लिए व्यवसायिक मापदंड का होना आवश्यक है।

(d) 1992 ई. में

(e) सही/गलत

2.7 निबंधात्मक प्रश्न

1 पेशेवर प्रशिक्षण से क्या समझते हैं? नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के विभिन्न पेशेवर प्रशिक्षण का वर्णन करें।

2 पेशागत विनियमन एवं आचार संहिता से क्या समझते हैं? किन्ही दो विनियमन की चर्चा करें।

3 आचार संहिता मापदंड के उद्देश्य क्या है, इनके विभिन्न मापदंडों की चर्चा करें।

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

- Hecker, Fink, he Vasseur and Parker (1995) - Quantifying Practicum experience, Professional psychology research and practice, Vol 27, Oct. 1996
- Blount, Frank and Smith (1993) - Training the next generation of researches in clinical psychologist. The Clinical Psychologist - 46 (3) 100-105
- Peterson, D.R. (1969) Attitude Concerning the Doctor of Psychology Programme. Professional Psychology Vol. 1, 44-47.
- Peterson D.R. (1971) Status of the Doctor of Psychology Programme, Professional Psychology Vol. 2, 271-275
- Abroms, G.M. & Green Field, N.S. (1973), A New Mental Health Profession, Psychiatry, 36, 10-22

- Modern Clinical Psychology Principles and Intervation in the Clinic and Community by Sheldon J. Korchin 2004, CBS Publishers and Distributors Pvt. Ltd.
- Introduction to Clinical Psychology, Science, Practice and Ethies, by Jefford E. Hacker, Geoffray L. Thorpe, 2012, Dorling Kinderslay (India) Pvt. Ltd.
- Belar and Perry (1991), Proceeding I National Conference on Scientist=practitioner education Sarasota, PF. Resource Exchange.

इकाई - 3

नैदानिक मनोविज्ञान अध्ययन की विधियाँ

Methods of Study in Clinical Psychology

नैदानिक आंकलन, नैदानिक साक्षात्कार जीवन इतिहास वृत्त, मानसिक अवस्था परीक्षा

Clinical Assessment ,Clinical Interview, Case History, Mental State Examination

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 नैदानिक मनोविज्ञान की विधियाँ

3.4 नैदानिक आंकलन

3.5 नैदानिक साक्षात्कार

3.6 व्यक्तिवृत विधि

3.7 मानसिक अवस्था परीक्षा

3.8 सारांश

3.9 स्व-अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.11 संदर्भग्रंथसूची

3.1 प्रस्तावना

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक व्यवहारिक शाखा है। इसमें हम व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक एवं मानसिक अवस्था का अध्ययन कर, वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने में विभिन्न मनोवैज्ञानिक चिकित्सा प्रविधियों के द्वारा सहायता करते हैं।

व्यक्ति के मानसिक अवस्था को अध्ययन करने के लिए एक क्रमबद्ध प्रणाली का होना अनिवार्य है। किसी भी व्यक्ति, अवस्था, वस्तु या स्थिति का अध्ययन क्रमबद्ध तरीके से करते हैं, तो उसे वैज्ञानिक अध्ययन कहते हैं। इस क्रमबद्ध प्रणाली से अध्ययन को हम अध्ययन-विधि कहते हैं, और कोई भी अध्ययन वैज्ञानिक अध्ययन तभी हो सकता है, जब वह क्रमबद्ध तरीके से किया गया हो।

मनोविज्ञान को विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है, अत: इसमें भी हम वैज्ञानिक रूप से स्थापित अध्ययन विधि का उपयोग करते हैं। मनोविज्ञान का अध्ययन विधियों में प्रारम्भ में अन्तर्निरिक्षण विधि (Introspection) का उपभोग किया जाता था, परंतु अन्तर्निरिक्षण एक आत्मनिष्ठ विधि है, इसके द्वारा प्राप्त परिणाम को विश्वनीयता एवं वैधता की जाँच नहीं कर सकते, क्योंकि इस विधि में

पूरी तरह से व्यक्ति द्वारा दिए गए सूचनाओं पर आश्रित रहना पड़ता हैं। अत: मनोविज्ञान में अन्तर्निरिक्षण विधि को ज्यादा महत्व नहीं दिया गया, क्योंकि इस विधि के द्वारा विषय के वैज्ञानिक स्वरूप को मान्यता नहीं मिलती है। इसके उपरांत अवलोकन विधि (observation method) का उपयोग किया जाने लगा, परंतु इस विधि के द्वारा अध्ययन में अवलोकनकर्ता के द्वारा दिए गए सूचनाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। यहां इस विधि के द्वारा अध्ययन पर पुन: इससे प्राप्त सूचनाओं का विश्वसनीयता पर सवाल खड़ा हो जाता है। अत: इस विधि के द्वारा अध्ययन से भी मनोविज्ञान के वैज्ञानिक स्वरूप को मान्यता नहीं मिलती है। इसलिए मनोविज्ञान की अध्ययन के लिए तीसरी विधि की जरूरत महसूस की गई, और परिणामस्वरूप प्रयोगात्मक विधि (Experimental Method) का उपयोग किया जाने लगा। प्रयोगात्मक विधि में अध्ययन को नियंत्रित अवस्था में किया जा सकता है। प्रयोगात्मक विधि के अंतर्गत किए जाने वाले अध्ययन की विश्वसनीयता की जाँच कर सकते हैं, जाँच करने के उपरांत उसकी वैधता स्थापित कर सकते हैं। अत: मनावैज्ञानिक अध्ययन में प्रयोगात्मक विधि को ज्यादा मान्यता दी गई।

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की व्यवहारिक शाखा होने के कारण उन सभी विधियों का उपयोग करता है, जिनका स्वरूप वैज्ञानिक है। इन वैज्ञानिक विधियों में मनोवैज्ञानिक आंकलन व्यक्ति इतिहासवृत तथा अन्य विधियां मुख्य है। इस इकाई के आने वाले भाग में हम नैदानिक मनोविज्ञान के अध्ययन में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न विधियों के उपयोग की विस्तृत चर्चा करेंगे।

3.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप :

- नैदानिक मनोविज्ञान की विभिन्न विधियों की चर्चा करने में सक्षम होंगे।
- नैदानिक मनोविज्ञान में नैदानिक आंकलन का वर्णन एवं व्यवहारिक अध्ययन करने योग्य होंगे।
- नैदानिक साक्षात्कार की चर्चा करने में सक्षम होंगे।
- व्यक्ति इतिहास विधि की चर्चा करने में सक्षम होंगे।
- मानसिक अवस्था परीक्षण के विभिन्न पहलुओं का वर्णन करने योग्य होंगे।

3.3 नैदानिक मनोविज्ञान की विधियाँ (Methods of Clinical Psychology)

नैदानिक मनोविज्ञान में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न विधियों का आधार मनोविज्ञान है। अत: मनोविज्ञान में प्रयुक्त होने वाली विधियों का उपयोग जब हम नैदानिक समस्या के अध्ययन करने के लिए करते हैं, तो वह नैदानिक मनोविज्ञान की विधि मानी जाती है। अत: नैदानिक मनोविज्ञान में प्रयुक्त होने वाली विधियों की चर्चा से पहले हम मनोविज्ञान की मूल विधियों की चर्चा करें, तो उन विधियों का नैदानिक संदर्भ समझने में आसानी होगी।

मनोवैज्ञानिक प्रत्ययों का अध्ययन के लिए मनोविज्ञान में प्रायोगिक विधि के अतिरिक्त अन्य विधियों, जैंसे प्रेक्षण विधि, साक्षात्कार, व्यक्तिगत अध्ययन, व्यक्ति वृत इत्यादि का उपयोग किया जाता है। विस्तृत रूप से ये विधियों निम्नलिखित है-

1. अंत:निरीक्षण विधि (Introspection Method)
2. प्रेक्षण विधि (Observation Method)
3. साक्षात्कार विधि (Interview Method)
4. व्यक्ति अध्ययन विधि (Case Study Method)
5. व्यक्तिवृत विधि (Case History Method)
6. प्रायोगिक विधि (Experimental Method)

उपरोक्त विधियों में अंत: निरीक्षण विधि पूर्ण रूप से व्यक्ति के अनुभव एवं जानकारी प्रदान करने पर निर्भर रहता है। यानि अंत:निरीक्षण विधि एक आत्मनिष्ठ विधि है, इसमें व्यक्ति द्वारा दिए गए अनुभव आधारित जानकारी पर ही अध्ययन निष्कर्ष निकालते हैं। इसलिए इस विधि की विश्वसनियता पर प्रश्न चिन्ह लगा रहता है, और इस विधि को पूर्णत: वैज्ञानिक मान्यता नहीं मिली है।

मनोविज्ञान की दूसरी विधि ''प्रेक्षण'' एक महत्वपूर्ण विधि है। 'प्रेक्षण' का अर्थ होता हैं अवलोकन करना। इस विधि में अध्ययन करने वाला व्यक्ति, विभिन्न परिस्थितियों एवं व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह के व्यवहारों का निष्पक्ष तरीके से अवलोकन करता है, अवलोकन द्वारा एकत्रित तथ्यों का विश्लेषण करके व्यवहार के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचता है।

प्रेक्षण विधि के मुख्य प्रकारों में सहभागी प्रेक्षण (Participant observation), असहभागी प्रेक्षण (Non-participant observation), अर्ध-सहभागी प्रेक्षण (Semi-participant observation), नियंत्रित प्रेक्षण (Controlled observation) एवं सामूहिक प्रेक्षण (Mass observation) मुख्य है।

साक्षात्कार विधि (Interview method) भी मनोविज्ञान में प्रयुक्त होने वाली एक महत्वपूर्ण विधि है। इस विधि में साक्षात्कारकर्ता और सूचनादाता दोनों ही आमने सामने बैठते हैं। साक्षात्कारकर्ता, सूचनादाता के संबंधमें उसके द्वारा दिए गए सूचना के आधार पर निष्कर्ष निकालता है। इस विधि की विस्तृत चर्चा हम आगे करेंगे।

व्यक्ति अध्ययन विधि (case study method) में व्यक्ति विशेष द्वारा व्यक्त व्यवहारों का अध्ययन विभिन्न नियंत्रित एवं अनियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता हैं। इन परिस्थितियों में अध्ययन करने के लिए संबंधितव्यक्ति की सहमति एवं सहभागिता की महत्वपूर्ण भूमिका है।

व्यक्तिवृत विधि (Case History Method) एक गहन अध्ययन विधि है। इसके द्वारा व्यक्ति, परिवार, संस्था, समूह एवं समुदाय का अध्ययन एक इकाई के रूप में किया जाता है यानि सभी एक दूसरे को अंत: पारस्परिक रूप से प्रभावित करते हैं। इस विधि की विस्तृत चर्चा आगे आने वाले भागों में की जायेगी।

मनोविज्ञान की उपरोक्त विधियों का उपयोग जब हम नैदानिक समस्याओं के अध्ययन करने के लिए करते हैं, तो उसे हम नैदानिक मनोविज्ञान की विधि कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि

मनोविज्ञान की समस्त विधियों का उपयोग, नैदानिक मनोविज्ञान में किया जाता है। नैदानिक मनोविज्ञान की विधियों में प्रमुख है - मनोवैज्ञानिक आंकलन, मनोवैज्ञानिक साक्षात्कार एवं व्यक्तिवृत विधि। इन विधियों की विस्तृत व्याख्या इस इकाई के आगे वाले भागों में किया जाएगा।

स्व-जाँच एवं अभ्यास

(i) नैदानिक मनोविज्ञान की विधियाँ एवं मनोविज्ञान की विधियाँ अलग-अलग है। - सही/गलत

(ii) अन्तर्निरिक्षण विधि एक आत्मनिष्ठ विधि है। - सही/गलत

(iii) प्रेक्षण विधि के द्वारा व्यक्ति के व्यवहारों का अवलोकन करते हैं। - सही/गलत

(iv) प्रेक्षण विधि का इस्तेमाल केवल नियंत्रित अवस्था में करते हैं। - सही/गलत

(v) व्यक्ति अध्ययन विधि द्वारा व्यक्ति, संस्था, समूह का अध्ययन एक इकाई के रूप में करते हैं।- सही/गलत

3.4 नैदानिक आंकलन (Clinical Assessment)

किसी भी समस्या के समाधान के लिए उस समस्या की समुचित जानकारी होना अनिवार्य है। समस्या व्यक्तिगत है, अथवा सामुदायिक, इसके उचित समाधान के लिए उस समस्या के स्वरूप एवं कारण का ज्ञान होना आवश्यक है।

नैदानिक मनोविज्ञान में मनोवैज्ञानिक समस्याओं के समाधान के लिए इस समस्या का निदान करना आवश्यक है। उस निदान के लिए नैदानिक आंकलन विधि का सहारा लिया जाता है।

नैदानिक आंकलन को परिभाषित करते हुए कह सकते हैं कि ''Clinical assessment is the process by which clinicians gain understanding of the patient necessary for making informed decisions'' यानि नैदानिक आंकलन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनावैज्ञानिक व्यक्ति के समस्या को समझने की कोशिश करता है, और समझने के उपरांत निर्णय लेने में सक्षम होता है। Sundbegr एवं Tyler (1962) के अनुसार ''Clinical Assessment describes any act by which the clinican gains information of value about the patient. It may include only measures of a specific variables, using a well-validated test, or it may involve a full scale effort to construct a ''working image or model of the person.''

नैदानिक आंकलन को मनोवैज्ञानिक आंकलन भी कहते हैं क्योंकि मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विकास, नैदानिक मनोवैज्ञानिक के लिए एवं नैदानिक आंकलन के लिए मील का पत्थर साबित हुआ है।

नैदानिक आंकलन की प्रक्रिया को हम चार भागों मं विसक्त करते हैं।

1. आंकलन की योजना बनाना (Planning for Assessment)
2. प्रदत्त संग्रह करना (Data Collection)
3. आकलित प्रदत्त का प्रसंस्करण (Processing of assessment data)

4. आंकलन से प्राप्त परिणामों को संप्रेषित करना (Communicating the findings of assessment)

1. आंकलन की योजना

आंकलन की योजना की शुरूआत एक संप्रेषित (Referal) प्रश्न से होता है। जैसे - कोई व्यक्ति किसी व्यक्तिगत समस्या को लेकर मनोवैज्ञानिक के पास आता है, तो उसे यह अपेक्षा होगी कि मनोवैज्ञानिक उसकी समस्या को दूर कर देगा। अत: उसके समस्या का सही आंकलन करने के लिए मनोवैज्ञानिक को एक प्रश्न प्रेषित करना होता है, यानि ''इस समस्या के क्या क्या कारण हो सकते हैं।'' इसके उपरांत कुछ कारणों को मानते हुए उससे संबंधित परिकल्पना तैयार करते हैं, यानि एक परिकल्पना आंकलन को एक दिशा प्रदान करती है, तो मनोवैज्ञानिक एक निश्चित दिशा में व्यक्ति के समस्या से संबंधित आंकलन को आगे बढ़ाता है।

वर्गीकरण (Classification) : आंकलन की योजना के अंतर्गत वर्गीकरण एक मुख्य प्रक्रिया है। व्यक्ति एवं व्यक्ति की समस्या का वर्गीकरण मनोवैज्ञानिक आंकलन का एक प्रमुख उद्देश्य है। इस वर्गीकरण के लिए मुख्य रूप से ''नैदानिक सार'' के मानक का उपयोग किया जाता है। वर्तमान में आंकलन के लिए व्यक्ति का वर्गीकरण करने के लिए DSM IV (Diagnostic and Statistical Manual of Mental Disorder) 1994 में दिए गए मानक को इस्तेमाल करते हैं। जिनमें में पाँच निर्धारक मुख्य है।

1. नैदानिक सिन्ड्रोम (Clinical Syndrome) जैसे - अवसाद, मनोरोग, स्किजोफ्रेनिभा, इत्यादि।
2. व्यक्तित्व विकृति एवं विकासात्मक विकृति (Personality Disorders and Developmental Disorders) जैसे -व्यक्तित्व विकृति की गंभीरता का स्तर, विकासात्मक विकृति की गंभीरता का स्तर इत्यादि।
3. शारीरिक स्थिति (Physical Conditions) जैसे -मधुमेह या अन्य शारीरिक बीमारियां इत्यादि।
4. मनोसामाजिक तनाव देने वाले तत्वों गम्भीरता का स्तर (Severity of Psychosocial Stressors)
5. पूर्व के वर्षों में ग्रहण किए गए कार्यों का उच्चतम स्तर (Highest level of adaptive functioning in the post year) - इस स्तर को 1 से 7 अंकों के बीच मापते हैं।

वैसे तो आंकलन के वर्गीकरण करने का उपरोक्त आधार की काफी आलोचना की जाती रही है, फिर भी यह एक महत्वपूर्ण निर्धारण मानक है।

2. प्रदत्त संग्रह

मनोवैज्ञानिक अथवा नैदानिक आंकलन के लिए प्रदत्त संग्रह के लिए कई विधियों का उपयोग किया जाता है। Jerome Satller (1988) के अनुसार "Interview, norm-referenced tests, observation and informed assessment methods are four "pillars" of psychological assessment".

नैदानिक साक्षात्कार विधि, नैदानिक आंकलन के लिए प्रदत्त संग्रह एवं व्यक्ति के संबंधमें जानकारी प्राप्त करने के लिए एक प्रमुख विधि है। साक्षात्कार विधि की प्रमुखता का मुख्य कारण इस विधि के उपयोग करने के सरल तरीके और इसमें व्याप्त लचीलापन है। साक्षात्कार की व्यवस्था किसी भी जगह पर की जा सकती है, और इसके लिए कोई विशेष उपकरण की भी व्यवस्था नहीं चाहिए। साक्षात्कार के द्वारा हम व्यक्ति के विचारो, भावनाओं एवं व्यवहार संबंधितजानकारी प्राप्त कर सकते हैं परंतु साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी का उचित उपयोग करने के लिए मनोवैज्ञानिक को अपनी विवेकशीलता का भी उपयोग करना जरूरी है।

नैदानिक आंकलन के लिए प्रदत्त संग्रह के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी काफी महत्वपूर्ण है। इसका सबसे बड़ा गुण यह हैं कि उसके द्वारा प्राप्त जानकारी को अन्य व्यक्तियों की जानकारी के साथ मिलान एवं तुलना कर सकते हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षण मानकीकृत परीक्षण होता है, इसलिए कोई भी अन्य मनोवैज्ञानिक इसका उपयोग कर सकता है। (Hecker J.E. and Thorpe G.L. (2012) के अनुसार "The Psychological Test is a systematic way of collecting a sample of an individuals behaviour under precisely specified conditions, so that it can be compared to the behaviour of similar individual, under the same conditions."

मानक संदर्भित परीक्षण (Norm referenced tests) भी प्रदत्त संग्रह के लिए एक व्यवस्थित माध्यम है। Green (1981) के अनुसार "Norm-referenced tests are systematic means of collecting samples of behaviour under relatively standardized conditions. They are designed to help us understand some aspects of people's knowledge, skill and personality". परंतु परीक्षण का चयन एवं व्यक्ति विशेष पर उसका उपयोग कर प्रदत्त संग्रह करना संबंधितमनोवैज्ञानिक की जिम्मेदारी होती है।

इनके अलावा व्यक्ति के जीवन के विभिन्न अनुभवों का भी व्यक्ति से संबंधितप्रदत्त संग्रह करने में उपयोग करते हैं। जीवन से संबंधितआंकड़ों से आंकलन के कई उद्देश्यों की पूर्ति होती है।

3. आकलित प्रदत्त का प्रसंस्करण

मनोवैज्ञानिक अथवा नैदानिक आंकलन का संचालन मनोवैज्ञानिक के सैद्धांतिक ज्ञान से निर्देशित होता है। मनोवैज्ञानिक के सैद्धांतिक प्रतिमान ही, आंकलन के उद्देश्य, आंकलन के लिए उपयुक्त विधियों का उपयोग, और कैसे इसके परिणामों का विवेचन किया जाए, इत्यादि बातों को निर्देशित करता है। इसी कारण से एक ही परिणाम एवं जानकारी का अलग अलग मनोवैज्ञानिकों द्वारा भिन्न तरीके से व्याख्या की जाती है। उदाहरणस्वरूप - एक रिपोर्ट के अनुसार एक व्यक्ति कार्यालय में अपने अधिकारी से बात करते समय काफी तनाव महसूस करता है। इस रिपोर्ट की व्याख्या : एक cognitive therapist इस व्यक्ति में अपने आप के प्रति नकारात्मक विश्वास के रूप में व्याख्या करेगा। एक व्यवहार मनोवैज्ञानिक इस रिपोर्ट की व्याख्या, अधिकारी के द्वारा पूर्व में किए गए किसी नकारात्मक व्यवहार के परिणाम के रूप में करेगा। एक नैदानिक मनोवैज्ञानिक इस तनाव का कारण व्यक्ति में आत्मविश्वास की कमी के रूप में देख सकता है। Wiggins (1993) के अनुसार "One broad distinction that is often made between ways of viewing psychological assessment data is the sign versus sample interpretation of human behaviour". प्रतीक दृष्टिकोण के अनुसार मानव व्यवहार कुछ अंतनिहित विशेषताओं का एक प्रतीक है। जैसे -

Psychodynamic मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से प्राप्त आंकलन से प्राप्त प्रदत्तों को व्यक्तित्व गतिशीलता के संकेत के रूप में देखता है। इसके विपरीत आंकलन के परिणाम को व्यक्ति के व्यवहार का नमूना (Sample) मानते हैं यानि व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में जिस प्रकार के विभिन्न व्यवहार प्रदर्शित कर सकता है, ये प्राप्त परिणाम उसी को एक नमूना (Sample) के रूप में दर्शाते हैं।

इसके अतिरिक्त नैदानिक आंकलन से प्राप्त प्रदत्तों का प्रसंस्करण के लिए तीसरा दृष्टिकोण किस विशेष सिद्धांत के साथ नहीं जुड़ा हुआ है। Wiggns (1973) के अनुसार "Assessment data can be viewed as correlates". यानि व्यक्ति के बारे में निकाले गए निष्कर्ष व्यक्ति के द्वारा प्रेक्षित व्यवहार के सह संबंधोंपर आधारित होते हैं।

4. आंकलन से प्राप्त परिणामों को संप्रेषित करना

नैदानिक या मनोवैज्ञानिक आंकलन एक चुनौतीपूर्ण एवं समय लेने वाला कार्य होता है। इसलिए मनोवैज्ञानिक आंकलन के आधार पर प्रतिवेदन तैयार करने में, संप्रेषित प्रश्न, जो आंकलन का आधार होता है, का विशेष महत्व होता है। संप्रेषित प्रश्न को पूर्ण रूप से महत्व देने के अलावा, मनोवैज्ञानिक प्रतिवेदन में निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान होता है, और जो वास्तव में प्रतिवेदन के उद्देश्य को दर्शाता है।

1. प्रतिवेदन (Report) वैसी जानकारी प्रदान करने से सक्षम, जिससे की आंकलन किए जाने वाले व्यक्ति को समझने में पूरी तरह से सहायता प्रदान कर सके।
2. प्रतिवेदन पढ़ने के बाद पढ़ने वाले को आंकलन किए जाने वाले व्यक्ति के बारे में वैसी बातों की जानकारी होनी चाहिए, जिन बातों के बारे में प्रतिवेदन पढ़ने के पहले जानकारी नहीं की।
3. प्रतिवेदन का तीसरा उद्देश्य वयक्ति के बारे में लिखित रूप से उसके जीवन वृत, साक्षात्कार, परीक्षण इत्यादि जो आंकलन के दौरान उपयोग भी की गई है, जानकारी देना, साथ ही उनके परिणाम तथा समय समय पर की जाने वाली चिकित्सा की भी जानकारी प्रदान करना होता है।
4. आंकलन के आधार पर तैयार किए गए प्रतिवेदन का कानूनी प्रक्रियाओं एवं मामलों में एक वैध दस्तावेज के रूप में उपयोग करना प्रतिवेदन का चौथा उद्देश्य है।

आंकलन से प्राप्त परिणामों को संप्रेषित करने में प्रतिवेदन को लिखना भी महत्वपूर्ण कार्य है। प्रतिवेदन को लिखने में स्पष्टता का होना अति महत्वपूर्ण है। Satller (1988) ने निम्नलिखित बातों का ध्यान रखने की संस्तुति की है-

1. प्रतिवेदन में उचित बातों को स्थान देना एवं हानि करने में समक्ष बातों को हटाना। (Include in the report relevant material and delete potentially damaging material).
2. अनावश्यक सामान्यीकरण को टालना (Avoid undue generalization)
3. प्रतिवेदन को पढ़ने योग्य बनाने के लिए व्यवहारिक संदर्भ पुस्तक का उपयोग (Use behavioural referants to enhance the report readability)
4. स्पष्ट संप्रेषण एवं अनावश्यक तकनीकी बातों का विलोपन (Communicate clearly and eleminate unnecessary technical material).

अन्त में प्रतिवेदन को इस तरह से संगठित करनाचाहिए कि व्यक्ति के बारे में व्यक्तित्व जानकारी, के अलावा आंकलन करने के कारण, उसके बारे में आधारभूत जानकारियाँ इत्यादि प्राप्त हो सके।

प्रतिवेदन का वह भाग, जिसमें व्यक्ति के बारे में विभिन्न प्रकार की जानकारियों की व्याख्या की गई हो, उसे संगठित करने के कई तरीके हैं। Ownby (1992) ने इसके तीन प्रतिमान के बारे में चर्चा की है। ये हैं-

a) Hypothesis oriented model

b) Domain oriented model

c) Test oriented model

प्रतिवेदन के अन्त में निष्कर्ष के तौर पर परिणामों का सारांश लिखा जाता है। यह भाग पूरे प्रतिवेदन की झलक देने में सक्षम होनी चाहिए।

मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं नैदानिक आंकलन

नैदानिक आंकलन में विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। जिनमें मुख्य है,- बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test), व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test), अभिवृति परीक्षण (Aptitude Test) एवं मनोवैज्ञानिक मापनी इत्यादि।

(a) बुद्धि परीक्षण : इस परीक्षण के द्वारा व्यक्ति की मानसिक योग्यता का मापन किया जाता है। यह बुद्धि परीक्षण व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार का होता है, परन्तु व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण का निदानात्मक महत्व अधिक है। बुद्धि परीक्षणों को विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया जाता है, जैसे - अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Non-verbal intelligence test), एवं शाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Verbal Intelligence test)

व्यक्तित्व परीक्षण (Pesonality Test) : व्यक्तित्व का मापन मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में सबसे जटिल है। व्यक्तित्व व्यक्ति के विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक गुणों का समन्वय है, जो विभिन्न प्रकार एवं शील-गुण के रूप में परिलक्षित होते हैं। सामान्यत: व्यक्तित्व के विभिन्न गुणों के मापन के लिए दो प्रकार की विधियों का इस्तेमाल किया जाता है-

1. व्यक्तित्व सूचियाँ (Personality Schedules and Inventories)
2. प्रक्षेपी प्रविधियाँ (Projective Techniques)

व्यक्तित्व सूचियाँ एक प्रकार की प्रश्नावली होती है, जिसमें व्यक्ति के व्यवहार या समस्या से संबंधित विस्तृत प्रश्नों की सूची क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत की जाती है। ये प्रश्न व्यक्तित्व के विभिन्न प्रश्नों, जैसे - चिन्ता, अवसाद, अनुकूलन क्षमता (Adaption capacity), समायोजन (adjustment) अंर्तमुखी-बर्हिमुखी, व्यक्ति की रूचि, इत्यादि से संबंधित होते हैं। कुछ प्रमुख व्यक्तित्व सूचियाँ है, MMPI (Minnesota Multiphasic Personality Inventory), Bell's Adjustment Inventory, Eysrack Personality Questionnaire or Inventory, (EPI & EPQ) Cattel's 16 PF Inventory इत्यादि।

प्रक्षेपण प्रविधि ऐसी धारणा पर आधारित होती है, कि जो व्यक्ति जिस प्रकार का होता है, वैसा ही दिखाई देता है, यानि व्यक्ति प्रक्षेपण के द्वारा अपने विचारों, सोच एवं भावनाओं को अभिव्यक्त

करता है। इस विधि के द्वारा व्यक्ति के समक्ष कुछ अस्पष्ट एवं असंगठित परिस्थितियों एवं उत्तेजनाओं को प्रस्तुत किया जाता है, और उनके द्वारा अपनी इच्छाओं, त्रुटियों एवं मानसिक संघर्षों को प्रक्षेपित करता है। इन प्रक्षेपी प्रविधियों में रोर्शाक स्याही के धब्बों का परीक्षण (Rovschack Ink Bloo Test) एवं कथानक सप्रत्यक्षण परीक्षण (Thematic Appreception Test (TAT) प्रमुख है।

इसके अतिरिक्त व्यक्ति में निहित क्षमताओं के मापन के लिए योग्यता संबंधी परीक्षणों का विकास किया गया, जिसे अभिवृत्ति (aptitude Test) कहते हैं।

स्व-जाँच एवं अभ्यास 2

(i) आंकलन की योजना बनाना, नैदानिक आंकलन को ..... हैं।

(ii) नैदानिक आंकलन को शुरूआत ..... प्रश्न से होती है।

(iii) आंकलन की योजना के तहत ..... एक प्रमुख प्रक्रिया है।

(iv) नैदानिक आंकलन में ..... दूसरी अवस्था है।

(v) नैदानिक आंकलन एक ..... कार्य होता है।

नैदानिक साक्षात्कार विधि :

नैदानिक मनोविज्ञान में, नैदानिक साक्षात्कार विधि सबसे ज्यादा प्रयुक्त होने वाली विधि है। नैदानिक साक्षात्कार विधि के मुख्य प्रकार है-

1. प्रवेश के लिए साक्षात्कार (Intake Interview) :

मनोवैज्ञानिक एवं क्लाइन्ट के बीच जो प्रथम साक्षात्कार होता है, उसका मुख्य उद्देश्य होता है- व्यक्ति की समस्या के स्वरूप को समझना, यानि व्यक्ति किस तरह से मनोवैज्ञानिक की मदद की अपेक्षा करता है, तथा दूसरा उद्देश्य होता है, यह सुनिश्चित करना कि क्या मनोवैज्ञानिक उस व्यक्ति की समस्या से संबंधित सहायता पहुंचाने में सक्षम है।

जो व्यक्ति किसी व्यक्तिगत समस्या से संबंधित मनोवैज्ञानिक की सहायता प्राप्त करना चाहता है, उसके लिए प्रवेश साक्षात्कार काफी महत्वपूर्ण हो जाता है। क्योंकि इस साक्षात्कार के उपरांत व्यक्ति उस मनोवैज्ञानिक के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर लेता है, तथा जैसे जैसे साक्षात्कार की प्रक्रिया आगे बढ़ती है, कभी-कभी व्यक्ति यह महसूस करने लगता है कि यह मनोवैज्ञानिक उसकी समस्या के लिए बिल्कुल अंजान है, और व्यक्ति किसी खास निर्णय लेने की स्थिति में आ जाता है। Backland and Landwall (1975) के अनुसार "As the interview proceeds, the client may find the psychologist, a total stronger, asking about painful and very private experiences. Most of us would find such an experience anxiety provoking Given the stress of the situation, perhaps it is not surprising that as many as half of all clients who come for an intake interview never return for treatment.

2. व्यक्ति इतिहास साक्षात्कार (Case History Interview) :

व्यक्ति इतिहास साक्षात्कार को मनोसामाजिक साक्षात्कार भी कहा जाता है। इसके द्वारा प्राप्त जानकारी समुचित्त निदान करने में सहायक होता है।

व्यक्ति इतिहास साक्षात्कार में मुख्यत: व्यक्ति के बारे में जानकारी इकट्ठा करते हैं। इस साक्षात्कार के द्वारा जो जानकारी प्राप्त करते हैं, उनमें मुख्य है- जन्म एवं विकास, पारिवारिक स्थिति,शिक्षा, रोजगार, लैंगिक इतिहास, वैवाहिक स्थिति, शराब एवं नशा संबंधी आदत इत्यादि। इसके अलावा इस साक्षात्कार के दौरान मनोवैज्ञानिक को इस व्यक्ति का अवलोकन करने का अवसर प्राप्त होता है, और वह व्यक्ति के वाणी, सोचने की प्रक्रिया, याददास्त, इत्यादि का अवलोकन भी करता है।

3. निदान साक्षात्कार :

इस साक्षात्कार के दौरान उस तरह की जानकारी प्राप्त करते हैं, जो मनोवैज्ञानिक को रोग निर्णय लेने में मदद करता है। इसमें रोग के विभिन्न लक्षणों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। Othmer and Othermer ने निदान साक्षात्कार के पांच चरणों का उल्लेख किया है, वे है - Diagnostic clue - इसमें मनोवैज्ञानिक व्यक्ति के मुख्य शिकायत, व्यवहार एवं उसके दर्शाने की स्थिति को देखता है, जैसे - आप यहां किस तरह की समस्या को लेकर आये है इत्यादि| इसके आधार पर मनोवैज्ञानिक रोगों की संभावित सूची तैयार कर लेता है। दूसरे चरण में diagnostic criteria के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है, जैसे - क्या आपने कभी कोई ऐसी आवाज सुनी है, जो पहले नहीं सुनी हो? इत्यादि |इस साक्षात्कार के तीसरे चरण में मनोचिकित्सा संबंधी इतिहास की जानकारी प्राप्त की जाती है। क्या पहले मानसिक स्वास्थ्य संबंधी सेवा ली गई है? इत्यादि | चौथे चरण में निदान पर निश्चित निर्णय ले लेते हैं, और पांचवें चरण में रोग के निदान पर चिकित्सकीय प्रक्रिया प्रारंभ कर दी जाती है।

3.6 व्यक्तिवृत विधि (Case History Method)

नैदानिक मनोविज्ञान में व्यक्तिवृत विधि एक गहन अध्ययन विधि है। इसके द्वारा व्यक्ति, परिवार, संस्था, समूह इत्यादि का एक इकाई के रूप में अध्ययन किया जाता हैं। इस विधि में समस्या ग्रस्त व्यक्ति में जीवन इतिहास से संबंधित सारे दस्तावेजों का उपयोग किया गया है, जिससे उस व्यक्ति के व्यवहार के संबंध में महत्वपूर्ण तथ्य एकत्रित हो सके। इसमें व्यक्ति की व्यक्तिगत पृष्ठभूमि, पारिवारिक पृष्ठभूमि, उसके जीवन को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण घटनाओं, तत्कालीन परिस्थितियों आदि का अध्ययन किया जाता है।

स्व-जाँच एवं अभ्यास 3

(i) Intake Interview का मुख्य उद्देश्य होता है .....

(ii) व्यक्ति इतिहास साक्षात्कार को .....

(iii) वैसी जानकारी प्राप्त करना, जो मनोवैज्ञानिक को रोग निर्णय में सहायता करना है, ...

(iv) Diagnostic clue निदान साक्षात्कार का .....

(v) व्यक्तिवृत विधि में व्यक्ति के जीवन इतिहास से संबंधित.....

3.7 मानसिक अवस्था परीक्षण (Mental Status Examination)

मानसिक अवस्था परीक्षण, शारीरिक परीक्षण का पर्याय है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित तथ्यों की जांच की जाती है।

a) General Appearance and Behaviour

b) Speech and thought

c) Consciousness

d) Perception

e) Orientation of Person, place and time

f) Short term/long term memory

g) Attention and Concentration

h) Intelligence

i) Insight and Judgement

j) Higher Cognitive functioning

वैसे सामान्यत: मानसिक अवस्था परीक्षण असंरचित स्थिति में ही किया जाता है, परंतु इसकी विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लगा रहता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए एक संरचित मानसिक अवस्था परीक्षण, जो Meldman M.J. Me. Farland, G and Johnson Z. (1976) द्वारा विकसित किया गया है, का अंश अध्ययनकर्ता की जानकारी के लिए दिया जा रहा है।

MENTAL STATUS EXAMINATION

Date..... COMMENTS

1. APPEARANCE AND BEHAVIOUR

1. General Description

The patient is ..... developed.

1. well
2. fairly well
3. inadequately
4. very inadequately

1. obese
2. well nourished
4. poorly nourished
5. emaciated

3. fairly well nourished

1. male 2. female

who appears to be in ..... distress.

1. very little 4. severe
2. mild 5. exteremly severe
3. moderate

Patient appears.....age,

1. the stated 3. older than the stated
2. younger than the stated

has .....build,

1. an average 4. an asthenic
2. a pyknic 5. a slight
3. an athletic 6. husky

and is.....

1. of average height 3. tall
2. short

4 severe

__ physical deformities

1. No major
2. Scoliotic
3. Kyphotic

The patient's posture is .....

1. unremarkable
2. upright
3. rigid

and patient walks with.....gail.

1 an unremarkable 7. a shuffling
2. a slow 8. a rigid

3. a moderately fast
4. a rapid
5. a graceful
6 a loping
9. a spastic
10. an ataxic
11. unable to walk

Patient's dress and grooming appear.....

1. unremarkable
2 clean,
3. neat
4. dirty
5. attention-seeking
6. untidy
7. formal
8. carefully disordered
9. immature
10. seductive
11. bizarre
12. institutional
13. casual

with.....hair.

1. unremarkable
2. unkept
3. lengthy
4. bald
5. prematurely bald
6. prematurely gray
7. dyed
8. short
9. waggly
10. neatly combed

Facial features appear .....

1. unattractive
2. bored
3. sedated
4. foolish
5. pouting
6. scowling
7. perplexed
8. anxious
9. frequently anxious
10. suspicious
13. tearful
14. dejected
15. angry
16. hostile
17. tense
18. frightened
19. sneering
20. leering
21. unusual
22. beautiful

11. depressed
12. frequently depressed
23. charming
23. attractive

and patient's eyes.....

1. looked unremarkable
2. were staring at the examiner
3. were staring off into space
4. looked plereing
5. were furtively glancing
6. were averting direct gaza
7. were closed
8. appeared warm and friendly

The patient.....

1. had no communication barriers
2. is blind
3. is deaf
4. is mute

The following neurological complaints were noted:

1. none
2. verbal aphasia
3. syntactical aphasia
4. nominal aphasia
5. semantic aphasia
6. astereognosia
7. anosognosia
8. autotopagnosia

Narrative Neuro logical:

.....

.....

.....

The patient reported the following physical complaints: .....

1. none
2. somatization
3. dizziness
4. headaches
19. indigestion
20. menstrual cramps
21. mouth dryness
22. neck pain

5. low back pain
6. shakiness
7. nausea
8. vomiting
9. diarrhea
10. weakness
11. lack of energy
12. muscle pain
13. chest pain
14. abdominal pain
15. chills
16. constipation
17. fainting
18. heartburn
23. nosebleed
24. pallor
25. rash
26. sore glands
27. sore throat
28. tiredness
29. blurred vision
30. loss of appetite
31. sexual dysfunction
32. irregular menses
33. sleep disturbance (describe in comments section)
35. sudden weight gain or loss

which are judged to be of ..... severity

1. mild
2. moderate
3. marked
4. extreme

__ is reported,

1. None of these
2. Drug dependency
3. Narcotic dependency
4. Psychedelic drug use
5. Stimulant drug abuse
6. Hypnotic drug use
7. Tobacco use
8. Cough medicine abuse
9. Prescribed medication abuse
10. Alcohol dependency

and seems to be of ..... significance.

1. no
2. some
3. moderate
4. extreme

Narrative On Physical Status and Disease: .....

.....

.....

.....

2. Motor Aspects of Behavior

Motor activity revealed a.....manner.

1. unremarkable
2. spontaneous
3. relaxed
4. organized
5. efficient
6. coordinated
7. uncoordinated
8. awkward
9. gesticulating

During the interview.....were noted,

1. none of these
2. sobbing
3. tears
4. laughing
5. compulsive acts
6. scratching
7. tremulous
8. motor retardation
9. drooling
10. purposeless movement
11. overacting

and ..... were also clinically apparent

1. none of these
2. motor signs of tension
3. manic activity
4. hypomanic activity
5. restlessness
6. being unable to sit still
7. pacing
8. excitement
9. being physically assaultive
12. picking at nose
13. mannerisms and posturing
14. lics
15. lack of self-control
16. echopraxia
17. stereotyped motor activity
18. posturing
19. waxy flexibility
20. catatonic rigidity
21. stupor
22. touching others

10. picking at skin
11. picking at hair

The patient spoke with a.....voice.

1. unremarkable
2. shouting
3. whispering
4. high-pitched
5. low-pitched
6. variable pitched
7. pleasant
8. loud
9. wealc
10. quavering
11. whining
12. monotone

3. Expressive Mannerisms

The following were also noted:

.....apologetic cough
.....intimate talk
.....shouting
.....use of big words
.....use of technical words
.....use of vulgar words
.....euphemisms
.....repetitive phrases

4. Attitude During the Interview

The patient established..... contact with the interviewer,

1. excellent
2. good
3. fair
4. poor

and appears to be .....informant

1. a reliable
2. an unreliable

The interviewer found it ..... to empathize with the patient.

.....easy
.....difficult

The patient appeared to perceive the interviewer as:

.....friendly
.....interested

.....hostile ..... uninterested

.....Intrusive

The patient's behaviour seemed..... for the occasion.

1. unremarkable
2. appropriate
3. inappropriate

The patient appeared .....

1. manipulative
2. uncooperative
3. cooperative
4. warm
5. frank
6. charming
7. sincere
8. capable
9. conscientious
10. responsible
11. reliable
12. dependable
13. accessible
14. alert
15. trusting
16. enthusiastic
17. outgoing
18. lacking in perseverance
19. curious
20. creative
21. dignified
22. compliant
23. passive
24. obsequious
25. passive-dependent
26. clinging
27. suggestible
28. aloof
29. superior
30. domineering
31. evasive
32. boastful
33. pedantic
34. ambivalent
35. unpredictable
36. impulsive

as well as __ .

1. asocial
2. intellectually provocative
3. guarded
17. inaccessible
18. aggressive
19. arrogant
20. verbally assaultive

4. suspicious
5. resentful
6. hostile
7. sullen
8. complaining
9. demanding
10. critical
11. fussy
12. fastidious
13. opinionated
14. stubborn
15. mischievous
16. negativistic
21. panicky
22. antisocial
23. destructive
24. withdrawn
25. bizarre
26. bewildered
27. preoccupied
28. seductive
29. eccentric
30. ritualistic
31. exhibitionistic
32. dramatic

II. SENSORIUM AND INTELLECT

1. Level of Consciousness

The patient exhibited:

— no cloudiness
__ continuous cloudiness of the sensorium
__ fluctuating cloudiness of the sensorium
— minimal cloudiness of the sensorium
— moderate cloudiness of the sensorium
— severe cloudiness of the sensorium
— fugue
— dream state

2. Orientation

The pattent is ..... .

1. not disoriented
2. disoriented for time
4. disoriented for self
5. disoriented for another person

3. disoriented for place
6. disoriented for present situation

3. Attention and Concentration

Attention is __

1. unimpaired
2. slightly impaired
3. moderately impaired
4. severely impaired

and concentration is .....

1. unimpaired
2. slightly impaired
3. moderately impaired
4. severely impaired

4. Memory

1. Memory is intact
2. There is general impairment of memory for recent events
3. There is general impairment of memory for remote events
4. There is circumscribed impairment of memory for remote events
5. Impairment of immediate recall is noted
6. Confabulation was apparent

5. General Intellectual Evaluation

Intelligence is estimated as __ .

1. very superior
2. superior
3. bright normal
4. normal
5. dull normal
6. mentally detective
7. scattered

6. Insight and Judgment

1. Interviewer was unable to evaluate insight into the fact of illness.
2. Patient has good insight into the fact of illness - perhaps satisfactory for the purpose of insight psychotherapy.
3. Patient has very little insight into the fact of illness.

4. Patient has no insight into the fact of illness and denies illness or personal problems.

5. Patient seems inclined to intellectualize the problem of illness.

6. poor

7. unrealistic

5. impaired in sexual relations

Judgment seemed.....

1. intact
2. impaired in social relations
3. impaired in financial matters
4. impaired in family relations
5. impaired in sexual relations
6. poor
7. unrealistic

III. THOUGHT PROCESS

1. Production of Thought

Rate of flow was:

.....accelerated ..... normal

.....retarded

There was evidence for:

.....pressured speech ..... blocking

.....flight of ideas ..... retardation

2. Continuity of Thought

The patient's thought was:

..... circumstantial ..... loose associations

..... tangential ..... vague

..... loss of goal directed thought ..... neologisms

..... clang association

..... irrelevant ..... stereotyped

..... incoherent ..... perseverations

IV. कंटेंट

1. Relationship to Reality

Thought content revealed .....

1. no other abnormalities
2. loose associations
3. clang associations
4. echolalia
5. confabulation
6. blocking
7. circumstantiality
8. flight of ideas
9. perseveration
10. tangentiality
11. silliness
12. incorrect conclusions
13. religiousity
14. ideas of worth-lessness
15. ideas of guilt
16. poverty of content
17. paleologic
18. punning
19. rhyming
20. word salad
21. lack of meaning
22. ennui
23. boredom
24. ideas of unreality
25. incoherence
26. thought stereotype
27. repetitive phrases
28. ideas of omniscience
29. ideas of omnipotence

— impairment in reality testing.

1. No
2. Mild
3. Moderate
4. Severe
5. Extremely severe

Delusions .....were noted,

1. Absent
2. of solf doprecinlion
3. that others are
8. of references
9. of a religious nature
10. of sexual identity

	efficiently being	11.	of infidelity
	helpful	12.	of approacheing death
4.	of distorted body image	13.	of nihilism-absence of body parts
5.	of grandeur	14.	of nihilism - not living
6.	of persecution	15.	of zoanthropic nature
7.	of poverty	16.	of hypochoadriacal nature

and these are verbally expressed .....

1.	infrequently	3.	frequently
2.	often	4.	constantly

These delusions seem.......

1.	systematized	3.	encapsulated
2.	not systematized		

ldeas of .... were noted.

1.	no paranoid ideation	3.	reference
2.	influence of thought	4.	persecution

2. Concept Formation/Symbolization

Patient seems to have a.................. self-concept.

1.	no evaluation	4.	moderately unrealistic
2.	realistic	5.	severely unrealistic
3.	slightly unrealistic		

Feelings of .... ar present,

1. superiority
2. inferiority

and patient.................him/herself.

1.	overevaluates	3.	underevaluates
2.	is inclined to underevaluate		

............of blame is apparent.

1. Projection
2. Introjection

Patient's abstract thinking is.....

..... normal
..... moderately impaired
..... slightly impaired
..... severely impaired

There is evidence for:

..... autistic thinking
..... impaired sense of conscience
..... concrete thinking

3. Characteristic, Topics or Issues

.....

.....

.....

4. Morbid Preoccupations

Hypochondriasis is focused on functions.

1. absent
2. gastrointestinal system
3. cardiovascular system
4. cutaneous system
5. genito-urinary system
6 respiratory system
7. musculo-skeletal system
8. sight
9. hearing
10. taste
11. smell

1. Suicial ideation was nonexistent
2. Fleeing suicided ideation seemed apparent.
3. Patient seemed preoccupied with suicided ideas.
4. Suicidal ideation was present and accompanied by gestures.
5. Patient has strong suicidal intent.
6. Patient has attempted suicide.
7. Patient is preoccupied with dying.

..... was also present.

1. Phobias
2. Obsessions
3. Compulsions
4. Self-condemitation
5. Other

5. Values and Ideals

There is.....impairment in goal-directed behavior,

1. no information
2. no
3. mild
4. moderate
5. severe

with.....disturbance in goal selection,

1. mind
2. moderate
3. severe

and.....impairment in attainment of goals.

1. mild
2. moderate
3. severe

Moral/ethical standards appeared:

.....high .....low

Patient appears:

.....idealistic .....values absent

.....high values

V. PERCEPTUAL DISTURBANCES

..... was/were reported.

1. No perceptual distortions
2. Anesthesia
3. Paresthesia
4. Misidentification
7. Depersonalization
8. Derealization
9. Distortion
10. Visual illusions
11. Auditory illusions
12. Olfactory illusions
13. Tactile illusions
14. Synesthesia
15. Time appearing to pass rapidly
16. Time appearing to pass slowly
17. Hypnagogic hallucinations
18. Hypnopompic hallucinations

VI. EMOTIONAL REGULATION

1. Subjective Evidence (patient's words)

.....

.....

.....

.....

2. Objective Evidence (Interviewer's observations)

..... dilated pupils	.....sweaty pulms
flushed face	glaring
	restlessness
	other

The predominant effect exhibited during the interview was one of ....

1. no predominant affect	14. anger and hostility
2. ambivalence	15. phobias
3. blandness	16. bitterness
4. panic	17. la belle indifference
5. depression	18. indifference
6. guilt feelings	19. contentment
7. hopelessness	20. elation
8. unworthiness	21. euphoria
9. shamefulness	22. grandiosity
10. loneliness	23. friendliness
11. disappointment	24. emotional withdrawal
12. frustration	25. flatness
13. helplessness	26. shallowness

This seemed.....

1. appropriate 2. inappropriate

and.....

1. consistent 3. labile

2. variable

In addition the patient's affective status also contained elements of feeling.....

1. unremarkable
2. ambivalent
3. bland
4. no self-confidence
5. apathetic
6. anhedonic
7. anxious
8. fearful
9. panicky
10. depressed
11. guilty
12. hopeless
13. brooding
14. bitter
15. labelle indifference
16. indifferent
17. contented
18. elated
19. euphoric
20. friendly
21. euphoria

3. Ambivalence:

..... Present ..... Absent

Object : .....

.....

4. Feelings of Derealization:

.....Present .....Absent

Circumstances: : .....

.....

5. Voilation:

..... High energy ..... Absence of will

..... Low energy ..... Spontaneous

..... Positive will ..... Not spontaneous

3.8 सारांश

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक व्यवहारिक शाखा है। नैदानिक मनोवैज्ञानिक द्वारा मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन एवं निदान के लिए विभिन्न विधियों का उपयोग वैज्ञानिक तरीके से किया जाता है। वैसे तो मनोविज्ञान में अध्ययन की अनेक विधियाँ है, परन्तु नैदानिक मनोविज्ञान में व्यक्ति एवं उसकी मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन के लिए मुख्यत: मनोवैज्ञानिक अथवा नैदानिक आंकलन विधि, नैदानिक साक्षात्कार विधि एवं व्यक्ति इतिहास विधि का उपयोग किया जाता है।

नैदानिक आंकलन विधि एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनोविज्ञान को व्यक्ति की समस्या को समझने की कोशिश करने एवं निर्णय लेने में सहायता होती है। नैदानिक आंकलन को समस्या समाधान के लिए प्रयुक्त करने की प्रक्रिया हेतु चार भागों में विभक्त करते हैं, ये हैं, आंकलन की योजना बनाना, प्रदत्त संग्रह करना, आंकलन द्वारा एकत्र किए गए प्रदत्त का प्रसंस्करण करना तथा आंकलन से प्राप्त परिणामों को संप्रेषित करना। आंकलन से विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का भी उपयोग किया जाता है, जैसे बुद्धि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण इत्यादि।

नैदानिक समस्या समाधान के लिए नैदानिक साक्षात्कार विधि का भी उपयोग सामान्यत: किया जाता है। इसके मुख्य प्रकारों में intake interview, case history interview एवं diagnostic interview मुख्य है।

नैदानिक समस्या समाधान में मानसिक अवस्था परीक्षण के द्वारा व्यक्ति के बारे में समग्र जानकारी प्राप्त की जाती है। इसके अंतर्गत सामान्य व्यवहार, चेतना, वाणी एवं सोच, प्रत्यक्षन, व्यक्ति का व्यक्ति, स्थान एवं समय का अभिमुखीकरण, याददास्त, ध्यान एवं एकाग्रता, बुद्धि, सूझ एवं उच्च मानसिक ज्ञानात्मक कार्यक्षमता प्रमुख है। नैदानिक समस्या की जानकारी, समझ एवं समाधान की दिशा में नैदानिक मनोविज्ञान की समस्त विधियों का उपयोग किया जाता है।

3.9 स्व जाँच एवं अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. i) गलत
   ii) सही
   iii) सही
   iv) गलत
   v) सही
2. i) अवस्था
   ii) संप्रेषित
   iii) वर्गीकरण
   iv) प्रदत्त संग्रह
   v) चुनौतीपूर्ण
2. i) व्यक्ति की समस्या के स्वरूप को समझना।

ii) मनोसामाजिक साक्षात्कार भी कहा जाता है।

iii) निदान साक्षात्कार कहते हैं।

iv) प्रक्रम चरण है।

v) सारे दस्तावेजों का उपयोग किया जाता है।

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. नैदानिक मनोविज्ञान की विभिन्न विधियों की चर्चा करें। नैदानिक साक्षात्कार के विभिन्न चरणों का वर्णन करें।
2. नैदानिक आंकलन से क्या समझते हैं? नैदानिक आंकलन के विभिन्न प्रक्रियाओं की व्याख्या करें।
3. एक अवसाद समस्या से ग्रस्त व्यक्ति का काल्पनिक मानसिक अवस्था परीक्षण ब्यौरा तैयार करें।

3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

- Sattler, J.M. (1988). Assessment of Children (3rd Edi.), San Diego: Jerome M. Sattor Publisher.
- Sundberg and Tyler (1962). Clinical Psychology, New York Appleton, Century-Crofts.
- Green (1981). A Primer of testing, American Psychologist, Vol. 36(10).
- Wiggins J.S. (1973). Personality and Prediction: Principles of Personality Assessment, Addison-Wesley.
- Ownby (1992). Clinician Guide to Neuropsychological Assessment, Psychology Press.
- Backland and Lundwall (1975) Dropping out of treatment, a critical review, Psychological Bullletin5.
- Othemer and Othemer (1994). The clinical Interview, using DSM IV. American Psychiatric Press.
- Meldman. M.J., Me Farland, G and Johnson, E (1976). The problem oriented psychiatric index and treatment plans. St. Louis CV Mosby Co.
- Sheldon J. Korchin (2004). Modern clinical Psychology, Principles and Intervention in the clinic and community. CBS Publishers and Distributors Pvt. Ltd.

- Jeffery E. Heckor and Geoffery L. Thorpe (2012) Introduction to clinical psychology, Science, Practice and Ethics. Pearson Education Inc.
- Meldman, M.J.Me Farland, G nd Johnson E. (1976). The problem oriented psychiatric index and treatment plans, A. Locis CV. Mosby Co.
- W. Russell Johnson (1981). Clinicl Practice of Psychology. A Guide for mental health professionals,Pergamon Press, N.Y.

इकाई - 4

नैदानिक वर्गीकरण, DSM-IV वर्गीकरण तथा असामान्यता का वर्गीकरण

Diagnosis classification, DSM-IV: classification of abnormality

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 असामान्य व्यवहारों का नैदानिक वर्गीकरण

4.4 अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण तंत्र

4.5 DSM-IV का विवरण

4.6 DSM-IV की उपयोगिता

4.7 DSM-IV की सीमाएं या दोष

4.8 DSM-IV का मूल्यांकन

4.9 भारतीय वर्गीकरण तंत्र

4.10 सारांश

4.11 प्रश्नोतर

4.12 संदर्भ सूची

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में बताया गया हैं कि असामान्य व्यवहारों का वर्गीकरण जो मनोचिकित्सकों एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का एक मुख्य विषय रहा हैं। यहां वर्गीकरण से तात्पर्य असामान्य व्यवहारों को ऐसी श्रेणियों में विभक्त करने से होता हैं जिनसे उनके स्वरूप को ठीक ढ़ग एवं स्पष्ट रूप से समझा जा सके। श्रेणीकरण की इस प्रविधि को 'निदान' कहा जाता हैं, जब श्रेणीकरण मनोवैज्ञानिक विधियों के द्वारा किया जाता हैं तो इसे 'मनोनिदान' कहा जाता हैं।

पहला वर्गीकरण 1948 में वर्ल्ड हेल्थ संगठन (World Health Organigation-WHO) ने इंटरनेशनल क्लासीफिकेसन ऑफ डिजिजेज (International Classification of diseases-ICD-6)* के छठे संस्करण का प्रकाशन किया गया। जिसकी मान्यता न केवल ब्रिटेन बल्कि अन्य

कई देशों में काफी रही। इस वर्गीकरण के प्रकाशन में अमेरिकन मनोचिकित्सकों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही।

DSM-IV एक नवीन और वैज्ञानिक वर्गीकरण व्यवस्था या तन्त्र हैं जिसमें विभिन्न रोगों के निदान के नियम दिये हुए हैं। इस वर्गीकरण की प्रशंसा में अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त करते हुए इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला हैं वहीं अन्य विद्वानों ने इसकी कमियों या सीमाओं पर प्रकाश डाला हैं। DSM-IV में जहां अनेक विशेषताएं और उपयोग हैं वहीं इसकी कुछ सीमाएं भी हैं। सेलिगमैन एवं रोजेनहान 1998 में इसकी प्रशंसा करते हुए लिखा हैं कि प्रत्येक हालत में DSM-IV आने वाले दशको में नैदानिक बाइबिल के रूप में बना रहेगा।

4.2 उद्देश्य

- असामान्य व्यवहारों के नैदानिक वर्गीकरण को समझ सकेंगे।
- अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण तंत्र को जान सकेंगे।
- DSM-IV के विवरण को समझ सकेंगे।
- DSM-IV की उपयोगिता समझ सकेंगे।
- DSM-IV की सीमाएं या दोष को जान पायेंगे।
- भारतीय वर्गीकरण तंत्र को समझ सकेंगे।

4.3 असामान्य व्यवहारों का नैदानिक वर्गीकरण (Classification of Abnormal Behaviour or Diagnostic Classification)

असामान्य व्यवहारों का वर्गीकरण मनोचिकित्सकों एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का एक मुख्य विषय रहा हैं। यहां वर्गीकरण से तात्पर्य असामान्य व्यवहारों को ऐसी श्रेणियों में विभक्त करने से होता हैं जिनसे उनके स्वरूप को ठीक ढ़ग एवं स्पष्ट रूप से समझा जा सके। श्रेणीकरण की इस प्रविधि को 'निदान' कहा जाता हैं, जब श्रेणीकरण मनोवैज्ञानिक विधियों के द्वारा किया जाता हैं तो इसे 'मनोनिदान' कहा जाता हैं।

क्रेपलिन (Kraepelin,1883) ने मानसिक रोगों की दो प्रमुख श्रेणियां बतायी हैं-1. मनस्ताप तथा 2. मनोविक्षिप्तता। कारणों के आधार पर उसने बताया कि यह रोग दो प्रकार के होते हैं-1. आगिंक तथा 2. प्रकार्यात्मक।

इसी श्रृंखला में मनोवैज्ञानिक सेल्गिमेन एवं रोजेनहान (Seligman&Roseenhen,1998) ने निदान को परिभाषित करते हुए कहा हैं कि ''व्यवहारपरक एवं मनोवैज्ञानिक पैटर्न के अनुसार मनोवैज्ञानिक विकृतियों का श्रेणीकरण ही निदान कहलाता हैं।'' वर्गीकरण या श्रेणीकरण करके हम असामान्य व्यवहार या कुसमायोजित व्यवहारों के स्वरूप, कारणों एवं उपचार के लिए एक योजना बना पाते हैं। असामान्य व्यवहारों के नैदानिक वर्गीकरण तंत्र की आवश्यकता ऐसे तो कई कारणों से होती हैं, परंतु उनमें निम्नांकित पांच कारणों को सबसे अधिक महत्वपूर्ण बतलाया गया हैं–

1. निदान एक संचार न्यूनता प्रदान करता हैं

निदान से मानसिक रोगों के बारे में सही ढ़ंग से संचार कम शब्दों में किया जाना संभव हो पाता हैं। ऐसा देखा गया हैं कि मानसिक रोगी में कई तरह के लक्षण दिखाई देते हैं। उदाहरणस्वरूप- कोई ऐसा मानसिक रोगी हो सकता हैं जो अपने विचारों को ठीक ढ़ग से व्यक्त नहीं कर सकता हैं, प्रायः उसे यह अनुभव हो जाता हैं कि लोग उससे कुछ-न-कुछ लेने की कोशिश करते हैं, कार्य में मन नहीं लगता हैं, हमेशा तनावग्रस्त महसूस करता हो, तथा उसमें दृष्टि विभ्रम (visual hallucination) हो। ऐसा भी हो सकता हैं कि व्यक्ति इनमें से प्रत्येक लक्षण से एक साथ प्रभावित हो। निदानशास्त्री (diagnostician) इन सभी लक्षणों की सूची को याद न रखकर इस संलक्षण (syndrome) को एक शब्द में निदान कर सकते हैं-व्यामोही मनोविदलता (Paronoid schizophrenia) ।

2. निदान उपचार के बारे में कुछ सूचना देता हैं-

मनोवैज्ञानिक रोग के लिए कई तरह की उपचार विधियाँ उपलब्ध हैं तथा उसमें से कुछ ऐसे हैं जो खास विकृतियों के लिए अधिक लाभदायक हैं। निदान निदानशास्त्री को विशेष तरह के मानसिक रोग के लिये उपयोगी उपचार विधियों पर ही अपना ध्यान देने के लिए बाध्य करता हैं। जैसे, व्यामोही मनोविदलता रोगी का उपचार शाब्दिक मनोचिकित्सा से नहीं और न ही वेलयिम से संभव हैं। परन्तु इसका रोगी प्रायः एक विशेष औषध अर्थात् क्लोरप्रोमाजीन से आसानी से ठीक किये जा सकते हैं। तब एक अच्छा निदान निश्चित रूप से एक ऐसा उपचार विधि का सुझाव देता हैं। जिसे उपचार अधिक प्रभावी हो सके।

3. निदान से रोग के कारण के बारे में सूचना मिलती हैं-

व्यक्ति में रोग बहुत से कारणों से उत्पन्न होते हैं परंतु कुछ रोग या मानसिक समस्याएँ ऐसी होती हैं जो विशेष तरह के कारण से संबद्ध अधिक होते हैं। उदाहरणस्वरूप, मनोगतिकी सिद्धांतवादियों का मत हैं कि व्यक्ति में दुश्चिंता का आंशिक कारण दमित इच्छाएं एवं मानसिक संघर्ष हैं। निदान जान लेने के पश्चात् उसके पीछे कारणों के बारे में जाना जा सकता हैं।

4. निदान से वैज्ञानिक अनुसंधान में मदद मिलती हैं

मनोवैज्ञानिक निदान का मुख्य कारण शायद नैदानिक न होकर वैज्ञानिक होता हैं। समान लक्षणों वाले व्यक्तियों को एक साथ समूहन करके अनुसंधानकर्ताओं एवं शोधकर्ताओं को निदान यह सीखने का सुनहरा अवसर प्रदान करता हैं कि करण एवं उपचार के ख्याल से उन लक्षणों में उभयनिष्ठ वस्तु विशेष क्या हैं? सचमुच में विकासशील विज्ञान के लिए निदान का यह एक अति महत्वपूर्ण कार्य हैं।

5. निदान तीसरी पार्टी के भुगतान में मदद करता हैं-

अक्सर देखा गया हैं कि मनोवैज्ञानिक रोगों के उपचार एवं देखभाल में होने वाले खर्च का आंशिक या पूर्णरूप से वहन तीसरी पार्टी अर्थात् बीमा कम्पनी या मेडिकल संस्थान कभी-कभी करते हैं। यह बात भारत में कम पर विदेशों में अधिक देखने को मिलती हैं। ऐसी परिस्थिति में ऐसी कम्पनियों को रोगी के निदान की जरूरत पड़ती हैं। ताकि वह समझ सके

कि रोगी को सचमुच में देखरेख की जरूरत हैं तथा कभी-कभी देखरेख की गुणवता की भी जांच करनी होती हैं। इस तरह से निदान मनोवैज्ञानिक उपचार के अर्थशास्त्र के लिये आवश्यक हैं।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि असामान्यता का वर्गीकरण लक्षणों की भिन्नता के आधार पर किया जाता हैं अथवा असामान्यता कि तीव्रता के आधार पर किया जाता हैं। अतः यह कहा जा सकता हैं कि असामान्य व्यवहार के नैदानिक वर्गीकरण की अत्यन्त आवश्यकता हैं।

असामान्य व्यवहारों के वर्गीकरण के लिये अब तक जो भी प्रयास किये गये हैं, उन्हें मूलतः निम्नांकित दो श्रेणियों में बांटा जा सकता हैं-

1. अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण तंत्र
2. भारतीय वर्गीकरण तंत्र

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने असामान्यता के वर्गीकरण में दोनों दृष्टिकोणों को अपनाया हैं। इन दोनों का वर्गीकरण व्याख्या निम्नांकित हैं।

4.4 अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण तंत्र (International Classification of Diseases-ICD&DSM)

कुसमायोजित व्यवहारों या असामान्य व्यवहारों को वर्गीकृत करने का प्रयास काफी पुराना हैं। पेरिस में 1889 कॉनफ्रेन्स आफ मेंटल साइंस (Conference of Mental Science) ने एक एकाकी वर्गीकरण प्रस्तुत किया परंतु इसके उपयोग कई कारणों से बहुत लोकप्रिय नहीं पाया। इसके पश्चात् 1913 अमेरिकन मनोश्चिकित्सीय संघ (American Psychiatric Association) द्वारा एक नया वर्गीकरण तंत्र अपनाया गया। सचमुच में क्रेपलिन जो एक जर्मन मनोचिकित्सक थे, को श्रेणीबद्ध वर्गीकरण तंत्र का जनक माना जाता हैं| उन्होंने एक ऐसे वर्गीकरण तंत्र का सुझाव दिया था जिसमें मानसिक रोगों का एक अस्पष्ट आंगिक स्वरूप का उल्लेख था। परंतु क्रेपलिन के प्रयासों से एक ऐसा वर्गीकरण तंत्र बनाने में सफलता नहीं मिल पायी जिसका सार्वत्रिक स्वागत हुआ हो फिर भी क्रेपलिन का प्रभाव आधुनिक वर्गीकरण तंत्र पर निश्चित रूप से आज भी काफी हैं।

इस प्रकार मानसिक रोगों का वर्गीकरण अलग-अलग विद्वानों ने अपने-अपने ढ़ंग से किया हैं। व्यक्तिगत स्तर के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानसिक रोगों के मुख्यतः दो वर्गीकरण का प्रचलन हैं, जो निम्नांकित हैं-

1. रोगों का अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण (International Classification of Diseases-ICD)
2. मानसिक विकृतियों की नैदानिक और सैद्धांतिक विवरणिका (Diagnostic and Statistical Mannual of Mental disorders-DSM)

पहला वर्गीकरण 1948 में 'वर्ल्ड हेल्थ संगठन (World Health Organigation-WHO)' ने 'इंटरनेशनल क्लासीफिकेसन आफ डिजिजेज (International Classification of diseases-ICD-6)' के छठे संस्करण का प्रकाशन किया गया। जिसकी मान्यता न केवल ब्रिटेन बल्कि अन्य कई देशों में काफी रही। इस वर्गीकरण के प्रकाशन में अमेरिकन मनोचिकित्सकों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही।

ICD-6 के प्रकाशन के तुरंत पश्चात् अमेरिकन मनश्चिकित्सक संघ ने तुलनात्मक रूप से अधिक प्रभावी वर्गीकरण का प्रकाशन किया। जिसे डायग्नोस्टिक एण्ड स्टैटस्टिकल मैनअल ऑफ मेंटल डिसआर्डर (Diagnostic and Statistical Manual-DSM-I) कहा गया। फिर इसका दूसरा संशोधित प्रारूप 1968 में प्रकाशित किया गया। जिसे DSM-II कहा गया। फिर पुनः 1980 में DSM-III का प्रकाशन किया गया।

इस प्रकार इन दोनों वर्गीकरणों का विश्लेषण तथा अध्ययन किया जाए तो निम्न प्रकार के प्रमुख तथ्य सामने आते हैं-

- ICD और DSM दोनों ही वर्गीकरण अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनोश्चिकित्सकों द्वारा उपयोग में लाए जा रहे हैं। इन दोनों प्रकार के वर्गीकरण में न केवल विभिन्न रोगों का वर्गीकरण हैं बल्कि रोगों के निदान के विवरण और नियमों की जानकारी भी दी हुई हैं। ICD वर्गीकरण का उपयोग जहां विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा किया जा रहा हैं। वही DSM वर्गीकरण भी विश्व के अधिकांश मनोश्चिकित्सकों द्वारा उपयोग में लाया जा रहा हैं। यह दोनों वर्गीकरण एक-दूसरे से अधिक भिन्न नहीं हैं।
- मानसिक रोगों के वर्गीकरण का प्रयास विद्वानों द्वारा प्राचीन काल से किया जा रहा हैं। मानसिक रोगों के वर्गीकरण के इतिहास को यदि देखा जाए तो यह हजारों साल पुराना हैं और हर देश में मानसिक रोगों के वर्गीकरण का इतिहास अलग-अलग रहा हैं। भारतवर्ष में मानसिक रोगों का वर्गीकरण का विवरण वेदों में मिलता हैं। आयुर्वेद के क्षेत्र में चरक के विचार प्राचीन और मौलिक माने जाते हैं। चरक ने रोगों के वर्गीकरण का ब्यौरा दिया हैं।
- सन् 1889 में पेरिस में मानसिक विज्ञान पर एक संगोष्ठी आयोजित की गयी। इसमें एकाकी वर्गीकरण व्यवस्था का प्रतिपादन किया गया। सन् 1889 से अब तक अनेक वर्गीकरण विकसित देशों द्वारा प्रतिपादित एवं संशोधित किये गये। सन् 1913 में अमेरिकन मनोचिकित्सीय संघ ने एक नये मानसिक रोगों का वर्गीकरण को प्रस्तुत किया। जिसमें क्रेपलिन के विचारों को महत्व दिया गया। यह जर्मनी के मनोचिकित्सक थे जिन्होनें 1883 में एक श्रेणीबद्ध वर्गीकरण तंत्र प्रस्तुत किया था। जिसमें मानसिक रोगों का वैज्ञानिक वर्गीकरण था।
- सन् 1948 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने रोगों के अंतरराष्ट्रीय वर्गीकरण ICD-6 का प्रकाशन करवाया। इसमें मानसिक रोगों का एक ही औपचारिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया, जिसकी मान्यता विकसित देशों द्वारा दी गयी।
- सन् 1952 में अमेरिकन मनोचिकित्सक संघ ने मानसिक रोगों का एक प्रभावकारी DSM का प्रकाशित कराया, जो बाद में DSM-1 के नाम से जाना गया। सन् 1968 में DSM-I का संशोधित रूप प्रकाशित हुआ फिर DSM-II का संशोधित रूप प्रकाशित कराया गया जिसे DSM-III का कहा गया। DSM-III के प्रकाशन की जो समिति थी इस समिति के अध्यक्ष अमेरिका के प्रसिद्ध मनोचिकित्सक रोबर्ट स्पीजर थे।

- सन् 1999 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने ICD-9 का प्रकाशन कराया जिसमें दैहिक एवं मानसिक रोगों का संशोधित वर्गीकरण था। ICD- 9 और DSM-III में अन्तर थे, इन अन्तरों या अवरोधों को दूर करने के लिये मनोचिकित्सकों ने विशेष प्रयास किये।
- DSM-III की विसंगताओं को दूर करते हुए DSM-III-R का प्रकाशन सन् 1987 में हुआ। इसी से ICD-9 का संशोधित संस्करण का प्रकाशन सन्1993 में हुआ जिसे ICD-10 के नाम से जाना जाता हैं। यह वर्गीकरण आज भी प्रचलित हैं। DSM-III-R का संशोधन व प्रकाशन पुनः सन् 1994 में हुआ। जिसे DSM-IV के नाम से जाना जाता हैं।
- DSM-IV एक नवीन और वैज्ञानिक वर्गीकरण व्यवस्था या तन्त्र हैं जिसमें विभिन्न रोगों के निदान के नियम दिये हुए हैं। इस वर्गीकरण की प्रशंसा में अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त करते हुए इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला हैं वहीं अन्य विद्वानों ने इसकी कमियों या सीमाओं पर प्रकाश डाला हैं।
- DSM-IV में मानसिक रोगों का वर्गीकरण बहुआयामीय वर्गीकरण तंत्र की सहायता से किया गया हैं। इसमें अलग-अलग आयाम एवं विमाएं हैं इन पांच अलग आयामों या विमाओं में से दो आयामों में मानसिक रोगों के वर्गीकरण को प्रस्तुत किया गया हैं। इन पाँचों आयामों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया हैं। जो निम्नांकित हैं-

आयाम – 1 (Axis-I) –

इस आयाम में व्यक्तित्व विकृतियों और मानसिक दुर्बलता के अतिरिक्त विकृतियों को रखा गया हैं। इस आयाम में 16 मुख्य मानसिक रोगों के वर्गों का वितरण हैं, प्रत्येक वर्ग में अनेक मानसिक रोग का विवरण हैं।

आयाम- 2 (Axis-2) –

इस आयाम में व्यक्तित्व विकृतियों और मानसिक मन्दन को रखा गया हैं। लेकिन इसमें जो व्यक्तित्व विकृतियाँ हैं वह मुख्य रूप से बाल्यावस्था और किशोरावस्था से संबंधित हैं।

आयाम- 3 (Axis-3) –

इस आयाम में मानसिक रोगों की उत्पति में सहायक चिकित्सीय समस्याओं का वर्णन किया गया हैं।

आयाम- 4 (Axis-4) –

इस आयाम में उन कारकों का वर्णन हैं जो विगत वर्षों में व्यक्ति के लिए समस्या के स्त्रोत रहे हैं। इसमें मनोसामाजिक और वातावरण संबंधी समस्याओं का वर्णन हैं।

आयाम- 5 (Axis-5) –

इस आयाम में व्यक्ति के क्रियाकलापों का सार्वभौमिक मूल्यांकन का वर्णन हैं।

4.5 DSM-IV का विवरण (Description of DSM-IV)

1. प्रथम आयाम

इस आयाम में व्यक्तिगत में व्यक्तित्व विकृतियों और मानसिक मन्दन के अतिरिक्त 16 विकृतियों को रखा गया है। दूसरे शब्दों में विकृतियों से सम्बन्धित 16 मानसिक रोगों के

वर्गों का वर्णन इस आयाम में किया गया हैं। इस आयाम में कुछ ऐसी रोग अवस्थाओं का वर्णन है जिन्हे रोग का नाम नहीं दिया जा सकता है। फिर भी ऐसी रोग अवस्थाओं में व्यक्ति को रोग के उपचार की आवश्यकता होती है। इस आयाम से सम्बन्धित रोगों का नामकरण और वर्गीकरण निम्न प्रकार से है-

1. **शैशवावस्था - बचपन या किशोरावस्था में प्रायः प्रथम बार निदान की गई विकृतियाँ-**

इस श्रेणी के अन्दर वह मानसिक विकार आते है जो शैशवावस्था या बाल्यावस्था या किशोरावस्था में सर्वप्रथम निदान किये जाते है या पहचाने जाते है। यह रोग सम्बन्धित बालक या किशोर के समायोजन को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते है। इन विकृतियों के अन्तर्गत अधिगम **विकृतियाँ** जैसे- पढ़ने/लिखने/गणित आदि से सम्बन्धित **विकृतियाँ**, गति सम्बन्धी **विकृतियाँ**, सम्प्रेषण **विकृतियाँ**, मल-मूत्र त्याग सम्बन्धी दोष, ध्यान की कमी से सम्बन्धित **विकृतियाँ**, भोजन खिलाने सम्बन्धी शैशवकालीन और बचपन की **विकृतियाँ** और शैशवकालीन आत्म विमोह इत्यादि प्रमुख।

2. **समायोजन विकृतियाँ -**

इस श्रेणी में उन मानसिक रोगों को रखा गया हैं जिसमें जीवन के मुख्य प्रतिबलों के कारण व्यक्ति में संवेगात्मक और व्यवहारात्मक लक्षण उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिये समायोजनात्मक विकृति चिन्ता के साथ, समायोजनात्मक विकृति विषादात्मक मूड के साथ, समायोजनात्मक विकृति, आचरण की विकृति के साथ, संवेगात्मक और आचरण से सम्बन्धित दोष इत्यादि प्रमुख है।

3. **आवेग नियंत्रण विकृतियाँ -**

इस श्रेणी में वह मानसिक रोग रखे गये हैं जिनमें व्यक्ति बीच-बीच में व्यक्ति अत्यधिक उत्तेजित हो जाता है अर्थात् आन्तरिक विस्फोट **विकृतियाँ**, जैसे- चोरी का बाध्यात्मक व्यवहार, बाध्यात्मक रूप से जुआ खेलना आदि रोगों का वर्णन है, जो व्यक्ति में तब उत्पन्न होते हैं जब वह अपने पर नियन्त्रण नहीं रख पाता है।

4. **चिंता विकृतियाँ -**

इस श्रेणी में वह मानसिक रोग आते है जिसमें चिन्ता के किसी रूप के कारण व्यक्ति में क्षुब्धता उत्पन्न होती है इस वर्ग में असंगत भय मनोग्रस्त बाध्यता विकृति, सामान्यीकृत विकृति, चिंता विकार, आघात के उपरान्त प्रतिबल विकृति, अतितीव्र प्रतिबल विकृति, किसी साधारण चिकित्सीय दशा से उत्पन्न चिंता विकृति, मादक द्रव्यों से उत्पन्न चिंता विकार आदि को रखा गया है। इस प्रकार की चिंता विकृतियों में, अत्यधिक चिंता, दिशाहीन चिंता, असंगत भय, विचारों और कार्यों को बारबार दोहराना, तनाव और प्रतिबल आदि मुख्य लक्षण है।

5. **मनोविच्छेदी विकृति -**

इस श्रेणी में वह मानसिक रोग आते है जिनका मुख्य लक्षण मनोवैज्ञानिक विच्छेदन है, मनोवैज्ञानिक विच्छेदन के कारण व्यक्ति का चेतन मन एकाएक परिवर्तित हो जाता है

जिससे व्यक्ति की स्मृति और पहचान प्रभावित होती है। इस वर्ग के अंतर्गत मनोविच्छेदी स्मृतिलोप, मनोविच्छेदी आत्मविस्मृति, बहुआयामी व्यक्तित्व, व्यक्तित्वलोप विकृति, मनोविच्छेदी पहचान विकृति आदि रोग आते है। इस वर्ग के लोगों में चेतना का ह्रास, स्मरण का ह्रास, स्वयं को भूल जाना, घर से दूर चले जाना जैसे लक्षण इस वर्ग के रोगियों में होते है।

6. शारीरिक लक्षणों से युक्त विकृतियाँ-

इस श्रेणी में वह मानसिक रोग रखे जाते हैं जिनमें शारीरिक लक्षण विद्यमान होते हैं। लेकिन इन शारीरिक लक्षणों का कोई कारण नहीं होता हैं, इन विकृतियों से ग्रस्त लोगों में शारीरिक रोग उत्पन्न होने की चिंता लगातार बनी रहती हैं। व्यक्ति में साधारण या कल्पित **विकृतियाँ** या रोगों को लेकर रोगी तनावग्रस्त और चिन्तित रहता हैं। इसके अंतर्गत कनवर्जन हिस्टीरिया, शरीरगत विकृति आदि रोग आते हैं।

7. मनोविदलिता एवं अन्य मनोविक्षिप्तीय विकृतियाँ-

इस वर्ग के अंतर्गत उन मानसिक रोगों को रखा गया हैं, जैसे मनोविदलिता, स्थिर व्यामोह विकृति, लघु मनोविक्षिप्त विकृति आदि। इस प्रकार के मानसिक रोगियों में वास्तविकता को परखने की क्षमता, तर्कपूर्ण चिन्तन, सहजता, बोलने और व्यवहार करने की क्षमता आदि से संबंधित**विकृतियाँ** पायी जाती हैं। इनमें व्यामोह चरम सीमा पर होते हैं तथा इन रोगियों में संज्ञानीय **विकृतियाँ** भी पायी जाती हैं।

8. मनःस्थिति विकृतियाँ -

इस वर्ग के अंतर्गत वह रोगी रखे जाते हैं जिनमें मनःस्थिति से संबंधित उतारचढ़ाव संबंधित **विकृतियाँ** पायी जाती हैं। इस वर्ग के अंतर्गत उत्साद के रोगी, विषाद के रोगी, उत्साद-विषाद मनोविक्षिप्तता के रोगी आते हैं। उत्साद की दशा में रोगी में अत्यधिक सुख, क्रियाशीलता उत्तेजना और थोड़ी-सी बात पर क्रोधित होने जैसे लक्षण पाये जाते हैं जबकि विषाद के रोगी में अत्यधिक दु:ख, ग्लानि, उदासी और भाग्यहीन समझने जैसे लक्षण पाये जाते हैं। उत्साह-विषाद के रोगियों में कभी उत्साह रोग के तो कभी विषाद रोग के लक्षण पाये जाते हैं।

9. लैंगिक एवं लिंग पहचान संबंधीविकृतियाँ -

इस वर्ग में लिंग व लिंग पहचान से संबंधित विकृतियों का वर्णन हैं। इस वर्ग में जो भी **विकृतियाँ** हैं उन्हें तीन वर्गों में बांटा गया हैं-1.पाराफिलियाज, 2. लैंगिक दुष्क्रिया तथा 3. लिंग पहचान विकृति ।

इस वर्ग के रोगियों के कुछ प्रमुख लक्षण हैं- सैक्स की अधिक इच्छा, सैक्स की कोई इच्छा नहीं, सैक्स से डरना, सैक्स के लिए स्वयं को सक्षम नहीं समझना, सैक्स से घृणा आदि।

10. नींद विकृतियाँ -

इस वर्ग के अंतर्गत उन मानसिक रोगों को रखा जाता हैं जो व्यक्ति की नींद से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए इसमें अनिद्रा रोग आता हैं। इस प्रकार के रोगी का मुख्य लक्षण सही नींद

न आना, नींद में भयानक स्वप्नों का आना और श्वास रूक जाने वाले लक्षण पाये जाते हैं। इस वर्ग के अंतर्गत निद्राविचरण रोग भी आता हैं। साधारण चिकित्सीय दिशाओं के कारण निद्रा जनित **विकृतियाँ** और मादक द्रव्यों के सेवन से सम्बधित निद्राजनित **विकृतियाँ** भी इस वर्ग के अंतर्गत आती हैं। इसमें मुख्यतः दो **विकृतियाँ** आती हैं- Dyssomins and Parusomnis ।

11. भोजन संबंधितविकृतियाँ -

इस वर्ग के मानसिक रोगों के अंतर्गत वे मानसिक **विकृतियाँ** आती है जिनका संबंध व्यक्ति के खाने की आदतों से हैं। इस प्रकार की विकृतियों में मुख्यतः दो प्रकार की **विकृतियाँ** हैं- भोजन त्याग की **विकृतियाँ** तथा अत्यधिक भोजन करने से संबंधित विकृति।

12. साधारण चिकित्सा दशा से उत्पन्न मानसिक विकृतियाँ -

इस वर्ग के अंतर्गत उन मानसिक विकारों को रखा गया हैं जो साधारण चिकित्सा दशा के कारण उत्पन्न होती हैं। इस वर्ग में वह मानसिक रोग या मनोदशा विकृति आते हैं जो व्यक्ति में सामान्य मेडिकल चिकित्सा के कारण उत्पन्न होते हैं। इसमें दो **विकृतियाँ** आती हैं-

1- Catatonic disorder due to general medical condition

2. Personality change due to general medical condition.

13. मादक द्रव्यों के सेवन से संबंधित विकृतियाँ-

इस वर्ग में उन मानसिक रोगों को रखा गया हैं जो एल्कोहाल, अफीम, कोकीन, एम्फीटामाइन्स आदि मादक पदार्थों के अधिक सेवन से उत्पन्न होते हैं। इन रोगों की उत्पत्ति में व्यक्ति का समायोजन असन्तुलित हो जाता हैं, और उसका कार्य निष्पादन भी गड़बड़ हो जाता हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत अनेक **विकृतियाँ** आती हैं- Alcohal Related disorders, Amphetamine disorders, coffcine related disorders, cannabis related disorders, cocaine related disorders, hallucinogen related disorders, nicotin related disorders, oploid related disorders, sedative related disorders.

14. कृत्रिम या नकली विकृतियाँ -

इस वर्ग के अंतर्गत वह मानसिक रोग रखे गये हैं जो व्यक्ति या रोगी जानबूझ कर अभिव्यक्त करता हैं। व्यक्ति इन रोगों को इसलिए अभिव्यक्त करता हैं जिससे दूसरे लोग इनको बीमार समझकर विशेष ध्यान नहीं दें। इसके अन्तर्गत मुख्यतः दो रोग होते हैं-

1. Factitions disorder - मुख्य रूप से मनोवैज्ञानिक लक्षणों के साथ रोग, मुख्य रूप से शारीरिक लक्षणों के साथ रोग, मनोवैज्ञानिक और शारीरिक लक्षणों के साथ होगा।

2. Fictitions disorder- Nos.

15. प्रलाप व मूर्छा, चित्त -विक्षेप, स्मृति ह्रास तथा अन्य संज्ञानीय विकृतियाँ -

इस वर्ग के अंतर्गत मुख्यतः तीन तरह की **विकृतियाँ** आती हैं-1. प्रलाप मूर्छा विकृति- इसे पहले प्रकार की विकृतियों में विषैले पदार्थों के सेवन से उत्पन्न **विकृतियाँ**, मादक द्रव्यों

को छोड़ देने से उत्पन्न प्रलाप व मूर्छा **विकृतियाँ** तथा अन्य विभिन्न कारणों से उत्पन्न प्रलाप व मूर्छा **विकृतियाँ** आती हैं। 2. चित्त विक्षेप **विकृतियाँ** आती हैं। जैसे- एलझराइमर, वेसकुलर डिमेन्शीया, मानसिक आघात से उत्पन्न चित्त विक्षेप, पिक के रोग से उत्पन्न चित्त विक्षेप तथा अन्य कारणों से उत्पन्न चित्त विक्षेप आदि। 3. स्मृति ह्रास **विकृतियाँ** इसके अंतर्गत मुख्य रूप से मादक द्रव्यों से उत्पन्न स्मृति ह्रास विकृतियों सम्बन्धी रोग आते हैं।

16. अन्य अवस्थाएं या दशाएं जिन्हें नैदानिक रूप से ध्यान देने की आवश्यकता हो-

इस वर्ग के अन्तर्गत उन अवस्थाओं को रखा गया हैं जो मानसिक रोग तो नहीं कहलाते हैं फिर भी यह अवस्थाएं व्यक्ति में मानसिक समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। इस वर्ग में प्रमुख दशाएं हैं, जैसे- मेडिकल अवस्था को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक कारक, दवा से प्रभावित गति **विकृतियाँ**, दुरूपयोग या तिरष्कार से संबंधित समस्याएं ।

2. द्वितीय आयाम-

यह आयाम मुख्य रूप से दो मानसिक विकारों को रखा गया हैं, यह वर्ग हैं-1. व्यक्तित्व **विकृतियाँ** और 2. मानसिक मन्दन । यह वह **विकृतियाँ** हैं जो बाल्यावस्था या किशोरावस्था में उत्पन्न होकर प्रौढ़ावस्था तक बनी रहती हैं। पहले इस प्रकार की विकृतियों का मनोचिकित्सकों द्वारा उपेक्षा की जाती थी। यही कारण हैं कि इन्हें आयाम-1 में न रखकर आयाम-2 में रखा गया हैं।

1. व्यक्तित्व विकृतियाँ-

इस वर्ग में वह व्यक्तित्व **विकृतियाँ** रखी गयी हैं जो व्यक्ति में कुसमायोजित नमूनों से संबंधित हैं। मानसिक विकृतियों की इस श्रेणी या वर्ग के अन्तर्गत 10 प्रकार की व्यक्तित्व **विकृतियाँ** रखी गयी हैं, जैसे-1. स्थिर व्यामोही व्यक्तित्व विकृति, 2. सीजोइड व्यक्तित्व विकृति, 3. सीजोटाइप व्यक्तित्व विकृति, 4. समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति, 5. बॉर्डर लाइन व्यक्तित्व विकृति, 6. ऐतिहासिक व्यक्तित्व विकृति, 7. सोन्दर्य व्यक्तित्व विकृति, 8. परिहार व्यक्तित्व विकृति, 9. पराश्रित व्यक्तित्व विकृति, 10. सनक बाध्यता विकृति।

2. मानसिक मंदन या दुर्बलता-

इस वर्ग के अन्तर्गत उन व्यक्तियों को रखा गया हैं जिनमें बुद्धि औसत से कम होती हैं। मानसिक रूप दुर्बल व्यक्तियों में समायोजी व्यवहार का अभाव होता हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत उन मानसिक रोगियों को रखा जाता हैं जिनमें मानसिक दुर्बलता के लक्षण 18 वर्ष से कम आयु में ही विकसित हो जाते हैं। मानसिक दुर्बलता के इस वर्ग के अन्तर्गत पांच प्रकार की मानसिक दुर्बलताएं रखी गयी हैं-1. हल्का मानसिक मंदन- इनकी मानसिक बुद्धिलब्धि 50-70 तक होती हैं।, 2. मध्यम मानसिक मंदन- इनकी बुद्धिलब्धि 35.40 तक होती हैं। 3. गंभीर मानसिक मंदन- इनकी बुद्धिलब्धि 25.35 तक होती हैं। 4. अति गंभीर मानसिक मंदन- इनकी बुद्धिलब्धि 20 के आसपास होती हैं। 5. वह मानसिक मंदन जिसकी गंभीरता अविशिष्ट होती हैं।

3. तृतीय आयाम सामान्य चिकित्सीय दशाएं -

इस तृतीय आयाम में सामान्य चिकित्सीय दशाएं बतायी गयी हैं। मानसिक रोगी होने से पहले वह व्यक्ति किस शारीरिक रोग से ग्रस्त था, जैसे- क्या वह टी.बी., ह्दय रोग, डायबिटिज या अन्य शारीरिक रोगों से पीडित था? अर्थात् उन किन रोगों से पीडित था जो उसके मनोवैज्ञानिक रोगों की उत्पति में सहायक हैं। वर्तमान में व्यक्ति को कौन-कौन से शारीरिक रोग हैं।

4. चतुर्थ आयाम -

इस आयाम में उन समस्याओं का वर्णन किया गया हैं जो मानसिक, सामाजिक या सांस्कृतिक वातावरण से संबंधित होती हैं। इस वर्ग में वह समस्याये आती हैं जो भविष्य से संबंधित होती हैं। जैसे- सेवा निवृति की समस्या, व्यावसायिक समस्याओं , निवास की समस्या, आर्थिक समस्या, शैक्षिक समस्याओं , सामाजिक वातावरण से संबंधित समस्याओं आदि। इन समस्याओं की पहचान से रोगों के निदान में सहायता मिलती हैं तथा इन समस्याओं के ज्ञान से रोग के उपचार में भी सहायता मिलती हैं।

5. पंचम आयाम -

इस पंचम आयाम में व्यक्ति के स्तर का मापन किया जाता हैं और मूल्यांकन किया जाता हैं। मापन और मूल्यांकन करते समय तीन प्रकार के समायोजी कार्यों को अधिक महत्व दिया जाता हैं।

1. व्यक्ति के उसके व्यवसाय या पेशे से संबंधित लोगों के साथ समायोजी कार्य कैसे हैं।
2. व्यक्ति के उसके परिवार और उसके मित्रों के साथ किस प्रकार के सामाजिक संबंध हैं।
3. एक व्यक्ति खाली समय का उपयोग किस प्रकार करता हैं।

इन तीन प्रकार के कार्यों के आधार पर व्यक्ति के सामाजिक स्तर का मापन और मूल्यांकन किया जाता हैं।

व्यक्ति के प्रकार्यों का समग्र मूल्यांकन एक मापनी द्वारा किया जाता हैं जिसका नाम GAF- Scale (Global Assessment of functioning) है।

4.6 DSM-IV का मूल्यांकन (Evaluation of DSM-IV)

असामान्य व्यवहार का वर्गीकरण जो DSM-IV में प्रस्तुत किया गया हैं। उनमें से पांच आयामों की सहायता से मानसिक रोगों को वर्गीकृत किया गया हैं। प्रथम दो आयामों के द्वारा असामान्य व्यवहारों या रोगों को वर्गीकृत किया गया हैं। आयाम-1 और आयाम-2 में यदि वर्गीकृत रोगों की संख्या देखी जाये तो उन दोनों आयामों में 200 से अधिक मानसिक रोग है। आयाम-1 में मानसिक रोगों के 16 मुख्य वर्ग हैं और आयाम-2 में मानसिक रोगों के मुख्य दो वर्ग हैं। आयाम-3 में व्यक्ति की सामान्य चिकित्सीय दशा से संबंधित समस्याओं को रखा गया हैं और आयाम-4 में मनोसामाजिक और वातावरणीय समस्याओं को वर्गीकृत किया गया हैं। आयाम-5 में (GAF) मापनी की सहायता से व्यक्ति के कार्यों या क्रियाकलापों के व्यापक स्तर पर मापन का विवरण दिया जाता हैं।

4.7 DSM-IV की उपयोगिता (Utility or importance of DSM-IV)

1. DSM-IV की सबसे प्रमुख विशेषता हैं कि इसकी सहायता से हर एक मानसिक रोग की पहचान के लिए विशेषताओं और कसौटियों का वर्णन किया गया हैं। जिनकी सहायता से कोई भी मनोचिकित्सक या नैदानिक मनोवैज्ञानिक DSM-IV में वर्णित रोगों की सरलता से पहचान कर सकता हैं।
2. DSM-IV की एक विशेषता या उपयोगिता यह हैं कि इसकी सहायता से बहुआयामी या बहुअल्पीय या बहुअल्पीय विश्लेषण और वर्गीकरण को महत्व दिया गया है जिसके कारण न केवल असामान्य व्यवहार या रोग को आसानी से समझा जा सकता है बल्कि इसकी सहायता से रोगी का उचित मूल्यांकन भी किया जा सकता है।
3. सेलिगमैंन और रोजनहान ने DSM-IV की उपयोगिता का वर्णन करते हुए लिखा है कि "प्रत्येक हाल में DSM-IV आने वाले दशकों मे नैदानिक बाइबिल के रूप में बना रहेगा''|
4. DSM-IV में असामान्य व्यवहारों का जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है वह DSM-III की तुलना में न केवल कुछ विस्तृत है बल्कि नैदानिक दृष्टि से अपेक्षाकृत विश्वसनीय भी है।
5. DSM-IV में असामान्य व्यवहारों का जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है वह DSM-III की तुलना में न केवल अधिक लोकप्रिय हो रहा है बल्कि यह अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत और वैज्ञानिक भी है। रोगों के निदान के नियम विशेष रूप से स्पष्ट है।
6. DSM-IV की एक विशेषता यह भी है कि उसमें मानसिक रोगों का जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है वह WHO द्वारा प्रकाशित ICD-10 से बहुत कुछ तर्कसंगत समानता रखता है|

4.8 DSM-IV की सीमाएं या दोष (Limitations of DSM-IV)

DSM-IV की कुछ प्रमुख सीमायें या दोष निम्न प्रकार से है-

1. DSM-IV का एक बड़ा दोष यह हैं कि इसमें प्रस्तुत वर्गीकरण में व्यक्तिगत असामान्य व्यवहार का विवरण दिया गया हैं। अपराधी उपसंस्कृति क्षुब्ध परिवार, हिंसा उन्मुखी समाज आदि से संबंधित कुसमायोजित व्यवहारों का कोई भी लेखा-जोखा नहीं दिया गया हैं।
2. नैदानिक मनोवैज्ञानिकों और मनोचिकित्साशास्त्रियों ने DSM-IV पर एक आरोप यह भी लगाया हैं कि इस वर्गीकरण में व्यक्ति की मानसिक दशा का विवरण जो दिया हुआ हैं वह एक समय विशेष के लिए ही सही हैं। इस वर्गीकरण में रोगी के पूर्व इतिहास को कोई महत्व नहीं किया गया हैं। रोगी के पूर्व इतिहास की जानकारी रोगी के उपचार में बहुत सहायक हैं।
3. नैदानिक मनोवैज्ञानिकों और चिकित्सकों ने DSM-IV की आलोचना करते हुए यह भी कहा हैं कि इस वर्गीकरण में रोगी के कारणों पर कोई विशेष ध्यान और महत्व नहीं दिया गया हैं।
4. मानव व्यवहार विशेष रूप से असामान्य व्यवहार न केवल जटिल हैं बल्कि सूक्ष्म और गहन भी हैं। असामान्य व्यवहार को समझाने का प्रयास और अध्ययन कई सौ वर्षों से चलता

चला आया हैं। यही कारण हैं कि अब DSM-IV की जो सीमाएं हैं उनको दूर करने और उनमें संशोधन हेतु प्रयास प्रारंभ हो गये हैं।

5. DSM-IV में मानसिक रोगों के निदान के लिए जो नियम प्रस्तुत किये गये हैं वह बहुत आदर्श नहीं जान पड़ते हैं। उदाहरण के लिए इस वर्गीकरण में उन्माद के सात लक्षण बताये गये हैं और यह भी बताया गया हैं कि इन सात लक्षणों में से कम से कम तीन लक्षण व्यक्ति में होने आवश्यक हैं जिससे कि व्यक्ति को उन्माद का रोगी कहा जा सके।

6. DSM-IV मानसिक रोगों की जितनी भी श्रेणियां या वर्ग हैं उनमें मानसिक रोगों का वर्णन तो दिया हुआ हैं लेकिन मानसिक रोगों की व्याख्या नहीं दी हुई हैं।

इन दोष व परिसीमाओं के बावजूद भी मनोवैज्ञानिकों द्वारा असामान्य व्यवहारों को वर्गीकृत करने एवं निदान के लिए आज भी DSM-IV को अत्यधिक प्रयोग में लाया जाता हैं।

4.9 भारतीय वर्गीकरण (Indian classification)

मानसिक रोगों के भारतीय वर्गीकरण में दो तरह के प्रवृतियां स्पष्ट रूप से देखने को मिलती हैं-

1. भारत के अधिकांश मानसिक उपचार गृहों एवं मानसिक अस्पतालों में ICD और DSM द्वारा प्रस्तावित वर्गीकरण को या तो पूर्णतः स्वीकार कर लिया गया हैं या फिर हल्का-फुल्का परिमार्जन करके उसे उपयोग में लाया जा रहा हैं।

2. कुछ भारतीय मनोवैज्ञानिकों एवं मनोचिकित्सकों का इन पद्धतियों से पूर्ण रूप से संतुष्ट न होने के कारण इन पद्धतियों में कुछ परिवर्तन एवं संशोधन का सुझाव दिया गया हैं। इसमें एन.एन.विग एवं एम. सक्सेना, ए.वर्घीज तथा आर.गियल एवं उनके सहयोगियों के नाम प्रमुख हैं। कुछ भारतीय विशेषज्ञों ने पुरातन भारतीय साहित्य में उपयुक्त विकल्पी मॉडल आदि में खोज करके उसका संबंध आधुनिक तंत्रों विशेषकर ICD से स्थापित करने की कोशिश की हैं। इनमें के.सी.दुबे, एस.दुबे एवं एच.जी.सिंह के नाम मुख्य हैं।

एच.जी.सिंह जो गुरूकुल कागंड़ी विश्वविद्यालय के हैं, ने मानसिक रोगों को निम्नांकित तीन प्रमुख श्रेणियों में बाटां गया हैं-

1. गंभीर **विकृतियाँ** - इसके तहत उन्होंने निम्नांकित प्रमुख रोगों को रखा गया हैं- उन्माद, ग्राही, मिरगी या अपस्मार, दुर्भीति, मनोविदलिता, पाप-भाव तथा हीनता भाव।

2. साधारण रोग - क्रोध, ईष्या, मोह, दुःस्वप्न, बाह्य श्राप।

3. स्वास्थ्य एवं संगठन - इसके तहत निम्नांकित रोगों को रखा गया हैं- बुद्धि एवं स्मृति वर्द्धन, पुस्तिकानी अर्थात् अहं अर्जन, सामांसा सस्यानी अर्थात् सामाजिक संगठन।

एन.एन.विग एवं जी.सिहं ने मनोविक्षिप्ति के निम्न प्रकारों पर बल डाला हैं-

1. मनोविक्षिप्त विषादी प्रतिक्रिया

2. हिस्ट्रीकल मनोविक्षिप्ति

3. अज्ञात कारणों से उत्पन्न मनोविक्षिप्ति जिसमें संभ्रांतिय छवि की प्रधानता होती हैं।

4. अज्ञात कारणों से उत्पन्न मनोविक्षिप्ति जिसमें व्यामोही विभ्रात्मक तस्वीर की प्रधानता होती हैं।

5. अज्ञात कारणों से उत्पन्न मनोविक्षिप्ति जिसमें मनोविदाली भावात्मक लक्षणों की प्रधानता होती हैं।

6. चिरकालिक मनोविक्षिप्ति-अभावात्मक एवं अमनोविदाली।

जे.एस. तेजा ने अन्य मनोविक्षिप्तियों को निम्नांकित पांच भागों में बाटां हैं-

1. अज्ञात कारणों से उत्पन्न अन्य मनोविक्षिप्ति- प्रतिक्रियाशील विषादी मनोविक्षिप्ति, प्रतिक्रियाशील हिस्ट्रीकल मनोविक्षिप्ति, तीव्र हिस्ट्रीकल मनोविक्षिप्ति, हिस्ट्रीकल स्वत्वात्मक अवस्था।

2. प्रतिक्रियाशील संभ्रांति

3. तीक्ष्ण व्यामोही प्रतिक्रिया

4. प्रतिक्रियाशील मनोविक्षिप्ति

5. अविशिष्ट मनोविक्षिप्ति

इस तरह कुछ भारतीय मनोवैज्ञानिकों तथा मनोचिकित्सकों ने विषादी स्नायुविकृतियों को दो भागों में बांटा गया हैं- स्नायुविकृति विषादी तथा प्रतिक्रियावादी विषादी। इस तरह के समूहन का कारण यह हैं कि स्नायुविकृत विषाद में एक ऐसा स्नायुविकृत पूर्णरूग्न व्यक्तित्व होता हैं जिसमें मनोजन्य कारक नहीं होते हैं दूसरे तरफ प्रतिक्रियावादी विषाद में ऐसा सामान्य पूर्णरूग्न व्यक्तित्व होता हैं जिसमें मनोजन्य कारक होते हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता हैं कि मानसिक रोगों का जो वर्गीकरण किया गया हैं, उसमें DSM-IV द्वारा किया गया वर्गीकरण अभी सर्वमान्य हैं। जहां तक भारतीय विशेषज्ञों द्वारा किये गये वर्गीकरण का प्रश्न, विशेष आत्मसंयम के साथ कुछ भारतीय मनोवैज्ञानिकों एवं मनोचिकित्सकों द्वारा उपयोग में लाया गया हैं।

4.10 सारांश

- व्यवहारात्मक एवं मनोवैज्ञानिक पैटर्न के अनुसार मनोवैज्ञानिक विकृतियों का वर्गीकरण ही निदान कहा जाता हैं।
- असामान्य व्यवहारों के वर्गीकरण की दो पद्धतियां हैं- अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण पद्धति तथा भारतीय वर्गीकरण।
- अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण पद्धति में DSM तथा ICD का वर्गीकरण लोकप्रिय हैं और इन दोनों में DSM-IV की लोकप्रियता सबसे अधिक हैं। उधर ICD का दशवां संस्करण अर्थात् ICD-10 नवीनतम पद्धति हैं।
- भारतीय नैदानिक मनोवैज्ञानिक द्वारा रोगों का जो वर्गीकरण किया गया हैं, उसकी लोकप्रियता भारत के कुछ नैदानिक मनोविज्ञानियों के बीच हैं।

4.11 प्रश्नोतर

1. असामान्य व्यवहारों के नैदानिक वर्गीकरण का संक्षिप्त ब्योरा प्रस्तुत करें?
2. DSM-IV द्वारा प्रतिपादित असामान्य व्यवहार के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन करें?
3. DSM-IV असामान्य व्यवहार के प्रस्तावित पांच आयामों का वर्णन करें?
4. DSM-IV का सविस्तार वर्णन कीजिए तथा इसकी उपयोगिता एवं सीमाओं पर प्रकाश डालिए?
5. रोगों के वर्गीकरण का महत्व।
6. ICD-10 का वर्णन कीजिये।
7. DSM-IV का वर्णन कीजिये।

4.12 सदंर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 5

मनोचिकित्सा एवं मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा

Psychotherapy and Psychoanalytic therapy

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 मनोचिकित्सा का अर्थ

5.4 मनोचिकित्सा की प्रकृति

5.5 मनोचिकित्सा का तरीका

5.6 मनोचिकित्सा के मूल्याकंन में समस्याएं

5.7 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा

5.8 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के लक्ष्य

5.9 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के चरण

5.10 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के गुण

5.11 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के अवगुण

5.12 सारांश

5.13 प्रश्नोतर

5.14 संदर्भ सूची

5.1 प्रस्तावना

मनोश्चिकित्सा में रोगी तथा चिकित्सक के बीच वार्तालाप होता है जिसके माध्यम से रोगी अपनी सांवेगिक समस्याओं व मानसिक चिन्ताओं की अभिव्यक्ति करता है तथा चिकित्सक विशेष सहानुभूति सुझाव एवं सलाह देकर रोगी में आत्म विश्वास एवं आत्म सम्मान कायम करता है जिससे रोगी की समस्याएं धीरे धीरे समाप्त होते चली जाती है और उसमें ठीक ढंग से समायोजन करने की क्षमता पुनः विकसित हो जाती।

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा का प्रतिपादन सिगमण्ड फ्रॉयड द्वारा किया गया। मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा एक ऐसी गहन एवं दीर्घ कालीन प्रविधि हैं जिसमें दमित स्मृतियों, चिंतनों, डर, आशंकाओं एवं मानसिक संघर्षो जो संभवतः आरंभिक मनोलैंगिक विकास में उत्पन्न समस्याओं के कारण पैदा होते हैं, का पता लगाया जाता हैं तथा व्यक्ति को वास्तविकता के संदर्भ में व्यवहार करने में मदद करता हैं।

5.2 उद्देश्य

- मनोचिकित्सा का अर्थ व स्वरूप समझ सकेंगे।
- मनोचिकित्सा के तरीकों के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- मनेचिकित्सा के मूल्यांकन करने में आयी समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा व उसके लक्ष्य के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के विभिन्न चरण से अवगत होगें।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के गुणों व अवगुणों को जान पायेंगे।

5.3 मनोचिकित्सा का अर्थ (Meaning of Psychotherapy)

सामान्यतः किसी अस्वस्थ व्यक्ति को औषध शल्य आदि प्रविधियों से पुनः स्वस्थ बनाने की प्रक्रिया को उपचार या चिकित्सा की संज्ञा दी जाती है। मानसिक रूप से अस्वस्थ एवं सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्तियों की मनोवैज्ञानिक विधियों से उपचार करना मनोश्चिकित्सा (psychotherapy) कहा जाता है। इसे नैदानिक हस्तक्षेप भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने व्यवसायी या पेशेवर क्षमता (professional capacity) का उपयोग करते हुए मानसिक रूप से या सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करने की कोशिश करता है। सामान्यतः मनोश्चिकित्सा का उपयोग उन मानसिक रोगियों के लिए लाभकारी होता है जो मनःस्नायुविकृति से पीडित होते हैं। इसका उपयोग दूसरे प्रकार के मानसिक रोगियों जैसे मनोविक्षिप्ति या मनोविकृति के रोगियों के साथ भी किया जाता है परंतु ऐसे रोगियों को मनोश्चिकित्सा के अलावा मेडिकल चिकित्सा भी देना अनिवार्य होता है।

मनोश्चिकित्सा की कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार दी गई है -

- ओलवर्ग के अनुसार (Wolberg,1967), मनोश्चिकित्सा सांवेगिक प्रकृति की समस्याओं के लिए उपचार का एक प्रारूप है जिसमें एक प्रशिक्षित व्यक्ति जान बुझकर एक रोगी के साथ पेशेवर संबंध इस उद्देश्य से कायम करता है कि उसमें धनात्मक व्यक्तित्व वर्द्धन तथा विकास हो व्यवहार के विक्षुब्ध पैटर्न के मंदित वर्तमान लक्षणों को दूर किया जा सकें या उसमें परिमार्जन किया जा सकें।
- रौटर के अनुसार (Rotter,1976) मनोश्चिकित्सा मनोवैज्ञानिक की एक सुनियोजित क्रिया होती है। जिसका उद्देश्य व्यक्ति की जिन्दगी में ऐसा परिवर्तन लाना होता है जो उसकी जिन्दगी को भीतर से अधिक खुश तथा संरचनात्मक या दोनों ही बनाता है।
- निटजील वर्नस्टीन एवं मिलिक के अनुसार मनोश्चिकित्सा में कम से कम दो सहभागी होते हैं जिसमें एक को मनोवैज्ञानिक समस्याओं से निबटने में विशेष प्रशिक्षण तथा सुविज्ञता प्राप्त होती है और उसमें से एक समायोजन में समस्या का अनुभव करता है और वे दोनों समस्या को कम करने के लिए एक विशेष संबंध कायम किये होते हैं। मनश्चिकित्सकीय संबंध एक पोषक परंतु उद्देश्यपूर्ण संबंध होता है जिसमें मनोवैज्ञानिक स्वरूप की गई विधियों का उपयोग क्लायंट में बाधिक परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है।

इन परिभाषाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि मनोश्चिकित्सा में रोगी तथा चिकित्सक के बीच वार्तालाप होता है जिसके माध्यम से रोगी अपनी सांवेगिक समस्याओं व मानसिक चिन्ताओं की अभिव्यक्ति करता है तथा चिकित्सक विशेष सहानुभूति सुझाव एवं सलाह देकर रोगी में आत्म विश्वास एवं आत्म सम्मान कायम करता है जिससे रोगी की समस्याएं धीरे धीरे समाप्त होते चली जाती है और उसमें ठीक ढंग से समायोजन करने की क्षमता पुनः विकसित हो जाती।

5.4 मनोचिकित्सा की प्रकृति (Nature of Psychotherapy)

मनोश्चिकित्सा या नैदानिक हस्तक्षेप के स्वरूप को अधिक स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि मनोश्चिकित्सा में निहित निम्नांकित तीन मौलिक तथ्यों पर प्रकाश डाला जाए-

1- सहभागी

2- चिकित्सीय संबंध

3- मनोश्चिकित्सा की प्रविधि

इन तीनों तथ्यों का वर्णन निम्नांकित है-

1- सहभागी (participants)–

मनोश्चिकित्सा में दो सहभागी होती हैं- पहला सहभागी क्लायंट या रोगी होता है तथा दूसरा सहभागी चिकित्सक होता है क्लायंट वह व्यक्ति होता है जिसमें सांवेगिक या मानसिक क्षुब्धता इतनी अधिक उत्पन्न हो जाती है कि उसे किसी प्रशिक्षित चिकित्सक की मदद अपनी समस्याओं के समाधान के लिए लेनी पड़ जाती है। रोगी मे समस्या की क्षुब्धता की मात्रा अधिक भी हो सकती या फिर थोड़ी भी हो सकती है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि मनोश्चिकित्सा के लिए सबसे उत्तम क्लायंट या रोगी वह होता है जिसमें कुछ खास खास गुण होते हैं। जैसे - मनोश्चिकित्सा से सबसे अधिक लाभ उन रोगियों को होता है जो बुद्धिमान, आत्म प्रेरित, शाब्दिक अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए साधारण मात्रा में चिन्ता दिखातें हों तथा चिकित्सक को अपनी समस्याओं के बारें में ठीक से जानकारी दे सकते हों। गुरमैन तथा राजीन ने अपने अध्ययन से इस तथ्य की संपुष्टि की हैं।

मनोश्चिकित्सा का दूसरा सहभागी चिकित्सक(therapist) होता है। चिकित्सक वह व्यक्ति होता है जो अपने विशेष प्रशिक्षा तथा अनुभव के कारण क्लायंट या रोगी को अपने क्षुब्धताओं से निबटने में मदद करता हो। चिकित्सा के लिए यह आवश्यक है कि उसमें विशेष कौशल हो और वह विशेष रूप से प्रशिक्षित हो ताकि वह क्लायंट की क्षुब्धताओं को समझ सके और तब उसके साथ इस ढ़ंग से अन्तःक्रिया कर सके कि वह (क्लायंट) फिर अपनी समस्याओं या क्षुब्धताओं से ठीक ढंग से निबट सकें। एक उत्तम चिकित्सा में पर्याप्त कौशल तथा प्रशिक्षण के अलावा कुछ व्यक्तिगत गुण भी होना चाहिए। प्रसिद्ध मनश्चिकित्सक कार्ल रोजर्स(Carl Rogers) के अनुसार एक उत्तम चिकित्सक में परानुभूति प्रमाणिकता तथा शर्तहीन धनात्मक सम्मान देने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए। इसके अलावा इसमें क्लायंट की समस्याओं को ठीक ढंग से सुनना, बिना निर्णायक दृष्टिकोण दिखलायें बोध तथा संवेदनशीलता का भाव दिखाने आदि की क्षमता होनी चाहिए।

2- चिकित्सीय संबंध (Therapeutic relationship)-

मनोश्चिकित्सा का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू चिकित्सक तथा क्लायंट के बीच विकसित विशेष संबंध होता है जिसे चिकित्सीय संबंध कहा जाता है। चिकित्सीय संबंध वैसा संबंध होता है जिसमें चिकित्सा तथा रोगी दोनों ही यह जानते हैं कि वे लोग वहां क्यों एकत्रित हुए हैं तथा उनकी अन्तःक्रियाओं का नियम तथा लक्ष्य क्या है।

मनोश्चिकित्सा की शुरूआत चिकित्सीय अनुबन्ध से होता है जिसमें उपचार का लक्ष्य चिकित्सा की प्रविधि जिसका उपयोग किया जाना है संभावित जोखिम तथा चिकित्सा एवं रोगी के वैयक्तिक जवाबदेहियों का उल्लेख होता है। औरलिन्स्की एवं होवार्ड (Orlinsky & Howard, 1986) के अनुसार चिकित्सीय अनुबन्ध एक तरह की रूपरेखा के रूप में कार्य करता है जो चिकित्सीय संबंध को इस तरह का बनने में मदद करता है जिसमें क्लायंट सक्रिय निर्णयकर्ता के रूप में न कि सहायता पाने वाले एक निष्क्रिय व्यक्ति के रूप में कार्य करता है।

चिकित्सक की यह कोशिश रहती है कि वह रोगी के साथ एक ऐसा भद्र संबंध बना सके कि वह अर्थात रोगी अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए काफी उत्सुक रहे। कोरचीन (Korchin,1976) ने यह स्पष्टतः कहा है कि चिकित्सीय संबंध में आसक्ति तथा अनासक्तिक या अलगाव का संतुलन होना चाहिए। स्ट्रप तथा हैडले (Strupp&Halley,1979) के अनुसार कुछ रोगी या क्लायंट ऐसे होते हैं जिनके साथ चिकित्सीय संबंध तेजी से विकसित होते हैं तथा कुछ ऐसे क्लायंट होते हैं जिनके साथ इस ढंग का संबंध नहीं विकसित हो पाता है और चिकित्सा की प्रगति धीमी पड़ जाती है। स्ट्रप तथा औरलिनस्की एवं होवार्ड द्वारा इस क्षेत्र में किये गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि एक उत्तम चिकित्सीय संबंध में अन्य बातों के अलावा निम्नांकित अपेक्षित गुण होता है-

- क्लायंट एवं चिकित्सक के बीच चिकित्सीय संबंध में नैतिक वचनबद्धता होती है जिसमें गोपनीयता प्रमुख है। चिकित्सक रोगी के गोपनीयता की रक्षा करता है तथा चिकित्सा के दौरान बतलाये गए बातों को किसी अन्य व्यक्ति से नहीं बतलाता है।
- चिकित्सीय संबंध इस ढंग का होना चाहिए कि चिकित्सक रोगी के कल्याण को सर्वाधिक प्राथमिकता दे।
- उस चिकित्सीय संबंध को उत्तम माना जाता है जिसमें भूमिका निवेश, परानुभूतीय गूंज तथा परस्पर प्रतिज्ञापन जैसे तीन तत्व होते हैं। भूमिका निवेश से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सक तथा रोगी दोनों ही चिकित्सा को सफल बनाने में व्यक्तिगत प्रयास करते हैं। परानुभूतीय गूंज से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सा के दौरान किस हद तक चिकित्सक तथा रोगी दोनों ही समान दृष्टिकोण रखते हैं। परस्पर प्रतिज्ञापन से तात्पर्य इस बात से होता है कि किस सीमा तक चिकित्सक व रोगी एक दूसरे की भलाई के लिए ध्यान देते हैं।
- स्ट्रप ने इस बात पर बल डाला है कि चिकित्सीय परिणाम उत्तम होने के लिए यह आवश्यक है कि चिकित्सीय संबंध को रोगी एक कृत्रिम या बनावटी संबंध के रूप में न लेकर उसे एक वास्तविक संबंध के रूप में प्रत्यक्षण करें।

3- मनोश्चिकित्सा की प्रविधि (techniques of psychotherapy)-

मनोश्चिकित्सा की कई पद्धतियां हैं। मनोश्चिकित्सा के प्रत्येक पद्धति की अपनी अपनी प्रविधियां हैं। मनोश्चिकित्सा की प्रविधियों में अन्तर होने का मुख्य कारण उनके पीछे छिपे व्यक्तित्व सिद्धान्त तथा वे सारे परिवर्तन हैं जो चिकित्सक रोगी में उत्पन्न करना चाहता है। यद्यपि मनोश्चिकित्सा के कई प्रकार हैं फिर भी कई प्रविधियां ऐसी हैं जो उन सभी प्रकारों में सामान्य है। इन प्रविधियों का स्वरूप मूलतः मनोवैज्ञानिक होता है न कि दैहिक या मेडिकल। नैदानिक हस्तक्षेप या मनोश्चिकित्सा की कुछ ऐसी प्रमुख प्रविधियां इस प्रकार हैं -

1- सूझ उत्पन्न करना - मनोश्चिकित्सा की एक प्रविधि रोगी के मनोवैज्ञानिक समस्याओं में सूझ उत्पन्न करना है। सूझ उत्पन्न करने के लिए रोगी में आत्म मूल्याकंन तथा आत्म ज्ञान विकसित करने की कोशिश की जाती है। सूझ उत्पन्न करने के लिए चिकित्सक रोगी के व्यवहार की व्याख्या भी करते हैं। फ्रॉयड ने रोगी में सूझ उत्पन्न करने पर सबसे अधिक बल डाला था जिसमें अचेतन के प्रभावों का मूल रूप से विश्लेषण किया जाता है। क्लायंट को यह समझाया जाता है कि वे क्यों इस तरह का व्यवहार करते हैं। यदि वे ऐसा समझ जाते हैं तो इससे नये व्यवहार की उत्पत्ति उसमें होती है जिसे सूझ कहा जाता है।

2- सांवेगिक अशांति को कम करना - मनोश्चिकित्सा में रोगी के सांवेगिक अशांति की मात्रा को इतना कम कर दिया जाता है कि वह चिकित्सा में आगे ठीक ढंग से सहयोग कर सकें तथा अपने व्यवहार में स्थायी परिवर्तन लाने के लिए अभिप्रेरित रहे। सांवेगिक अशांति को कम करने का उत्तम तरीका यह है कि रोगी के सांवेगिक शक्ति को उत्तम चिकित्सीय संबंध द्वारा बढ़ाया जाए। जब रोगी यह समझता है कि चिकित्सक उसका एक व्यक्तिगत दोस्त है जिस पर भरोसा किया जा सकता है तो उसमें स्वतः सांवेगिक स्थिरता उत्पन्न होती है।

3- विरेचन को प्रोत्साहित करना - चिकित्सक की उपस्थिति में रोगी को अपने संवेगों भावों आदि की खुली अभिव्यक्ति करने के लिए कहा जाता है। इस प्रक्रिया को विरेचन कहा जाता है। इस तरह से विरेचन की प्रक्रिया द्वारा कुछ वैसे दबे हुए संवेग की अभिव्यक्ति होती है जिसे स्वयं रोगी बहुत समय पहले से नहीं जानता था। चिकित्सक ऐसे संवेगों को अभिव्यक्त करने में रोगी को भरपूर प्रोत्साहन देता है। उन्हें ऐसी उम्मीद रहती है कि इससे रोगी के दु:खदायक भावों एवं संवेगों को समझने में मदद मिलेगी और वह फिर कुछ खास खास संवेगों से बिल्कुल ही नहीं डरेगा या चिंतित होगा।

4- नयी सूचना देना – मनोश्चिकित्सा का स्वरूप शैक्षिक होता है। चिकित्सक रोगी को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ नई नई सूचनाओं को देता है ताकि रोगी के वर्तमान ज्ञान में उत्पन्न खाई या विकृति को संशोधित किया जा सकें। इस सिलसिले में रोगी को चिकित्सक कभी कभी कोई विशेष तरह के विषय या क्षेत्र (जो उनकी समस्या से संबंधित होता है) को पढ़ने का भी सुझाव देते हैं। इसे संदर्भिका चिकित्सा कहा जाता है। नई सूचना प्राप्त होने से रोगी में एक ऐसा संदर्भ उत्पन्न होता है जो उन्हें उन समस्याओं से निबटने में मदद करता है जो उन्हें असाधारण परंतु समाधेय दिखते हैं।

5. परिवर्तन के लिए उम्मीद एवं विश्वास विकसित करना - मनोश्चिकित्सा में रोगी में उत्तम परिवर्तन के लिए विश्वास तथा प्रत्याशा उत्पन्न की जाती है। चिकित्सक हर तरह से

परिस्थिति को इस ढंग से मोड़ते हैं कि रोगी में यह विश्वास उत्पन्न हो जाए कि उसे मदद की जा रही है तथा निश्चित रूप से उसके व्यवहार में धनात्मक परिवर्तन होंगे तथा उनकी सांवेगिक समस्याएं कम हो जाएगीं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चिकित्सक विवेचन, रोगी के भावों की व्याख्या तथा उत्तम चिकित्सीय संबंध का निर्माण आदि जैसी प्रविधियों का सहारा लेते हैं।

स्पष्ट हुआ कि मनोश्चिकित्सा एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें चिकित्सक रोगी के साथ अन्तःक्रिया करके एक ऐसा उत्तम चिकित्सीय संबंध का निर्माण करते हैं कि रोगी की सांवेगिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का उत्तम निदान हो पाता है।

5.5 मनोचिकित्सा का तरीका

मनोश्चिकित्सा के तरीका (Modes) से तात्पर्य इस बात से होता है कि मनोश्चिकित्सा किस प्रकार संपन्न की जाती है तथा किस परिस्थिति में संपन्न की जाती है। मनोश्चिकित्सा के दो तरीका का वर्णन किया गया है -

1 वैयक्तिक तरीका

2 सामूहिक तरीका

1 वैयक्तिक तरीका (individual therapy) –

वैयक्तिक तरीका वैसे तरीका को कहा जाता है जिसमें चिकित्सा की परिस्थिति ऐसी होती है जिसमें एक चिकित्सक तथा एक रोगी होता है तथा चिकित्सक विशेष मनोवैज्ञानिक प्रविधि अपनाकर चिकित्सा की प्रक्रिया संपन्न करते हैं। क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा तथा व्यवहार चिकित्सा में चिकित्सक वैयक्तिक तरीका ही अपनाकर रोगी का उपचार करता हैं।

2 सामूहिक तरीका (Group therapy)-

सामूहिक तरीका वैसे तरीका को कहा जाता है जिसमें चिकित्सक रोगी की चिकित्सा अकेले में न करके एक समूह में करते हैं ऐसे समूह सामान्यतः दो प्रकार के हेाते हैं - समूह असंबंधित व्यक्तियों का भी हो सकता है या समूह में सभी एक ही परिवार के सदस्य हो सकते हैं। जब चिकित्सा का समूह असंबंधित व्यक्तियों का होता है, तो उसे सामूहिक चिकित्सा कहा जाता है परंतु जब चिकित्सा समूह एक ही परिवार के सदस्य बना होता है, तो इसे पारिवारिक चिकित्सा कहा जाता है और जब चिकित्सा में सिर्फ पति एवं पत्नी को ही सम्मिलित किया जाता है तो उसे वैवाहिक चिकित्सा कहा जाता है। इन सभी तरह के चिकित्सा का वर्णन आगे अलग अलग अध्याय में किया जाएगा।

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा मनोश्चिकित्सा के इन दोनों तरीकों का उपयोग किया जाता है। किस परिस्थिति में किस तरह की चिकित्सा का उपयोग करें यह रोगी की समस्या तथा चिकित्सा का अपना प्रशिक्षण कौशल आदि पर निर्भर करता है।

वैयक्तिक चिकित्सा तथा समूह चिकित्सा में मुख्य अंतर निम्नांकित है -

1- वैयक्तिक चिकित्सा में सिर्फ एक रोगी की ही चिकित्सा चिकित्सक करते हैं जबकि सामूहिक चिकित्सा में एक साथ कई रोगियों का उपचार संभव हो जाता है।

2- वैयक्तिक चिकित्सा में व्यक्तित्व गतिकी तथा अचेतन के संघर्षों को गहराई से जानना संभव हो पाता है परंतु सामूहिक चिकित्सा में चिकित्सक के लिए इस तरह का प्रयास संभव नहीं हो पाता है।

3- वैयक्तिक चिकित्सा के उपचार में सामूहिक चिकित्सा की तुलना में कम खर्च लगता है।

4 वैयक्तिक चिकित्सा की प्रविधियां सामूहिक चिकित्सा की प्रविधियों की तुलना में अधिक व्यापक हैं।

5.6 मनोचिकित्सा के मूल्याकंन में समस्याएं

(Problems of evaluation in psychotherapy)

मनोश्चिकित्सा की प्रभावशीलता की जांच एक कठिन कार्य है। इसकी प्रभावशीलता की जांच मनोश्चिकित्सा के परिणाम को माप कर किया जाता है। सच पूछा जाए तो मापन की यह प्रक्रिया एक अयथार्थ विधियों पर आधारित है जिससे अयथार्थ एवं आत्मनिष्ठ आंकड़ें प्राप्त होते हैं। मनोश्चिकित्सा के परिणाम की माप कई विधियों द्वारा की जाती है और इन सब की विशिष्ट समस्याएं हैं जिनका अब हम यहां अवलोकन करेंगे-

1- रोगी के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन के बारे में चिकित्सक की धारणा –
स्पष्टतः दिये गए चिकित्सा के कारण रोगी के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को चिकित्सक के अनुमान के आधार पर मापना एक भ्रमिक सूचक है क्योंकि प्रत्येक चिकित्सक अपने आप को योग्य एवं सफल चिकित्सक मानता है।

2- स्वयं रोगी का अपना मत –

चिकित्सा के परिणाम का मूल्याकंन रोगी के मत विचार आदि के आधार पर करना भी समस्यात्मक है। प्रायः देखा गया है कि रोगी मात्र चिकित्सक को खुश करने के लिए यह कह देता है कि वह अब पहले से अच्छा अनुभव कर रहा है।

3- रोगी के दोस्त तथा परिवार के सदस्यों का मत –

इसका कारण यह है कि परिवार के सदस्यों तथा दोस्तों में भी रोगी को चंगा देखने की प्रवृति मजबूत होती है और इस प्रवृति को दबाव में आकर वे उसे चंगा हो जाने का समझ तुरंत बना लेते हैं।

4- व्यक्तित्व परीक्षण के प्राप्तांकों की तुलना –

चिकित्सा के परिणाम का मूल्याकंन रोगी द्वारा चिकित्सा प्रारंभ होने के पहले व्यक्तित्व परीक्षण पर आये प्राप्तांकों की तुलना चिकित्सा के बाद व्यक्ति परीक्षण पर आये प्राप्तांकों की तुलना के आधार पर की जाती है। यद्यपि मूल्याकंन की इस कसौटी में थोड़ी वस्तुनिष्ठता है, फिर भी इस कसौटी में दो तरह की मुख्य समस्याये हैं - पहला तो यह कि व्यक्तित्व परीक्षण प्राप्तांक में आये अंतरों से इस बात का कोई सबूत नहीं मिलता है कि चिकित्सा से व्यवहार में हुए परिवर्तन स्थायी होंगे। इन दोनों कारकों के कारण मनोश्चिकित्सा के परिणाम का मूल्याकंन दोषपूर्ण एवं समस्यात्मक हो जाता है।

5. कुछ चयनित स्पष्ट व्यवहार में परिवर्तन –

चिकित्सा के परिणाम का मूल्याकंन रोगी द्वारा किये गये कुछ विशेष व्यवहार में हुए परिवर्तन के आधार पर भी किया जाता है। हालांकि चिकित्सकों के बीच आम मान्यता यह है कि मूल्याकंन का यह कसौटी अन्य कसौटियों की तुलना में सरल एवं सुरक्षित है। फिर भी इसमें समस्याओं हैं। एक समस्या तो यह है कि चिकित्सा परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन अन्य परिस्थिति में सामान्यीकृत नहीं हो पाते हैं। इसके अलावा रोगी के व्यवहार में परिवर्तन जिसे चिकित्सक चयनित करते हैं सचमुच में वह चिकित्सक के लक्ष्य को प्रतिबिम्बित करता है।

इन समस्याओं के बावजूद मनोश्चिकित्सा के परिणाम की प्रभावशीलता को मापने के लिए नैदानिक मनोवैज्ञानिक तथा मनोचिकित्सकों द्वारा काफी प्रयास किये जा रहे हैं तथा इन लोगों द्वारा कुछ ऐसे परिणाम कसौटी को भी ढूंढा जा रहा है जिससे समस्या कम से कम उत्पन्न हो सकें।

5.7 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा (Psychoanalytic therapy)

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा का प्रतिपादन सिगमण्ड फ्रॉयड (Sigmund Freud) द्वारा किया गया। मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा एक ऐसी गहन एवं दीर्घ कालीन प्रविधि हैं जिसमें दमित स्मृतियों, चिंतनों, डर, आशंकाओं एवं मानसिक संघर्षो जो संभवतः आरंभिक मनोलैंगिक विकास (psychosexual development) में उत्पन्न समस्याओं के कारण पैदा होते हैं, का पता लगाया जाता हैं तथा व्यक्ति को वास्तविकता के संदर्भ में व्यवहार करने में मदद करता हैं।

इस प्रविधि में ऐसा समझा जाता हैं कि इन दमित इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों में जब रोगी को सूझ उत्पन्न हो जाता हैं, तो रोगी स्वयं ही उनके दमन एवं अन्य संबंधित रक्षात्मक प्रक्रमों पर अपनी उर्जा बर्बाद नहीं करता हैं। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति अपने व्यक्तित्व गतिकी को विभिन्न चिंताओं एवं आशंकाओं से उत्पन्न समस्याओं को चेतन स्तर पर ही सुलझाने की कोशिश करते हैं। इससे उनमें उतम व्यक्तित्व संगठन उत्पन्न होता हैं तथा उसके जीवन शैली में सुधार आता हैं।

5.8 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के लक्ष्य (Goals of Psychoanalytic therapy)

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा का मौलिक लक्ष्य रोगी को अपने आप को उतम ढ़ंग से समझने में मदद करने से होता हैं ताकि वह रोगी पहले से अधिक समायोजी ढ़ंग से सोच सके तथा व्यवहार कर सके। इस चिकित्सा में पूर्वकल्पना यह होती हैं कि जब रोगी देख पाता हैं कि कुसमायोजी ढ़ंग से व्यवहार करने का क्या कारण हैं जो प्रायः अचेतन में होते हैं तथा जब वे यह देखते हैं कि वे कारण बहुत ठोस एवं वैद्य नहीं हैं तो वे अपने आप दूर हो जाता हैं।

उक्त मनोविश्लेणात्मक परिस्थिति की व्याख्या से तब यह होता हैं | मनोविश्लेणात्मक उपचार के निम्नांकित तीन मुख्य उद्देश्य हैं-

1- रोगी के समस्यात्मक कारणों में बौद्धिक एवं सांवेगिक सूझ विकसित करना इस तरह का सूझ रोगी में एक दो मनोविश्लेणात्मक सत्र में न विकसित होकर कई सत्रों से गुजरने के बाद विकसित होता हैं।

2- रोगी में सूझ विकसित होने के बाद सूझ का आशय के बारे में पता लगाना होता हैं।

3- धीरे-धीरे रोगी के उपाहं तथा पराहं की क्रियाओं पर अहम् के नियंत्रण को बढ़ाना होता हैं।

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के उक्त महत्वपूर्ण लक्ष्यों में प्राप्त करने की प्रक्रिया में रोगी के व्यक्तित्व का क्रमिक पूर्णसंरचना सम्मिलित होती हैं।यह प्रक्रिया बहुत लम्बी चलती हैं। करीब तीन से पांच सत्र प्रति सप्ताह 2 साल से15 साल तक कि अवधि तक। इसकी फीस भी काफी अधिक होती हैं। करीब 100 डालर प्रति घूंटा तथा इसमें उच्चस्तरीय चिकित्सीय कौशल की जरूरत पड़ती हैं। इन कारणों से मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के महत्वाकांशी लक्ष्य पर पहुंचना असंभव नही तो कठिन अवश्य हैं।

5.9 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के चरण (Stages of Psychoanalytic therapy)

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा कुछ खास चरणों में संपन्न की जाती हैं जो निम्नांकित हैं-

1- स्वतंत्र साहचार्य की अवस्था
2- प्रतिरोध की अवस्था
3- स्वप्न विश्लेषण की अवस्था
4- दिन प्रतिदिन के व्यवहारों की व्याख्या की अवस्था
5- स्थानान्तरण की अवस्था
6- समापन की अवस्था

इन अवस्थाओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- स्वतंत्र साहचार्य की अवस्था (stage of free association) -

फ्रॉयड की चिकित्सा प्रणाली में सबसे पहली अवस्था स्वतंत्र साहचर्य की होती हैं।रोगी को एक मन्द प्रकाश कक्ष में आराम देह कुर्सी या गद्दीदार कोच पर लेटा दिया जाता हैं और चिकित्सक रोगी की दृष्टि से ओझल होकर पीछे की और बैठ जाता हैं। चिकित्सक रोगी से कुछ देर सामान्य बातचीत का सौहार्द्रपूर्ण वातावरण स्थापित कर लेता हैं और रोगी से यह अनुरोध करता हैं कि मन में जो कुछ भी आता हैं। उसे बिना संकोच कहता जाए, चाहे वे विचार साथर्क हो या निरर्थक। रोगी की बातों को चिकित्सक ध्यानपूर्वक सुनता हैं यदि रोगी को हिचकिचाहट होती हैं तो चिकित्सक उसकी मदद करता हैं। इस प्रविधि को स्वतंत्र साहचर्य कहा जाता हैं। जिसका उद्देश्य रोगी के अचेतन में छिपे अनुभवों मनोलैंगिक इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों को कुदेरकर चेतन स्तर पर लाना हैं।

2- प्रातिरोध की अवस्था (stage of resistance)-

प्रतिरोध की अवस्था स्वतंत्र साहचर्य के बाद की अवस्था होती हैं। जिसमें रोगी अपने मन में आने वाले किसी भी तरह के विचारों को विश्लेषक को सुनाता हैं तो इसी प्रक्रिया में एक ऐसी अवस्था आ जाती हैं जहां वह अपने विचारों को चिकित्सक से व्यक्त नहीं करना चाहता हैं और वह अचानक चुप हो जाता हैं या बनावटी बातें करने लगता हैं। यह अवस्था ही प्रतिरोध की अवस्था कहलाती हैं। चिकित्सक प्रतिरोध की अवस्था खत्म करने की कोशिश करता हैं ताकि चिकित्सा में प्रगति हो सके। इसके लिए वह सुझाव, सम्मोहन, लिखकर विचार व्यक्त करने, पेंटिग, चित्रांकन आदि का सहारा

लेता हैं। वह रोगी से घनिष्ठ संवेगात्मक संबंध स्थापित करता हैं ताकि रोगी प्रतिरोध इच्छाओं की अभिव्यक्ति आसानी से कर सके।

3- स्वप्न विश्लेषण की अवस्था (stage of dream-analysis) -

रोगी के अचेतन में दमित प्रेरणाओं बाल्यावस्था की मनोलैंगिक इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों को कुदेरकर चेतन स्तर पर लाने के लिए विश्लेषक रोगी के स्वप्न का अध्ययन एवं उसका विश्लेषण करता हैं। फ्रॉयड के अनुसार स्वप्न में व्यक्ति अचेतन की दमित इच्छाओं की पूर्ति करता हैं। अतः रोगियों के स्वप्नों का विश्लेषण करके चिकित्सक उनके अचेतन संघर्षों को जान पाते हैं। रोगी के स्वप्नों के अव्यक्त विषयों के अर्थ को विश्लेषक उन्हें समझाता हैं जिससे रोगी को अपने मानसिक संघर्षो के वास्तविक कारण को समझने में मदद मिलती हैं।

4- स्थानान्तर की अवस्था (stage of transference)-

चिकित्सीय सत्र के दौरान जैसे-जैसे रोगी एवं चिकित्सक के बीच अन्तःक्रिया होते जाती हैं, दोनों के बीच जटिल एवं सांवेगिक नये संबंध भी उभर कर सामने आ जाते हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि रोगी अक्सर अपने गत जिंदगी के अनुभव में जैसी मनोवृति शिक्षक माता-पिता या दोनों के प्रति बना रखी होती हैं वेसी ही मनोवृति वह चिकित्सक के प्रति भी विकसित कर लेता हैं। इसे ही स्थानान्तरण की संज्ञा दी जाती हैं। स्थानान्तरण विकसित होने से रोगी शांत मन से एवं पूर्ण विश्वास के साथ अपने विचारों की अभिव्यक्ति करता हैं। उसे यह विश्वास हो जाता हैं कि चिकित्सक ऐसे व्यक्ति हैं जिनके सामने वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों के बारे में खुलकर अभिव्यक्त कर सकता हैं।

स्थानान्तरण के तीन प्रकार होते हैं-

1. धनात्मक स्थानान्तरण (positive transference) - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपने स्नेह एवं प्रेम की प्रतिक्रियाओं को दिखलाता हैं।
2- ऋणात्मक स्थानान्तरण (negative transference) - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपनी घृणा एवं अलगाव की प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करता हैं।
3- प्रति स्थानान्तरण (counter transference) – इसमें विश्लेषक ही रोगी के प्रति स्नेह, प्रेम एवं संवेगात्मक लगाव दिखाता हैं।

धनात्मक स्थानान्तरण से चिकित्सा का वातावरण और भी सोहार्द्रपूर्ण बन जाता हैं। और रोगी स्वयं को सुरक्षित अनुभव करता हैं तथा वह अचेतन की दमित इच्छाओं को खुलकर अभिव्यक्त करता हैं।

ऋणात्मक स्थानान्तरण में चिकित्सक रोगी की घृणा एवं आक्रामक व्यवहारों का केन्द्र होता हैं यहां उन्हें काफी सूझ-बुझ से काम लेना पड़ता हैं ताकि चिकित्सा में प्रगति आगे की और बनी रहे।

प्रतिस्थानान्तरण की स्थिति से विश्लेषक की अक्षमता का पता चलता हैं। ऐसे चिकित्सक या विश्लेषक को आदर्श नहीं माना जाता हैं।

5. समापन की अवस्था (stage of termination) -

चिकित्सा के अन्त में चिकित्सक के सफल प्रयास से रोगी को अपने संवेगात्मक कठिनाईयों एवं मानसिक संघर्षों के अचेतन कारणों का अहसास होता हैं जिससे रोगी में अंर्तदृष्टि या सूझ का

विकास होता हैं। रोगी में सूझ का विकास हो जाने से उसके आत्म-प्रत्यक्षण तथा सामाजिक प्रत्यक्षण में परिवर्तन आ जाता हैं। रोगी की मनोवृति विश्वास एवं मूल्यों में धनात्मक परिवर्तन आता हैं तथा वह अपने व्यक्तिगत प्रेरणाओं को सही ढ़ंग से समझने लगता हैं। रोगी में सूझ का विकास हो जाने से चिकित्सक रोगी को धीरे-धीरे संबंध विच्छेद करने का प्रयास करता हैं। यहां चिकित्सक को एक महत्वपूर्ण सावधानी बरतनी पड़ती हैं वह यह हैं कि संबंध-विच्छेद वह अचानक न करे क्योंकि ऐसा करने से कभी-कभी रोगी में नये लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

5.10 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के गुण (Merits of Psychoanalytic Therapy)

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के प्रमुख गुण निम्नांकित हैं -

1- मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा द्वारा चूंकि अचेतन का दमित इच्छाओं संघर्षों एवं उलझनों को सुलझाकर किया जाता हैं अतः इससे जो उपचार होता हैं वह अधिक स्थायी होता हैं और रोगी में पुनः कभी उस रोग के लक्षण दुबारा दिखाई नहीं देते हैं चूंकि इस विधि में अचेतन की गहराईयों में जाकर उसे कुरेदा जाता हैं तथा संवेगात्मक कठिनाईयों एवं मानसिक उलझनों का कारणों का पता लगाया जाता हैं इसलिए गहरी चिकित्सा भी कहा जाता हैं।

2- मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा प्रविधि को एक महत्वपूर्ण विधि इसलिए कहा जाता हैं क्योंकि इससे मानसिक रोग के कारण का पहले पता लगाया जा सकता हैं और बाद में उसका उपचार उसी आलोक में किया जाता हैं। फलस्वरूप यह विधि चिकित्सा की अन्य विधियों से उतम मानी जाती हैं जिसमें मूलतः सिर्फ लक्षणात्मक उपचार पर ही बल डाला जाता हैं।

3- यह प्रविधि हिस्टिरिय स्नायुविकृत विषाद अंतर्मुखी तथा कम अभिप्रेरित रोगियों के लिए सबसे अधिक प्रभावकारी मानी गयी हैं।

5.11 मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा के अवगुण (Demerits of psychoanalytic therapy)

मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा में अनेक गुणों के साथ ही कुछ अवगुण भी हैं जो निम्नांकित हैं-

1- इस विधि द्वारा उपचार में काफी समय लगता हैं। सामान्यतः उस विधि द्वारा उपचार में एक रोगी को प्रति सप्ताह तीन से पांच बार लगातार कई महिनों तक और यहां तक कि कभी-कभी वर्षों तक विश्लेषक के पास आना पड़ता हैं। समय अधिक लगने के कारण चिकित्सा की यह विधि व्यवहारिक नहीं रह जाती हैं। रोगी चिकित्सा से उबने लगता हैं और उसकी कठिनाइयां घटने की बजाएं बढ़ने लगती हैं।

2- इस उपचार विधि में समय अधिक लगने की वजह से चिकित्सक ज्यादा रोगियों का उपचार चाह कर भी नहीं कर सकता हैं।

3- चिकित्सा की यह विधि खर्चीली भी अधिक हैं। प्रत्येक सत्र जिसकी संख्या पांच सप्ताह तक होती हैं रोगी को अलग-अलग फीस देनी पड़ती हैं। अतः इस विधि द्वारा धनी लोग ही लाभान्वित हो पाते हैं।

4- चिकित्सा की इस विधि का उपयोग बालकों तथा काफी बूढ़े लोगों पर नहीं किया जा सकता हैं। क्योंकि इन दोंनो श्रेणियों के लोग चिकित्सा के दौरान उतना सहयोग नहीं कर पाते जितनी जरूरत पड़ती हैं। इतना ही नहीं इन दोनों तरह के व्यक्तियों में सूझ उत्पन्न करना एक कठिन कार्य हैं और सूझ ढ़ंग से उत्पन्न किए बिना रोगी की समस्या का समाधान नहीं हो पाता हैं।

5. मनोविश्लेणात्मक चिकित्सा प्रविधि का एक दोष यह भी हैं कि इसके लिए विश्लेषक को कुशल एवं प्रशिक्षित होना अनिवार्य हैं। सभी तरह के चिकित्सक इसका प्रयोग ठीक से नहीं कर पाते इसलिए यह विधि लोकप्रिय नहीं हो पायी हैं।

6. इस प्रविधि में वही लोग लाभान्वित होते हैं जिनका शिक्षा का स्तर अधिक हैं। कम शिक्षित रोगी चूंकि उतम शाब्दिक अन्तःक्रिया चिकित्सीय सत्र के दौरान करने में असमर्थ होते हैं अतः परिणामतः यह विधि उनके लिए उपयोगी नहीं होती हैं।

इन परिसीमाओं के बावजूद भी यह विधि चिकित्सा की एक महत्वपूर्ण विधि हैं। कुछ संशोधनों के साथ आज भी इस विधि का उपयोग नैदानिक मनोवैज्ञानिको द्वारा शोधों एवं चिकित्सा में किया जा रहा हैं।

5.13 सारांश

- जब नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने पेशेवर क्षमता में रोगी के व्यवहार को प्रभावित करे उसमें वांछित परिवर्तन लाता है तो उसे मनोचिकित्सा भी कहा जाता है। मनोश्चिकित्सा के स्वरूप को समझने के लिए यह आवश्यक है इसके सहभागियों अर्थात रोगी एवं चिकित्सक चिकित्सीय संबंध तथा मनोश्चिकित्सा की प्रविधि को भी जाना जाए।
- मनोश्चिकित्सा के दो तरीकों का वर्णन किया गया है - वैयक्तिक तरीका तथा सामूहिक तरीका।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा से तात्पर्य एक ऐसे मनोवैज्ञानिक उपचार दृष्टिकोण से होता हैं जिसमें क्लायंट या रोगी के व्यक्तित्व गतिकी पर मनोविश्लेषण परिप्रेक्ष्य में बल डाला जाता हैं।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा का प्रतिपादन सिगमण्ड फ्रॉयड द्वारा किया गया था।
- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के तीन मुख्य उद्देश्य हैं जिसमें रोगी को अपनी समस्या में सूझ विकसित करना प्रमुख हैं। यही कारण हैं कि इसे सूझ-उन्मुखी चिकित्सा भी कहा जाता हैं।
- फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित मनोश्चिकित्सा के पांच चरण हैं तथा गुण व अवगुण भी हैं जिनपर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया हैं।

5.14 प्रश्नोतर

1- मनोचिकित्सा से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख तरीको पर प्रकाश डालिये?

2- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा में निहित प्रमुख कदमों पर प्रकाश डालिये?

3- मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के गुण व दोषों का वर्णन कीजिये?

4- मनोचिकित्सा का अर्थ बताइये?

5. मनोचिकित्सा के स्वरूप की व्याख्या कीजिए?

6. निम्नांकित प्रश्नों में से लघुउत्तरीय उतर दीजिये-

1- मनोचिकित्सा के उद्देश्य

2- मनोविश्लेषण एवं मुक्त साहचर्य

3- मनोविश्लेषण और स्वप्न विश्लेषण।

4- मनोविश्लेषण एवं स्थानान्तरण।

5. मनोविश्लेषण चिकित्सा के गुण।

6. वैयक्तिक चिकित्सा।

7- सामूहिक चिकित्सा।

5.15 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy : Academic Press.

इकाई - 6

व्यवहार चिकित्सा

Behaviour therapy

क्रमबद्ध असंवेदीकरण, संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा, गेस्टाल्ट चिकित्सा तथा अस्तित्ववादी चिकित्सा

systematic desensitization,cognitive behavior therapies,client centered therapy and Gestalt therapy,existential therapy

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 व्यवहार चिकित्सा का अर्थ

6.4 व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियां

6.5 क्रमबद्ध असंवेदीकरण का अर्थ

6.6 क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का उपयोग

6.7 क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का मूल्यांकन

6.8 संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का अर्थ

6.9 संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का मूल्यांकन

6.10 क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा का अर्थ

6.11 क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का मूल्यांकन

6.12 गेस्टाल्ट चिकित्सा का अर्थ

6.13 गेस्टाल्ट चिकित्सा के लाभ

6.14 अस्तित्ववादी चिकित्सा का अर्थ

6.15 अस्तित्ववादी चिकित्सा का मूल्यांकन

6.16 सारांश

6.17 प्रश्नोतर

6.18 संदर्भ सूची

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में व्यवहार चिकित्सा, क्रमबद्ध असंवेदीकरण, संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा, गेस्टाल्ट चिकित्सा तथा अस्तित्ववादी चिकित्सा का वर्णन किया गया हैं। जिनका संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं-

- व्यवहार चिकित्सा (behaviour therapy) मनोश्चिकित्सा एक ऐसी प्रविधि हैं जिसमें मानसिक रोगों का उपचार कुछ ऐसी प्रविधियों से किया जाता हैं जिसका आधार अनुबंधन (conditioning) के क्षेत्र में विशेषकर पॉवलाव (Pavlov) तथा स्कीनर द्वारा तथा संज्ञानात्मक सीखने के क्षेत्र में किये गये प्रमुख सिद्धांत एवं नियम होते हैं।
- संज्ञानात्मक चिकित्सा वह हैं जो रोगी के संज्ञान जैसे-स्कीमा, विश्वास, आत्मकथन तथा समस्या समाधान उपायों को प्रभावित करके उसके कुसमायोजित व्यवहार को परिवर्तित करने की कोशिश करता हैं।
- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा का प्रतिपादन कार्ल रोजर्स द्वारा **1940** के दशक में किया गया। रोजर्स ने अपनी चिकित्सा प्रविधि में रोगी के लिए क्लायंट तथा चिकित्सक के लिए सलाहकार शब्द का प्रयोग किया हैं। रोजर्स का मत हैं कि चिकित्सा एक प्रक्रिया होती है न कि विभिन्न प्रविधियों का सेट। इनका मत हैं कि चिकित्सक क्लायंट की समस्या का समाधान मात्र उन्हें कुछ कहकर या कुछ पढ़ाकर नहीं कर सकते हैं। उनके अनुसार वास्तविक प्रक्रिया अगर.....तब("If…..then) प्रतिज्ञाप्ति से प्रारंभ होता हैं।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा का प्रतिपादन फ्रेडरिक एस.पर्ल्स द्वारा दिया गया है। गेस्टाल्टपद का अर्थ होता हैं-सम्पूर्ण। यह चिकित्सा मन व शरीर की एकता पर बल डालती हैं जिसमें चिंतन, भाव तथा क्रिया के समन्वय की आवश्यकता पर सर्वाधिक बल डालता हैं।
- अस्तित्ववादी चिकित्सा पद्धति को अपनाने वाले चिकित्सक यह मानकर चलता हैं कि मनुष्य में निम्न विशेषताएं होती हैं- जागरूकता, मननशक्ति, संकटपूर्ण स्थिति में कुछ कर सकने की योग्यता तथा उच्च मात्रा में स्वतंत्रता आदि।

6.2 उद्देश्य

- व्यवहार चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियां को जान सकेंगे।
- क्रमबद्ध असंवेदीकरण का अर्थ समझ सकेंगे।
- क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का उपयोग जान सकेंगे।
- क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का मूल्यांकन कर पायेंगे।
- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का मूल्यांकन कर पायेंगे।
- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।

- क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का मूल्यांकन जान पायेंगे।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा के लाभ को जान पायेंगे।
- अस्तित्ववादी चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- अस्तित्ववादी चिकित्सा का मूल्यांकन कर पायेंगे।

6.3 व्यवहार चिकित्सा का अर्थ (Meaning and Nature of Behaviour Therapy)

व्यवहार चिकित्सा एक ऐसा पद हैं जो नैदानिक मनोविज्ञान में काफी लोकप्रिय हैं। लिण्डस्लेय, स्कीनर और सोलोमोन (Lindsley, Skinner & Solomon) द्वारा एक शोध पत्र जिसे **1953** में प्रकाशित किया गया था, में इस पद अर्थात् व्यवहार चिकित्सा का उपयोग सबसे पहले किया गया था। इन मनोवैज्ञानिकों ने उसका उपयोग पुनः नहीं किया, परन्तु मशहूर मनोवैज्ञानिक आइजेन्क (Eysenck) ने इसका उपयोग जारी रखा। वर्तमान समय में इसका उपयोग काफी अधिक किया जाता हैं। व्यवहार चिकित्सा के लिए कभी-कभी व्यवहार परिमार्जन शब्द का भी प्रयोग किया जाता हैं। जो मनोवैज्ञानिक स्कीनर के सिद्धांतों को मानते हैं वे इस शब्द का प्रयोग करते हैं।

व्यवहार चिकित्सा (behaviour therapy) मनोश्चिकित्सा की एक ऐसी प्रविधि हैं जिसमें मानसिक रोगों का उपचार कुछ ऐसी प्रविधियों से किया जाता हैं जिसका आधार अनुबंधन (conditioning) के क्षेत्र में विशेषकर पॉवलाव (Pavlov) तथा स्कीनर द्वारा तथा संज्ञानात्मक सीखने के क्षेत्र में किये गये प्रमुख सिद्धांत एवं नियम होते हैं। ओल्प (Wolpe,1969) जो व्यवहार चिकित्सा के जनक माने जाते हैं ने व्यवहार चिकित्सा को निम्न प्रकार से परिभाषित किया हैं अपअनुकूलित व्यवहार को परिवर्तित करने के ख्याल से प्रयोगात्मक रूप से स्थापित अधिगम या सीखने के नियमों का उपयोग हैं। अपअनुकूलित आदतों को कमजोर किया जाता हैं तथा उनका त्याग किया जाता हैं अनुकूलित आदतों की शुरूआत की जाती हैं तथा मजबूत किया जाता हैं।

उक्त परिभाषा से यह स्पष्ट हैं कि व्यवहार चिकित्सा में अपअनुकूलित व्यवहार के जगह पर अनुकूलित व्यवहार को मजबूत करने की कोशिश की जाती हैं ताकि व्यक्ति सामान्य व्यवहार ठीक ढ़ंग से करे।

व्यवहार चिकित्सा में अपअनुकूलित व्यक्ति के बारे में निम्नांकित दो पूर्व कल्पनाएं की जाती हैं-

1- अपअनुकूलित या कुसमायोजित व्यक्ति वैसे व्यक्ति को कहा जाता हैं जो जिंदगी की समस्याओं से निपटने के लिए पर्याप्त सामर्थ्य किसी कारण से नहीं विकसित कर पाये या सीख पाये।

2- ऐसे व्यक्ति कुछ दोषपूर्ण समायोजन पैटर्न सीख लेते हैं जो किसी-न-किसी स्त्रोत से पुनर्बलित होकर अपने आप संपोषित होते रहते हैं।

व्यवहार चिकित्सा में अपअनुकूलित व्यवहार को परिवर्तित कर उसकी जगह पर अनुकूलित व्यवहार सिखलाने का प्रयत्न किया जाता हैं। इस क्षेत्र के प्रमुख नैदानिक मनोवैज्ञानिकों जैसे

फारकस(Farkas,1980), रास (Ross,1985)]काजडिन (Kazdin,1978) आदि द्वारा किये गये शोधों के आधार पर प्रमुख नियमों का प्रतिपादन किया गया हैं जो इस प्रकार हैं-

1- सामान्य व असामान्य व्यवहार में निरंतरता होती हैं जो यह बतलाता हैं कि अधिगम या सीखने के जो मौलिक नियमों हैं वे दोनों तरह के व्यवहार पर लागू होते हैं। दूसरे शब्दों में तब यह कहा जा सकता हैं कि व्यक्ति अपअनुकूलित व्यवहार को उन्हीं मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं से सीखता हैं जिनके माध्यम से वह अनुकूलित व्यवहार सीखता हैं।

2- व्यवहार चिकित्सा का उद्देश्य व्यक्ति द्वारा स्पष्ट रूप से किये गए अपअनुकूलित व्यवहार को परिमार्जित करना होता हैं। ऐसे व्यवहार से संबंधित संज्ञान एवं संवेगों पर भी प्रत्यक्ष रूप से ध्यान दिया जाता हैं।

3- व्यवहार चिकित्सा की जितनी भी प्रविधियां हैं वे प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के सैद्धांतिक मूल तथा आनुभाविक तथ्यों पर आधारित हैं। प्रारंभ के दिनों में व्यवहार चिकित्सा मुख्यतः सीखने के सिद्धांतों के तथ्यों पर आधारित था परंतु आजकल इसका आनुभाविक आधार उससे कहीं अधिक विस्तृत हैं।

4- व्यवहार चिकित्सा में रोगी के वर्तमान समस्याओं पर न कि उसके बाल्यावस्था की अनुभूतियों या ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर बल डाला जाता हैं।

5. व्यवहार चिकित्सा में उपचार के प्रयोगात्मक मूल्यांकन (experimental evaluation) के प्रति वचन बद्धता होती हैं। इसमें सिर्फ उन्हीं प्रविधियों को सम्मिलित किया जाता हैं जिनका विभिन्न तरह के प्रयोगात्मक समूह डिजाइन द्वारा वैज्ञानिक रूप से जांच कर किया गया हो।

6. व्यवहार चिकित्सा में चिकित्सक यद्यपि वैज्ञानिक रूप से जांचकर लिये गये प्रविधियों को ही अपनाता हैं। फिर भी वह अपनी सेवा प्रदान करने में नैतिक नियमों एवं दुरूस्त नैदानिक सिद्धांतों के अनुरूप निर्णय लेने के लिए बाध्य होता हैं। व्यवहार चिकित्सा में समस्या आधारित प्रविधियों पर अधिक बल डाला जाता हैं।

उक्त नियमों को ध्यान में रखते हुए एक व्यवहार चिकित्सक चिकित्सा की प्रक्रिया को सम्पन्न करते हैं और वे अपने रोगियों के कल्याण के लिए कार्यरत रहते हैं।

6.4 व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियां (Techniques of Behaviour Therapy)

व्यवहार चिकित्सा की कई प्रविधियां हैं जिसमें निम्नांकित प्रमुख हैं-

1- क्रमबद्ध असंवेदीकरण

2- विरूचि चिकित्सा

3- अन्तःस्फोटात्मक चिकित्सा

4- दृढ़ग्राही चिकित्सा

5. संभाव्यता प्रबंधन

6. मॉडलिंग

6.5 क्रमबद्ध असंवेदीकरण (Systematic dsensitization)

व्यवहार चिकित्सा की यह विधि सबसे लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण विधि हैं। जिसका प्रतिपादन साल्टर (Salter 1949) तथा ओल्प (Wolpe 1958) द्वारा किया गया। इस विधि का उपयोग तब किया जाता हैं जब रोगी में परिस्थिति के प्रति उतम ढ़ग से अनुक्रिया करने की क्षमता होती हैं परन्तु वह ऐसा नहीं करके उससे डर कर या चिंतित होकर अनुक्रिया करता हैं। क्रमबद्ध असंवेदीकरण मूलतः चिंता कम करने की एक प्रविधि हैं जो स्पष्ट नियम पर आधारित हैं।

एक ही समय में व्यक्ति चिंता तथा विश्राम दोनों की अवस्था में वह एक साथ नहीं हो सकता हैं। इसमें रोगी को पहले विश्राम की अवस्था में होने का प्रशिक्षण दिया जाता हैं और जब वह विश्राम की अवस्था में होता हैं तो उसमें चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपकों को बढ़ते क्रम में दिया जाता हैं। अन्ततोगत्वा रोगी चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपकों के प्रति असंवेदित हो जाता हैं क्योंकि रोगी उन्हें विश्राम की अवस्था में ग्रहण करने की अनुभूति प्राप्त कर चुका हैं। ओल्प का मत हैं कि क्रमबद्ध असंवेदीकरण की सफलता का कारण यह हैं कि यह विधि प्रतिअनुबंधन के नियमों पर आधारित होता हैं। चिंता के जगह पर विश्रांति का प्रतिस्थापन प्रतिअनुबंधन का उदाहरण हैं।

ओल्प के अनुसार क्रमबद्ध असंवेदीकरण की प्रविधि के तीन चरण होते हैं जो निम्नांकित हैं-

1- **आराम करने का प्रशिक्षण** (Training in relaxation) **-**

इस अवस्था में रोगी को विश्राम करने का प्रशिक्षण दिया जाता हैं। यह कार्य चिकित्सा के पहले **5.6** सत्रों में पूरा किया जाता हैं। इन सत्रों में रोगी को अपनी मांसपेशियों को संकुचित्त करने और अचानक उन्हें ढीला करने का प्रशिक्षण तब तक दिया जाता हैं जब तक कि रोगी पूर्णरूप से विश्राम की अवस्था प्राप्त करने में सफल नहीं हो जाता हैं। विश्राम का प्रशिक्षण देने में क्रमिक विश्राम प्रशिक्षण (progressive relaxation training) जिसे जैकोवसन द्वारा **1938** में प्रतिपादित किया गया था को अपनाया जाता हैं। इस विधि में विभिन्न तरह के अभ्यासों जिसमें कुछ सेकण्ड के लिए मांसपेशियों को कड़ा किया जाता हैं तथा फिर कुछ सेकण्ड के लिए नरम क्रिया जाता हैं, के माध्यम से रोगी को मानसिक एवं दैहिक रूप से आराम करने का प्रशिक्षण दिया जाता हैं। कभी-कभी विश्राम का प्रशिक्षण देने में सम्मोहन (hypnosis) औषधी तथा मनन आदि का भी सहारा लेना पड़ता हैं।

1- **चिंता के पदानुक्रम का निर्माण** (construction of hierarchies of anxieties)

इस अवस्था में उन उद्धीपकों की सूची तैयार करता हैं जिसमें रोगी में चिंता उत्पन्न होती हैं। इस सूची की विशेषता यह होती हैं कि इसमें ऐसे उद्धीपकों को एक आरोही क्रम में सुव्यवस्थित कर रखा जाता हैं अर्थात् सबसे कम चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपक सबसे नीचे, उससे अधिक चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपक या परिस्थिति को उससे उपर और इसी तरह क्रमिक रूप से एक के बाद एक करते हुए सबसे अधिक चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपक या परिस्थिति को सबसे ऊपर में रखा जाता हैं। जैसे- यदि कोई महिला अपने पति के प्रति ईर्ष्या एवं चिंता के भाव से ग्रस्त हो जाती हैं तो वार्तालाप के दौरान चिकित्सक उन भिन्न-भिन्न उद्धीपकों या परिस्थितियों की एक सूची तैयार करेगा जिसमें उस महिला को अपने पति से ईर्ष्या होती हैं। संभव हैं कि पत्नी यह कहे कि उसे सबसे अधिक चिंता व ईष्या उस समय होती हैं जब वह अपने पति को किसी सुंदर लड़की से हंसहंस कर बातचीत करते हुए

देखती हैं। इससे कम चिंता उस समय होती हैं जब वह उसके ऑफिस की किसी महिला से बातचीत करते हुए देखती हैं और सबसे कम चिंता उस समय होती हैं जब वह अपने पति को किसी नवयुवती पर टकटकी लगाये देखती हैं। इन तीनों तरह की परिस्थितियों को क्रमशः **1**, **2** एवं **3** क्रम में सूचीबद्ध वह कर लेगा इसके बाद वास्तविक असंवेदीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ की जाती हैं।

3. असंवेदीकरण की कार्यविधि (Desensitization) **-**

असंवेदीकरण की प्रक्रिया उपर्युक्त दोनों अवस्थाओं के बाद ही प्रारंभ की जाती हैं। इस अवस्था में रोगी आंख बंद कर आराम कुर्सी पर बैठ जाता हैं और चिकित्सक सबसे पहले एक तटस्थ परिस्थिति का वर्णन करता हैं और रोगी को यह निर्देश दिया जाता हैं कि वह इन परिस्थितियों की कल्पना करे और अपने को पूर्ण विश्राम की स्थिति में भी रखे। रोगी यदि इस तटस्थ उद्धीपक के बाद भी शांत रहता हैं तो उसके सामने रोगी द्वारा बतलाये गये चिंतोत्पादक उद्धीपक परिस्थिति की सूची में सबसे कम चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या उद्धीपक का वर्णन किया जाता हैं। इसके बाद सूची में उससे अधिक चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति का वर्णन किया जाता हैं और इसी तरह क्रमशः बढ़ते हुए मूल्य की चिन्तोत्पादक परिस्थितियों का एक के बाद एक करके वर्णन किया जाता हैं। इसी क्रम में जिस चिंतोत्पादक परिस्थिति की कल्पना करने पर रोगी की विश्रामावस्था भंग हो जाती हैं सत्र वही रोक दिया जाता हैं। इस तरह से कई दिनों तक रोगी को सत्र देकर रोगी को चिन्तोत्पादक परिस्थितियों की कल्पना करने और उसकी उपस्थिति में शांत रहने का प्रशिक्षण किया जाता हैं। यह चिकित्सा तब तक जारी रहती हैं जब तक कि रोगी पूर्णरूपेण उस परिस्थिति में भी शांत रहने में सफल नहीं हो जाता हैं जिससे अधिकतम चिन्ता सूची के अनुसार उसमें उत्पन्न होती थी। इन सभी सत्रों की अवधि **30** मिनट की होती हैं और प्रति सप्ताह **2** से **3** बार सत्र दिये जाते हैं।

असंवेदीकरण प्रविधि के कई प्रारूप हैं जिनमें निम्नांकित दो अधिक प्रचलित हैं-

1- **सामूहिक असंवेदीकरण** (Group desensitization) **-**

इस प्रारूप में कई रोगियों को जिनका लक्षण लगभग समान होता हैं एक साथ बिठाकर चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों या उद्धीपकों का एक सामान्य पदानुक्रम तैयार किया जाता हैं। पदानुक्रम में ऊपर की और बढ़ना उस बिंदु पर रोक दिया जाता हैं जब उन रोगियों में से सबसे कम चिन्तित रोगी को सफलता मिल जाती हैं।

2- **इन विवो असंवेदीकरण** (In vivo desensitization) **-**

यह एक बहुत ही लोकप्रिय प्रारूप हैं जिसमें जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में विभिन्न तरह के चिंता उत्पन्न करने वाले उद्धीपकों से क्रमिक ढ़ंग से रोगी का सामना कराया जाता हैं। इसमें मांसपेशियों को नरम करने का प्रशिक्षण के विकल्प में स्वयं चिकित्सक ही होते हैं जो रोगी को विभिन्न तरह के वातावरण में ले जाकर चिंता अवरोधक का कार्य करते हैं। ब्रिन्टविक एवं सोलियोम (Bryntwick & Solyom,1973) ने असंवेदीकरण के इस प्रारूप का उपयोग दुर्भीति के रोगी के उपचार में काफी सफलतापूर्वक किया हैं।

6.6 क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का उपयोग

क्रमबद्ध असंवेदीकरण की प्रविधि का सफलतापूर्वक उपयोग निम्नांकित परिस्थिति में किया गया हैं-

1- क्रमबद्ध असंवेदीकरण का उपयोग विभिन्न तरह के दुर्भीति के रोग विशेषकर कुतों एवं ऊँचाई से अयुक्तिसंगत डर के उपचार में सफलता पूर्वक किया जाता हैं। कुछ लोगों ने इस प्रविधि का उपयोग कुछ असाधारण दुर्भीति जैसे बैलून से डरना, हवा के झोंका से डरना, कोई विशेष अंक से डरना, नाटे लोगों से डरना, गंदे कमीज से डरना आदि के उपचार में सफलतापूर्वक किया हैं। इस पर निटजिल तथा उनके सहयोगियों ने एक सटीक टिप्पणी इस प्रकार किया हैं। आजकल उपयोग में आने वाला उत्तम-शोधित मनचिकित्सा प्रविधि क्रमबद्ध असंवेदीकरण है जो अच्छे ढ़ंग से परिभाषितउद्धीपकों यथा कुतों एवं ऊँचाईयों से उत्पन्न दुर्भीति के लिये प्रभावी हैं।

2- क्रमबद्ध असंवेदीकरण का उपयोग उस परिस्थिति में भी किया जाता हैं जहाँ व्यक्तियों में चिंता तात्कालिक स्पष्ट न होकर छिपी होती हैं। ऐसी अवस्था में व्यक्ति को ध्यान केन्द्रित करने में कठिनाई होना, खराब स्मृति, संभ्राति, बोलने में धाराप्रवाहिता की कमी, लैंगिक अनिच्छा, पेशीय कार्यों की असंगतता आदि पायी जाती हैं। इन लक्षणों के उपचार में क्रमबद्ध असंवेदीकरण उत्तम माना हैं। व्यामोह, हिस्ट्रीकल पक्षाघात, मद्यपानता, औषध-दुरूपयोग आदि के उपचार में भी यह उपयोगी सिद्ध हुआ हैं।

3. मनोदैहिक रोगों में मनोवैज्ञानिक पक्ष अर्थात् रोगी के चिंता को कम करने में भी क्रमबद्ध असंवेदीकरण की प्रविधि सफल साबित हुई हैं। हालांकि इसके दैहिक पक्ष के उपचार में तो मेडिकल उपचार ही अधिक लाभप्रद साबित हुआ हैं।

6.7 क्रमबद्ध असंवेदीकरण प्रविधि का मूल्यांकन

क्रमबद्ध असंवेदीकरण काफी लाभदायक चिकित्सीय प्रविधि हैं। पाल (Paul,1969) ने इस प्रविधि पर आधारित शोधों के परिणामों के आलोक में यह बतलाया है कि यह प्रविधि उन चिंता समस्याओं को दूर करने में एक असामान्तर विधि साबित हुई हैं जिसमें चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या उद्धीपक बिल्कुल ही स्पष्ट होता हैं। शायद यही कारण हैं कि दुर्भीति के रोगियों के उपचार में इस विधि को काफी सफलता मिली हैं।

फिर भी इस विधि के साथ कुछ कठिनाइयाँ हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. इस प्रविधि द्वारा सभी तरह के रोगियों की चिंताओं तथा डर का उपचार नहीं किया जा सकता हैं। ओल्प के अनुसार निम्नांकित तीन तरह के रोगियों के उपचार में यह विधि लाभप्रद साबित नहीं हुई हैं-

- ऐसे रोगी जिन्हें विश्राम की अवस्था में आने में काफी कठिनाई महसूस होती हैं।
- ऐसे रोगी जो चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों के बारे में वास्तविक सूचना न देकर भ्रामक सूचना देते हैं।
- ऐसे रोगी जिनकी कल्पना शक्ति कमजोर होती हैं।

1- जिन चिंता आधारित समस्याओं की उत्पति एक उद्धीपक से न होकर अनेक उद्धीपको से होती हैं| उनका भी उपचार क्रमबद्ध असंवेदीकरण से ठीक ढ़ंग से नहीं होता हैं। जैसेमनोग्रसित-बाध्यता स्नायुविकृति, दर्दनाक आघात, एगोरियाफोबिया आदि के उपचार में यह प्रविधि अधिक सफलीभूत नहीं हो पाया हैं।

2- डेविडसन तथा विलसन (Davidson & Wilson,1973) का मत हैं कि क्रमबद्ध असंवेदीकरण की प्रक्रिया सचमुच में प्रतिअनुबंधन पर आधारित न होकर विलोपन पर आधारित हैं। जब रोगी बार-बार चिंतोत्पादक परिस्थिति का सामना करता हैं परंतु कोई बुरी अनुभूति नहीं उत्पन्न होती हैं तो अन्ततोगत्वा चिंता से संबंधित अनुक्रियाओं का अपने आप विलोपन हो जाता हैं।

इन कठिनाइयों के बावजूद हम कह सकते हैं कि क्रमबद्ध असंवेदीकरण आज भी नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक उतम रूप से वैधीकृत उपचार प्रविधि हैं।

6.8 संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive Behaviour Therapy or CBT)

अर्थ एवं स्वरूप -

व्यवहार चिकित्सा में व्यक्ति के प्रेक्षणीय व्यवहार तथा प्रेक्षणीय पुनर्बलन में संबंध जोड़कर कुसमायोजित व्यवहार को हटाने तथा समायोजित व्यवहार को सीखाने की कोशिश की जाती हैं। इसमें रोगी के संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए चिकित्सा की जाती हैं जो अधिक लाभप्रद हैं। निटीजल, वन्सर्टीन तथा मिलिक के शब्दों में संज्ञानात्मक चिकित्सा को इस प्रकार परिभाषित किया जाता हैं| संज्ञानात्मक चिकित्सा को ऐसे उपचार उपागम के रूप में परिभाषित किया जाता हैं जो रोगी के संज्ञान जैसे-स्कीमा, विश्वास, आत्मकथन तथा समस्या समाधान उपायों को प्रभावित करके उसके कुसमायोजित व्यवहार को परिवर्तित करने की कोशिश करता हैं।इस परिभाषा का विश्लेषण करने पर हमें संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के स्वरूप के बारे में निम्नांकित तथ्य प्राप्त होते हैं-

- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा में रोगात्मक व्यवहार का कारण गलत संज्ञान या चिंतन माना जाता हैं।
- इस चिकित्सा में रोगी के इस गलत संज्ञान या चिंतन को दूर कके उसके जगह पर सही संज्ञान या चिंतन विकसित करने की कोशिश की जाती हैं। इस प्रक्रिया को संज्ञानात्मक पुनर्संरचना कहा जाता हैं।

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के प्रकार -

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के मुख्य प्रकार निम्नांकित हैं-

1- रैसनल-इमोटिव चिकित्सा

2- बेक का संज्ञानात्मक चिकित्सा

3- तनाव-टीका चिकित्सा

4- सामाजिक समस्या समाधान

5. बहुआयामी चिकित्सा

6.9 संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का मूल्यांकन

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के विभिन्न प्रविधि के कुछ लाभ तथा हानि हैं इसके प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं-

1- संज्ञानात्मक चिकित्सकों का मत हैं कि इस चिकित्सा पद्धति का व्यवहारिक मूल्य अन्य चिकित्सा पद्धति के व्यवहारिक मूल्य से अधिक हैं। इन लोगों का मत हैं कि संज्ञानात्मक चिकित्सा पद्धति इतनी सरल हैं कि इसका अनुप्रयोग किसी भी नैदानिक मनोवैज्ञानिक द्वारा आसानी से किया जा सकता हैं।

2- संज्ञानात्मक चिकित्सा कुछ मानसिक रोगों के लिए एक अचूक एवं सबसे उत्तम चिकित्सा पद्धति साबित हुई हैं क्योंकि इसका परिणाम अधिक प्रभावी एवं धनात्मक पाया गया हैं।

3- माइकेलसन तथा मारकियोनी ने संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा को चिंता विकृति तथा बेक एवं फ्रीमेन ने इसे कुछ व्यक्तित्व विकृति एवं व्यसनी विकृति के लिए भी काफी लाभदायक माना हैं।

4. संज्ञानात्मक चिकित्सा का एक अन्य विशेष लाभ यह हैं कि इस तरह की चिकित्सा पद्धति में एक स्पष्ट नियमावली होता हैं जिसमें यह स्पष्ट निर्देश होता हैं कि पद्धति को किस ढंग से क्रियान्वयन किया जाता हैं तथा उसका मूल्यांकन किया जाता हैं।

इन लाभों के बावजूद संज्ञानात्मक चिकित्सा की कुछ हानियॉं भी हैं जो इस प्रकार हैं-

1- कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत हैं कि व्यक्ति की जिंदगी हमेशा विवेकी नहीं होता हैं और किसी व्यक्ति के लिए मात्र इतना समझ लेने से कि उसकी जिंदगी अविवेकी पूर्वकल्पनाओं पर आधारित हैं, से पर्याप्त चिकित्सीय परिवर्तन नहीं आ जाते हैं। कभी-कभी अविवेकी चिंतन निंरतन बने रहते हैं और उसके व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

2- कुछ ऐसी परिस्थितियां भी होती हैं जिसमें व्यक्ति दुनिया के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना कठिन पाता हैं या वह ऐसा नहीं कर पाता हैं। फलतः ऐसी समस्याओं का उपचार संज्ञानात्मक चिकित्सा से होना संभव नहीं हो पाता हैं।

3- विडेल एवं टर्नर ने संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा में निम्नांकित तीन तरह के संप्रत्ययात्मक कठिनाइयों का उल्लेख किया हैं-

- संज्ञान पद की परिभाषा असंगत ढ़ंग से दी गयी हैं। इस चिकित्सा पद्धति में संज्ञान को कभी एक प्रक्रिया मानकर परिभाषित किया गया है तो कभी उसे एक परिणाम मानकर परिभाषित किया गया हैं।
- कई सांवेगिक विकृतियों का कारण विकृत संज्ञाननहीं होते पाये गए हैं। इससे इस चिकित्सा पद्धति की मौलिक पूर्वकल्पना को ठेस पहुंचती हैं।
- परम्परागत व्यवहार चिकित्सा तथा संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के बीच अंतर करना कठिन हैं क्योंकि अधिकतर संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा कई असंज्ञानात्मक प्रविधियां जैसे- विशेष भूमिका निर्वाह, उल्लेखित गृह कार्य आदि का भी उपयोग उपचार में करते हैं।

उक्त अलाभों के बावजूद संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का उपयोग काफी किया जाता हैं। आधुनिक नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत हैं कि संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा को यदि व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियों के साथ मिलाकर उपयोग किया गया हैं, तो उसका परिणाम अधिक गुणकारी एवं लाभकारी होता हैं।

6.10 क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा (Client-Centered Therapy)

इस चिकित्सा का प्रतिपादन कार्ल रोजर्स द्वारा **1940** के दशक में किया गया। रोजर्स ने अपनी चिकित्सा प्रविधि में रोगी के लिए क्लायंट तथा चिकित्सक के लिए सलाहकार शब्द का प्रयोग किया हैं। रोजर्स का मत हैं कि चिकित्सा एक प्रक्रिया होती है न कि विभिन्न प्रविधियों का सेट। इनका मत हैं कि चिकित्सक क्लायंट की समस्या का समाधान मात्र उन्हें कुछ कहकर या कुछ पढ़ाकर नहीं कर सकते हैं। उनके अनुसार वास्तविक प्रक्रिया अगर.....तब("If…..then) प्रतिज्ञाप्ति से प्रारंभ होता हैं। इसका मतलब यह हुआ कि यहाँ मान्यता यह होती है कि अगर चिकित्सक द्वारा सही परिस्थिति उत्पन्न की जाती हैं तब क्लायंट में अपने आप परिवर्तन आयेगा और उसमें वर्द्धन होगा।

क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का उद्देश्य क्लायंट में ऐसी नई अनुभूति पैदा करना होता है जिससे वर्धन प्रकिया का पुर्न:चलन हो सके इसके लिये चिकित्सक को इस प्रकार व्यवहार करना पडता है।

1- चिकित्सा प्रकिया में चिकित्सक क्लायंट की व्यक्त इच्छाओं एवं भावनाओं के प्रति इस ढंग से अनुक्रिया करता है जो योग्य एवं उत्कृष्ट अवस्थाओं की उत्पत्ति में बाधक नहीं होता है।

2- चिकित्सा प्रक्रिया में चिकित्सक क्लायंट को जैसा वह वर्तमान में है पूर्णतः स्वीकार करता है।

3- चिकित्सा प्रक्रिया में चिकित्सक क्लायंट को एक व्यक्ति के रूप में स्वीकार कर कार्य करता है।

उक्त तथ्यों के अनुरूप इस प्रक्रिया में ऐसे अन्तरव्यक्तिक संबंध को उत्पन्न किया जाता है जिसका उपयोग व्यक्तिगत वर्धन के लिये आगे करता है। रोजर्स के अनुसार इस तरह का वर्धन उत्पन्न करने वाला सम्बन्ध की उत्पत्ति के लिये चिकित्सक में अन्य बातों के अलावा निम्नांकित तीन गुणों का होना अनिवार्य है।

1- शर्तहीन धनात्मक सम्बन्ध

2- परानुभूति

3-संगतता

शर्तहीन धनात्मक सम्बन्ध - चिकित्सा की सफलता के लिये अतिआवश्यक माना जाता है। इसमें चिकित्सक क्लायंट पर एक व्यक्ति के रूप में विशेष ध्यान देते है जिसमें वास्तविक धनात्मक भाव की अभिव्यक्ति होती है इससे क्लायंट में आत्मअभिव्यक्ति की तीव्र प्रेरणा जागती है।

चिकित्सक क्लायंट के भाव तथा विचार से असहमत होने पर भी वह तटस्थ होकर बिना किसी तरह की प्रतिक्रिया दिखलाए उसे स्वीकार करके क्लायंट में वर्धन उत्पन्न करनें वाली अनुभूति को बढ़ावा देता है।

यदि क्लायंट यह समझता है कि उसकी अन्तःशक्ति में चिकित्सक को विश्वास है तो उसमें आत्मनिर्भर होने का गुण विकसित होता है। अतः चिकित्सक को किसी प्रकार की राय क्लायंट को

नहीं देनी चाहिये किसी प्रकार की जवाबदेही नहीं लेनी चाहिये और किसी प्रकार का निर्णय अपनी और से नहीं लेना चाहिये।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि रोगी में दूसरों से सहायता प्राप्त करने की इच्छा वैसे-वैसे कम होती जाती हैं जैसे-जैसे वह स्वनिर्देशित मार्ग पर धनात्मक और आत्म निर्देशित क्रियाओं की और विश्वासपूर्ण ढ़ंग से अग्रसर होता हैं। उसमें यह विश्वास बढ़ता जाता हैं, वह अनुभव करने लगता हैं कि अब उपचार समाप्त हो जाना चाहिए। क्लायंट स्वयं ही उपचार समापन का निर्णय करने लगता हैं। यह उपचार का अन्तिम पद होता है। इस अवस्था तक क्लायंट स्वयं को समस्याओं के समाधान के लिए योग्य समझने लगता हैं।

6.11 क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का मूल्यांकन

1- इस चिकित्सा पद्धति की सहायता से केवल साधारण प्रकार की असामान्यताओं का उपचार किया जाता है। गंभीर मानसिक रोगों के उपचार में इस चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता संदेहास्पद रही है। मनोचिकित्सकों का यह विचार है कि इस पद्धति द्वारा रोगी के आत्मप्रत्य और ऋणात्मक भावनाओं को परिवर्तित कर स्वस्थ बनाया जा सकता है।

2- कुसमायोजन की समस्या से ग्रस्त लोगों के उपचार के लिये यह चिकित्सा पद्धति बहुत अधिक उपयोगी है मनोविश्लेषण विधि की अपेक्षा यह एक सरल विधि है।

3- यह विधि गंभीर मानसिक रोगियों के उपचार के लिये उपयुक्त नहीं है जिन रोगियों का जीवन की वास्तविकताओं से जितना ही कम सम्बन्ध है उनके उपचार के लिये यह विधि उतनी ही कम उपयोगी है।

4- इस उपचार पद्धति द्वारा लक्षणात्मक उपचार होता है रोग के कारणों की गहनता से अध्ययन नहीं किया जाता है अतः रोगी में लक्षणों के पुनः उत्पन्न होने की सम्भावना अधिक रहती है।

5. इस विधि द्वारा चिकित्सा कर रहे चिकित्सक की परानुभूति, यर्थाथता और सौहार्दता आदि पर इस उपचार पद्धति के धनात्मक परिणाम निर्भर करते है। रार्जस की इस मान्यता को अनेक मनोवैज्ञानिक सही नही मानते है।

6. यह चिकित्सा पद्धति उन रोगियों के लिये उपयोगी नहीं है जो साधारण से कम बुद्धि के है या जो गंभीर अथवा तीव्र बीमार है।

7- कालमेन का विचार है कि रार्जस की इस चिकित्सा पद्धति ने अनेक महत्वपूर्ण खोजो को प्रोत्साहित किया है जिससे मनोचिकित्सा की प्रक्रियाओं और परिणामों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है। इस दिशा में हुए अनुसन्धानों ने समकालीन विचारकों सिद्धान्त निर्माता और मनोचिकित्सकों के विचारो कों महत्वपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है।

6.12 गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt Therapy)

गेस्टाल्ट चिकित्सा का प्रतिपादन फ्रेडरिक एस. पर्ल्स द्वारा दिया गया है। गेस्टाल्टपद का अर्थ होता हैं-सम्पूर्ण। यह चिकित्सा मन व शरीर की एकता पर बल डालती हैं जिसमें चिंतन भाव तथा क्रिया के समन्वय की आवश्यकता पर सर्वाधिक बल डालता हैं।

गेस्टाल्ट चिकित्सा का मुख्य लक्ष्य रोगी के वर्द्धन की रूकी प्रक्रिया को फिर से चालू करना होता हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति निम्नांकित दो तरह से की जाती हैं-

1- रोगी को उन भावों से अवगत कराने जो उनके व्यक्तित्व के प्रमुख हिस्सा हैं परंतु जिसे उसने ठीक से नहीं समझने के कारण अलग रखा था की कोशिश की जाती हैं।

2- रोगी को उन भावों व मूल्यों से अवगत कराया जाता हैं जिसे वे यह समझते हैं कि उनके व्यक्तित्व का यथार्थ हिस्सा हैं जबकि सच्चाई यह हैं कि व्यक्ति उन्हें दूसरें लोगों से लिया हैं।

इस तरह से गेस्टाल्ट चिकित्सा में रोगी को आत्मन के उन यथार्थ पहलुओं पुनः ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हैं जिसे अस्वीकृत कर दिया गया हैं। इसमें वर्तमान अनुभूतियों पर बल डाला जाता हैं न कि दमित आवेगों की प्राप्ति पर तथा भविष्य के बारे में अनुमान लगाने की अनुभूतियों पर। इस प्रकार गेस्टाल्ट चिकित्सा में तीन संप्रत्यय हैं जो इस प्रकार हैं-

- वर्तमान की अनुभूतियां- इस चिकित्सा में चिकित्सक भरपूर यह कोशिश करता हैं कि रोगी का ध्यान उसके वर्तमान भावों चिंतनों एवं अनुभूतियों पर रहे।
- जानकारी- जानकारी से तात्पर्य अनुभूतियों को स्वीकार करने की क्षमता से होती हैं।
- उतरदायित्व- इस संप्रत्यय में व्यक्ति अपनी क्रियाओं एवं भावों की जवाबदेही अपने कंधों पर लेता हैं।

गेस्टाल्ट चिकित्सा में दो तरह की प्रविधियां सम्मिलित होती हैं। एक नियम तथा दूसरे को खेल कहा जाता हैं। इस चिकित्सा के प्रमुख नियम इस प्रकार हैं-

1- रोगी को वर्तमान काल में बातचीत करने के लिए कहा जाता हैं।

2- बातचीत किसी के बारे में नहीं बल्कि समान्तर स्तर पर की जाती हैं।

3- रोगी में उतरदायित्व का भाव उत्पन्न करने के लिए मैं शब्द का प्रयोग अधिक करने के लिए कहा जाता हैं।

4- रोगी सतत् रूप से तात्कालिक अनुभूतियों पर ध्यान केन्द्रित करता हैं।

कोई गप-शप नहीं की जाती हैं।

5 यह कोशिश की जाती हैं कि रोगी किसी तरह का कोई प्रश्न न करें।

दूसरी प्रविधि खेल में रोगी को जोर-जोर से बोलकर टिप्पणी या वाक्य को दोहराने के लिए कहा जाता हैं जिसे चिकित्सक महत्वपूर्ण समझकर कहता हैं। इसी तरह अन्य खेल जैसे-भूमिका निर्वाह में रोगी को अलग-अलग भूमिका करनी पड़ती हैं।

6.13 गेस्टाल्ट चिकित्सा के लाभ

1- गेस्टाल्ट चिकित्सा में क्लायंट के व्यवहार में परिवर्तन करने के लिए उसके गत अनुभूतियों का विश्लेषण करने की आवश्यकता नहीं होती हैं।

2- गेस्टाल्ट चिकित्सा की संचालन विधियां काफी सरल एवं सुगम हैं।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि गेस्टाल्ट चिकित्सा उन नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक उत्तम चिकित्सा प्रविधि रही हैं जिन्हें मानवता वादी सिद्धांतों पर अधिक विश्वास हैं।

6.14 अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existental psychotherapy)

लैंग एक ब्रिटिस मनोचिकित्सक हैं जिन्होनें अस्तित्वपरक उपचार पद्धति और संबंधित विचारधारा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया हैं। आपके अनुसार मनोविक्षिप्त विघटन का महत्वपूर्ण कारण विकृतिजन्य सामाजिक संबंध हैं। यह संबंध व्यक्ति पर अनेक हानिकारक प्रभाव डालते हैं। आपके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी संस्कृति और अपने समूह का अभिन्न अंग हैं। लैंग का विचार हैं कि व्यक्ति के आंतरिक आत्म और बाह्य आत्म के मध्य दरार का कारण जीवन की द्वन्द्वात्मक परिस्थितियां और सामाजिक मांगें हैं। मानसिक विकार व्यक्ति में उस समय उत्पन्न होते हैं। जब आंतरिक आत्म और बाह्य आत्म के मध्य दरार बढ़ जाती हैं। उनका विचार हैं कि मानसिक रोगों से ग्रस्त व्यक्ति की प्रतिक्रियाएं समग्रता की पुनःप्राप्ति का प्रयास मात्र हैं।

इस प्रकार कि उपचार पद्धति में सर्वप्रथम इस बात पर बल दिया जाता हैं कि अपने अस्तित्व का अनुभव किस प्रकार करना हैं और प्रत्येक व्यक्ति में अपने साथियों के प्रति भी उतरदायित्व का अनुभव करता हैं। वह अपने जीवन के प्रति क्या योगदान रखना चाहता हैं।

अस्तित्ववादी मनोवैज्ञानिक मानव की निम्न चीजों पर भी बल देते हैं- संकटपूर्ण स्थिति, समकालीन संस्कृति से व्यक्ति तथा अव्यक्तिकरण |

इस उपचार पद्धति को अपनाने वाले चिकित्सक यह मानकर चलता हैं कि मनुष्य में निम्न विशेषताएं होती हैं- जागरूकता, मननशक्ति, संकटपूर्ण स्थिति में कुछ कर सकने की योग्यता तथा उच्च मात्रा में स्वतंत्रता आदि। रोगी के लिए यह निर्णय लेना हैं कि वह निम्नांकित संप्रत्ययों को किस प्रकार करेगा- आत्म परिभाषा, आत्म वास्तवीकरण जीवनमूल्यों की स्थापना आदि। मनोचिकित्सक इस बात पर बल देता हैं कि रोगी अपने अस्तित्व का अर्थ ढूंढने योग्य हो जाये और अपने अस्तित्व से संबंधित समस्याओं के समाधान के हल ढूंढ ले।

अस्तित्ववादी चिकित्सा के प्रमुख लक्ष्य निम्नांकित हैं-

1- अस्तित्ववादी चिकित्सक रोगी का परिघटनात्मक दृष्टिकोण अपनाने की सलाह देकर उसके प्रतिसमर्थन एवं परानुभूति दिखाते हैं। इसके बाद चिकित्सक उसे अपना व्यवहार, भाव, संबंध एवं जिदंगी के सही अर्थ को समझाते हैं, परन्तु रोगी के वर्तमान चयनों को वक अधिक महत्व देते हैं।

2- अस्तित्ववादी चिकित्सक रोगी की खुला एवं स्नेहपूर्ण वातावरण में अपने आप को दूसरों से संबंधित करने की पर्याप्तप्रेरणा देता हैं ताकि रोगी की यह चिंता दूर हो सके कि वह अकेला है।

3 अस्तित्ववादी चिकित्सक का लक्ष्य रोगी में वर्द्धन तथा उचित्त चयन के लिये छिपे अंतःशक्ति से उसे अवगत कराना हैं।

अस्तित्ववादी चिकित्सा के लाभ-

1- अस्तित्ववादी चिकित्सा एक ऐसी पहली चिकित्सा हैं जिसमें रोगी को अपने भीतर छिपे अंतःशक्ति से अवगत कराकर उसे अर्थपूर्ण ढ़ंग से जीवित रहने की प्रेरणा दी जाती हैं।

2- अस्तित्ववादी चिकित्सा में रोगी अपने अस्तित्व को वास्तविक ढ़ग से समझने की कोशिश करता हैं इसलिए इससे अस्तित्ववादी स्नायुविकृति लक्षणों को स्थायी रूप् से दूर करने में काफी मदद मिलती हैं।

6.15 अस्तित्ववादी चिकित्सा का मूल्यांकन

अस्तित्ववादी चिकित्सा की आलोचना मुख्यतः इस आधार पर की जाती हैं कि इस चिकित्सा का कोई क्रमबद्ध और वैज्ञानिक आधार नहीं हैं। इस उपचार पद्धति के प्रतिपादकों में इस बात पर मतभेद है कि किस पक्ष पर अधिक बल दिया जाएँ और किस प्रकार कम बल किया जाए। यह उपचार पद्धति न तो पूर्ण हैं और न इसमें स्पष्टता हैं।

कोलमैन **1969** के अनुसार इस पद्धति की अनेक त्रुटियां के बाद इसके अनेक प्रत्ययों पर सामान्य वैज्ञानिकों का विशेष रूप से ध्यान आकर्षित हुआ हैं। इसके कुछ प्रत्यय हैं- मनुष्य की अद्वितीयता, स्वतंत्रता, उतरदायित्व, सार्थकता और स्वयं के विकास की जिज्ञासा, अनस्तित्व और अस्तित्व के बीच अंतर्द्वंद्व आदि।

6.16 सारांश

- व्यवहार चिकित्सा मनोश्चिकित्सा की एक ऐसी प्रविधि हैं जिसमें मानसिक रोगों का उपचार कुछ ऐसी प्रविधियों से किया जाता हैं जिसका आधार अनुबन्धन के क्षेत्र में विशेषकर पैवलाव, स्कीनर द्वारा प्रतिपादित सीखने के नियम तथा संज्ञानात्मक सीखना के क्षेत्र में किये गए प्रमुख सिद्धांत एवं नियम हैं।
- संज्ञानात्मक चिकित्सा को यदि व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियों के साथ मिलाकर उपयोग किया जाए तो उसका परिणाम अधिक गुणकारी एवं लाभकारी होता हैं।
- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा का प्रतिपादन रोजर्स द्वारा किया गया। इस तरह की चिकित्सा में चिकित्सक एक अनिदेशात्मक तथा अनिर्णयात्मक रूप् अपनाकर रोगी का उपचार उसमें सूझ उत्पन्न करके करता हैं।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा का प्रतिपादन फ्रिज पल्सरा द्वारा किया गया । इस तरह की चिकित्सा में रोगी के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण पहलू पर ध्यान देकर उसमें सूझ उत्पन्न करने की कोशिश की जाती हैं।
- अस्तित्ववादी चिकित्सा में चिकित्सक अस्तित्ववादी पसंदों से उत्पन्न चिंताओं को दूर करने का भरपूर प्रयास करता हैं।

6.17 प्रश्नोतर

1- व्यवहार चिकित्सा क्या है? इसका संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

2- क्रमबद्ध असंवेदीकरण क्या हैं? इसके सापेक्ष लाभ व हानि का वर्णन करें।

3- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा क्या हैं? यह व्यवहार चिकित्सा से किस प्रकार भिन्न हैं।

4- संज्ञानात्मक चिकित्सा की प्रविधियों के नाम बताइये?

5. क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा क्या हैं? इसके लाभ बताइये।

6. गेस्टाल्ट चिकित्सा के प्रमुख संप्रत्यय क्या हैं?

7- गेस्टाल्ट चिकित्सा के प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए?

8- अस्तित्ववादी चिकित्सा क्या हैं? इसके लाभों का वर्णन करें।

6.18 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 7

चिन्ता विकृति

Anxiety disorders

दु र्भीति , मनोग्रस्तता - बाध्यता विकृति, सामान्यीकृत चिन्ता विकृत तथा उत्तर - आघातीय प्रतिबल विकृति

Panic disorder and phobias,generalized anxiety disorder or posttraumatic stress disorder

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 चिन्ता विकृति **:** दुर्भीति

7.4 दुर्भीति

7.5 दुर्भीति की नैदानिक विशेषताएँ और लक्षण

7.6 दुर्भीति के कुछ अन्य लक्षण

7.7 दुर्भीति के प्रकार

7.8 दुर्भीति के कारण

7.9 दुर्भीति का उपचार

7.10 चिन्ता विकृति : मनोग्रस्तता - बाध्यता विकृति

7.11 मनोग्रस्ता बाध्यता

7.12 OCD के कारण

7.13 मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति का उपचार

7.14 सामान्यीकृत चिन्ता विकृत

7.15 GAD के लक्षण

7.16 चिन्ता सामान्यीकृत विकृति के उपचार

7.17 उत्तर - आघातीय प्रतिबल विकृति

7.18 PTSD के लक्षण

7.19 PTSD के कारण

7.20 PTSD का उपचार

7.21 भीषिका या आतंक विकृति

7.22 सारांश

7.23 प्रश्नोत्तर

7.24 संदर्भसूची

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के अंर्तगत उन विकृतियों के बारे में बताया गया हैं कि चिन्ता विकृति से संबंधितहैं। चिन्ता विकृतियों के अन्तर्गत जो **विकृतियाँ** आती है, उन विकृतियों के रोगी में अवास्तविक चिन्ता और अतार्किक भय (Irrational fear) इतनी अधिक मात्रा में पाया जाता है जिससे रोगी का सामान्य जीवन और व्यवहार कुसमायोजित (Maladjusted) प्रकार का हो जाता है।

7.2 उद्देश्य

- दुर्भीति को समझाया गया हैं।
- दुर्भीति की नैदानिक विशेषताएँ, लक्षण, प्रकार तथा उपचार को बताया गया हैं।
- चिन्ता विकृति : मनोग्रस्तता - बाध्यता विकृति के बारे में बताया गया हैं।
- OCD के कारण को समझ पायेंगे।
- मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति का उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- सामान्यीकृत चिन्ता विकृत के लक्षण तथा उपचार को समझ सकेंगे
- उत्तर - आघातीय प्रतिबल विकृति के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- PTSD के लक्षण, कारण तथा उपचार को समझ सकेगे।

7.3 चिन्ता विकृति: दुर्भीति

DSM-IV वर्गीकरण में स्नायुविकृति या मनोस्यानुविकृति जैसी पुरानी श्रेणी को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा गया है -

1. चिन्ता विकृतियाँ (Anxiety Disorder)
2. कायरूप विकृतियाँ (Somatoform Disorder)
3. विच्छेदी विकृतियाँ (Dissociative Disorder)

चिन्ता विकृतियों के अन्तर्गत जो **विकृतियाँ** आती है, उन विकृतियों के रोगी में अवास्तविक चिन्ता और अतार्किक भय (Irrational fear) इतनी अधिक मात्रा में पाया जाता है जिससे रोगी का सामान्य जीवन और व्यवहार कुसमायोजित (Maladjusted) प्रकार का हो जाता है। DSM-IV में चिन्ता विकृतियों के निम्नलिखित प्रकार बताये गये है -

1. दुर्भीति (Phobia),
2. मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति

3. भीषीका विकृति (Panic Disorder),

4. सामान्यीकृत चिन्ता विकृति (Generalized anxiety Disorder or G. D.)

5. उत्तर आघातीय तनाव विकृति (Post traumatic Stress, Disorder or P.T.S.D.)

6. तीव्र तनाव विकृति (Active stress Disorder or A. S. D.)

इनका वर्णन निम्नांकित हैं।

7.4 दुर्भीति (Phobia)

दुर्भीति एक अति सामान्य चिन्ता विकृति है। इस मनोरोग में व्यक्ति किसी वस्तु या परिस्थिति से सतत् और असन्तुलित रूप से डरता रहता है। वास्तव में देखा जाये तो यह वस्तु या परिस्थिति व्यक्ति के लिए बहुत कम खतरनाक होती है। दुर्भीति को एक प्रकार का अकारण भय भी कह सकते हैं जो किसी वस्तु, व्यक्ति या प्राणी आदि के प्रति होता है। दुर्भीति का रोगी भय उद्दीपक को बढा-चढ़ाकर स्वीकार करता है, और अकारण ही डरता है। यह रोग स्त्रियों में बहुत अधिक और पुरूषों में कम मात्रा में पाया जाता है। अन्य आयु अवस्थाओं की अपेक्षा यह रोग प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पाया जाता है। भय तो प्रत्येक व्यक्ति में पाया जाता है परन्तु फोबिया के रोगों का भय अतिरजिंत और असंगत होता है। इस सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने से पूर्व आवश्यक है कि दुर्भीति के अर्थ को समझ लिया जाये।

कैमरान (N. Cameron, 1963) के अनुसार - ''फोबिया एक ऐसा प्रयास है जो विस्थापन, प्रक्षेपण और परिहार की प्रतिक्रियाओं के द्वारा उत्पन्न तनाव और चिन्ता को कम करता है।'' सर्वप्रथम किसी बाह्य परिस्थिति के प्रति विस्थापन और प्रक्षेपण के द्वारा असंगत और अतार्किक भय विकसित होगा, फिर रोगी इस भय की परिस्थिति से दूर भागनें की प्रक्रिया अपनाता है। यह वह व्याधिकीय भय है, जो चिन्ता आक्रमण से प्रारम्भ होता है या उत्पन्न होता है। बाद में रोगी अपनी चिन्ता को वातावरण के साथ सम्बद्ध कर देता है।

कोलमैन (James C. Coleman, 1981) के अनुसार-''फोबिया किसी वस्तु, परिस्थिति के प्रति सतत् भय है जो रोगी के लिए वास्तविक खतरा उपस्थिति नहीं करता है अथवा इस रोग में खतरा वास्तविक स्थिति से अत्यधिक बढ़े-चढ़े अनुपात में व्यक्त होता है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर दुर्भीति को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि, इस मनोविकृति में व्यक्ति के किसी वस्तु, परिस्थिति या जानवर के प्रति सतत् भय होता है, जो रोगी के लिए वास्तविक खतरा उत्पन्न नहीं करता है। इसमें व्यक्ति खतरा अत्यधिक बढ़े-चढ़े रूप में अनुभव करता है।

7.5 दुर्भीति की नैदानिक विशेषताएँ और लक्षण (Clinical Features of Symptoms of Phobia)

अमेरिकन मनोचिकित्सक संघ (American Psychiatric Association - A.P.A., 1994) के अनुसार, दुर्भीति की नैदानिक विशेषताएँ निम्नलिखित प्रकार से हैं -

1- दुर्भीति में व्यक्ति विशिष्ट परिस्थिति, वस्तु या पशु से अधिक और सतत् रूप से डरता हैं। उसका भय वास्तविक भय के अनुपात की अपेक्षा बहुत अधिक होता हैं।

2- जब व्यक्ति विशिष्ट परिस्थिति या वस्तु आदि का सामना करता हैं तब उसमें अत्यधिक चिन्ता उत्पन्न हो जाती हैं और व्यक्ति में विभीषिका का दौरा (Panic Attack) भी पड़ सकता हैं।

3- इस रोग में व्यक्ति यह जानता हैं कि उसका भय अत्यधिक हैं और उसका भय अवास्तविक भी हैं।

4- दुर्भीति में व्यक्ति विशिष्ट परिस्थिति या वस्तु से दूर रहना चाहता हैं जिसके कारण उसमें दुर्भीति उत्पन्न होती हैं।

5- यदि उपरोक्त चार लक्षण किसी अन्य विशिष्ट रोग से उत्पन्न नहीं हुए हैं तो वह दुर्भीति के लक्षण माने जायेंगे।

7.6 दुर्भीति के कुछ अन्य लक्षण (Other Symptoms)

1- अतार्किक भय (Irrational Fear) - फोबिया किसी भी प्रकार का क्यों न हो, उसमें अतार्किक भय केन्द्रीय लक्षण होता हैं।रोगी अपने भय की अतार्किकता को समझता हैं फिर भी अपने व्यवहार को बदल नहीं पाता हैं। रोगी को चाहे कितना समझाया जाए, चाहे कितनी सान्त्वना दी जाए तथा चाहे प्रमाण ही क्यों न प्रस्तुत किये जायें कि उसका भय निराधार हैं। इन सब प्रयासों के बाद भी रोगी को भय से मुक्ति नहीं मिलती हैं।

2- चिन्ता (Anxiety) - फोबिया का दूसरा महत्वपूर्ण लक्ष्य चिन्ता हैं। जब व्यक्ति को भय उद्दीपक उपस्थित होने की सम्भावना होती हैं तो सशंकित और आतंकित हो जाता हैं। बहुधा यह देखा गया हैं कि जब रोगी के सामने भय उद्दीपक उपस्थित होता हैं तो उसमें चिन्ता उत्पन्न हो जाती हैं। चिन्ता की मात्रा परिस्थिति के अनुसार कितनी भी हो सकती हैं। उसकी चिन्ता साधारण भी हो सकती हैं, तीव्र भी हो सकती हैं और उसमें चिन्ता के दौरे (Anxiety Attacks) भी पड़ सकते हैं।

3- सामान्य लक्षण (General Symptoms) -

(1) रोगी भय की परिस्थिति से बचने का हर प्रयास करता हैं।

(2) जब भी उत्पन्न होता हैं, भय उसके दैनिक कार्यों में बाधक होता हैं।

(3) सिर दर्द, पीठ दर्द, पेट दर्द, सर में चक्कर, पेट खराब आदि के लक्षण पाये जाते हैं।

(4) रोगी में हीनता की भावना पायी जाती हैं।

(5) रोगी में कभी-कभी मनोग्रस्तता का लक्षण भी दिखायी देता हैं।

4- भय स्थिति का सामान्यीकरण (Generalization of Phobic Situation) - बहुधा यह देखा गया हैं कि रोगी भय उद्दीपक का सामान्यीकरण कर लेता हैं। उदाहरण के लिए, रोगी यदि एक कुत्तें से डरता हैं तो वह उस प्रकार के सभी कुत्तों से डर सकता हैं, साथ ही कुत्तों को देखकर डरने वाला रोगी कुत्तें की आवाज से भी डर सकता हैं।

7.7 दुर्भीति के प्रकार (Kinds or Types of Phobia)

दुर्भीति के अनेक प्रकार हैं जिनकी सूची इसी शीर्षक के अन्तर्गत आगे दी गई हैं। अनेक प्रकारों में निम्नलिखित तीन प्रकार दुर्भीति के सामान्य प्रकार कहे जाते हैं-

(अ) विशिष्ट दुर्भीति (Specific Phobia)

(ब) एगोराफोबिया (Agoraphobia)

(स) सामाजिक दुर्भीति (Social Phobia)

उपरोक्त तीनों प्रकार की दुर्भीतियों का वर्णन अग्रलिखित प्रकार से हैं -

(अ) विशिष्ट दुर्भीति **(Specific Phobia)**

विशिष्ट दुर्भीति वह दुर्भीति हैं जो विशिष्ट वस्तु अथवा परिस्थिति की उपस्थिति से उत्पन्न होती हैं अथवा विशिष्ट वस्तु या परिस्थिति के अनुमान मात्र से ही उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी व्यक्ति में मकड़ी या मकड़े से दुर्भीति उत्पन्न होती हैं तो देखा जाये तो यह कहा जा सकता हैं कि मकड़ी या मकड़ा व्यक्ति के लिए कोई खतरनाक जीव नहीं हैं, लेकिन जिस व्यक्ति में इनसे दुर्भीति पायी जाती हैं, उस व्यक्ति के व्यवहार को इस प्रकार परिवर्तित कर देती हैं जैसे मकड़ी या मकड़ा बहुत ही खतरनाक और हानि पहुँचाने वाला जीव हैं। विशिष्ट दुर्भीति के निम्नलिखित चार प्रकार हैं-

(i) पशु दुर्भीति (Animal Phobia) - इस प्रकार की दुर्भीति में व्यक्ति पशुओं से असंगत भय रखता हैं। यह दुर्भीति बच्चों और महिलाओं में अधिक पायी जाती हैं। इस प्रकार की दुर्भीति यों के नाम निम्नलिखित प्रकार से हैं-

दुर्भीति का नाम	अर्थ
1- Ophidiophobia (ओफिडियोफोबिया)	साँप से भय
2- Mysophobia (माइसोफोबिया)	जीवाणुओं या रोगाणुओं से भय
3- Insectophobia (इन्सेक्टोफोबिया)	कीड़े-मकोड़ों से भय

(ii) अजीवित वस्तु से उत्पन्न दुर्भीति (Inanimate Object Phobia) - यह वह दुर्भीति हैं जिसमें व्यक्ति अजीवित वस्तुओं से असंगत भय प्रदर्शित करता हैं। इस प्रकार की दुर्भीति में व्यक्ति जैसे - अँधेरे, ऊँचाई, अकेलेपन आदि से असंगत रूप से डरता हैं। यह दुर्भीति किसी भी आयु वर्ग के व्यक्तियों में तथा पुरूषों और महिलाओं में समान रूप से पाई जाती हैं। इस दुर्भीति के कुछ प्रकार निम्नलिखित हैं-

दुर्भीति का नाम	अर्थ
1- Monophobia (मोनोफोबिया)	अकेलेपन से भय
2- Acrophobia (एक्रोफोबिया)	ऊँचाई से भय
3- Ochlophobia (ऑकलोफोबिया)	भीड़ से भय

(iii) बीमारी और चोट से सम्बन्धित दुर्भीति (Illness and Injury Phobia) - यह वह दुर्भीति हैं जिसमें व्यक्ति बीमारी अथवा चोट और जख्म आदि से असंगत भय रखता हैं। इस दुर्भीति में व्यक्ति बीमारी को न केवल भयानक समझता हैं बल्कि उसे यह भी आशंका होती हैं कि वह भी इस रोग से जल्दी ग्रस्त हो जायेगा। इस तरह की दुर्भीति बहुधा अधेड़ावस्था के पुरूषों और महिलाओं में अधिक पायी जाती हैं। इस दुर्भीति के कुछ उदाहरण निम्नलिखित प्रकार से हैं -

दुर्भीति का नाम	अर्थ
1- Dermatosiophobia (डरमैटोसियोफोबिया)	चर्म रोग से भय
2- Mysophobia (माइसोफोबिया)	संक्रमण से भय
3- Cancerophobia (कैंसरोफोबिया)	कैंसर से भय
4- Necrophobia (नेक्रोफोबिया)	मृत्यु से भय

(iv) रक्त दुर्भीति (Blood Phobia) - इस प्रकार की दुर्भीति वह हैं जिसमें व्यक्ति असंगत और अतार्किक रूप से रक्त से डरता हैं। यह रक्त जब स्वयंरोगी के शरीर के कट-फट जाने से निकलता हैं तब यह दुर्भीति चरम सीमा पर होती हैं और जब रक्त दूसरों के शरीर से निकलता हैं तब यह दुर्भीति कुछ कम मात्रा में व्यक्ति में अभिव्यक्त होती हैं।

(स) सामाजिक दुर्भीति **(Social Phobia)**

सामाजिक दुर्भीति वह दुर्भीति हैं, जिसमें व्यक्ति जब सामाजिक परिस्थिति में उपस्थिति होता हैं तब उसमें असंगत भय उत्पन्न हो जाता हैं सामाजिक परिस्थिति में दूसरे लोग रोगग्रस्त व्यक्ति का मूल्यांकन करेंगे,रोगी को इस बात का ही भय रहता हैं। यही कारण हैं कि व्यक्ति सामाजिक परिस्थितियों से दूर भागता हैं और सामाजिक परिस्थितियों में सम्मिलित नहीं होना चाहता हैं। सामाजिक परिस्थिति में रोगी व्यक्ति में घबराहट, परेशानी और चिन्ता उत्पन्न हो जाती हैं। सामाजिक उत्सवों में विवाह, शादी, कवि सम्मेलनों, आदि में जाने से व्यक्ति डरता हैं, उसका असंगत भय इतना बढ़ जाता हैं कि वह तमाम लोगों के साथ भोजन करने पर भी कतराता हैं। भीड़-भाड़ वाले पेशाबघरों में पेशाब करने जाने से भी उसे भय सताता हैं।

7.8 दुर्भीति के कारण (Etology of Phobia)

दुर्भीति अनेककारणों से उत्पन्न होती हैं। इन कारणों को निम्नलिखित चार कारकों या सिद्धान्तों के आधार पर समझाया जा सकता हैं।

1- जैविक कारक या सिद्धान्त (Biological Factors of theories) - इस दिशा में हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि जैविक त्रटिपूर्ण कार्यो (Biological Malfunctioning) के कारण व्यक्ति में तनाव और बाद में दुर्भीति के लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस सम्बन्ध में अग्रलिखित दो बिन्दु महत्वपूर्ण हैं-

   (क) स्वतन्त्र नाड़ी सस्थान (Nervous System) - लेसी (Leecy, 1967) ने अपने अध्ययनों के आधार पर सिद्ध किया कि दुर्भीति के लक्षण उन व्यक्तियों में जल्दी विकसित होते हैं जिनका स्वतन्त्र नाड़ी संस्थान कुछ पर्यावरणीय उद्दीपकों के कारण जल्दी और अधिक उद्दीप्त हो जाता हैं।

   (ख) आनुवांशिक कारण (Genetic Factors) - हैरिस और उनके साथियों (Harries, et.al., 1983) ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह सिद्ध किया कि जिन माता-पिता में दुर्भीति के लक्षण होते हैं उनके बच्चों में दुर्भीति के होने की सम्भावना अधिक होती हैं। इसी प्रकार से जुड़वाँ बच्चों में एगोराफोबिया के होने की सम्भावना वंशानुक्रम के कारण अधिक होती हैं।

2- मनोविश्लेषणात्मक कारक या सिद्धान्त (Psychoanalytical factors of Theories) - फ्रॉयड वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने मनोविश्लेषण सिद्धान्तों के आधार पर दुर्भीति की व्याख्या की हैं। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित दो बिन्दु महत्वपूर्ण हैं -

(क) चिन्ता का विस्थापन (Displacement of Anxiety) - फोबिया रोग में किसी बाह्य भय जिससे चिन्ता उत्पन्न हुई हैं, वह भय किसी दूसरी वस्तु या परिस्थिति पर विस्थापित हो सकता हैं।

(ख) भयप्रद आवेगों के विरूद्ध सुरक्षा (Defence Against Dangerous Impulses) - फोबिया एक प्रकार की मनोरचना (Defence Mechanism) हैं जिसके द्वारा व्यक्ति उस चिन्ता से बचता हैं जो दमित कामुक इच्छाओं और आक्रामक इच्छाओं से उत्पन्न होती हैं। सम्भवत: यही कारण हैं कि रोगी जिस परिस्थिति या उद्दीपक से डरता हैं, वह उद्दीपक भय का वास्तविक कारण नहीं होता।

3- व्यवहारपरक कारक या सिद्धान्त (Behavioural factors of theories) - इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तीन कारक महत्वपूर्ण हैं-

(क) अनुबन्धन और परिहार अधिगम (Conditioning and Avoidanee Learning) - वाटसन ने एक बच्चे में अकारण भय अनुबन्धन के द्वारा उत्पन्न किया। इस अनुबन्धन के कारण छोटा बालक एल्बर्ट सफेद चूहे से डरने लगा। भय परिस्थिति में किसी आघात के परिणामस्वरूप व्यक्ति फोबिया का अधिगम कर सकता हैं। अधिकांश भय उसी प्रकार के पूर्व अनुभवों के आधार पर अर्जित किये जाते हैं यदि भय की स्थिति अति तीव्र हैं या यह स्थिति बार-बार घटित होती हैं तो अनुबन्धन के आधार पर अधिगमित भय भविष्य मे चलता रहेगा - J.Wolpe & S.Rachman, 1960।

(ख) मॉडल अधिगम (Model Learning) - दुर्भीति का कारण मॉडल व्यक्ति का अधिगम भी हैं। जब एक व्यक्ति दूसरा व्यक्ति में दुर्भीति के लक्षणों को देखता हैं तो वह व्यक्ति उन लक्षणों को देखकर उनका अधिगम कर लेता हैं। इस प्रकार के अधिगम को निरीक्षणात्मक अधिगम (Observational Learning) भी कहते हैं।

(ग) धनात्मक पुनर्बलन (Positive Reinforcement) - दुर्भीति का विकास धनात्मक पुनर्बलन के कारण भी होता हैं। उदाहरण के लिए, यदि माता-पिता अपने स्कूल जा रहे बच्चे का बहाना सुनकर उसे स्कूल न जाने के लिए कहते हैं तो इस बहाने को कारण बच्चे को स्कूल नहीं जाना पड़ता हैं। यहाँ बच्चे को अपने माता-पिता से धनात्मक पुनर्बलन प्राप्त हो रहा हैं। इसी प्रकार से धनात्मक पुनर्बलन से व्यक्ति दुर्भीति के लक्षण सीखता हैं।

4- संज्ञानात्मक कारक या सिद्धान्त (Cognitive factors of Theories) - संज्ञानात्मक कारकों के कारण भी दुर्भीति के लखण विकसित होते हैं। इस दिशा में टोमार्केन और उनके सहयोगियों (Tomarken, et. al. 1989) का प्रयोग उल्लेखनीय हैं। इस अध्ययन में साँप से डरने वाले प्रयोज्यों को दो समूहों में बाँटा गया। एक समूह में साँप से अधिक डरने वाले प्रयोज्य थे तो दूसरे समूह में साँप से कम डरने वाले प्रयोज्य थे। इन दोनों समूहों को स्क्रीन पर कुछ संगत भय (Relevant fear) से सम्बन्धित कुछ चित्र दिखाये गये। फिर दोनों समूहों को असंगत भय से सम्बन्धित कुछ चित्र दिखाये गये। फिर इन प्रयोज्यों को विद्युत

आघात, आवाज और कुछ भी नहीं तीन स्थितियों जैसे परिणाम दिये गये। प्रयोग के उपरान्त अध्ययनकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला कि जिन प्रयोज्यों में साँप से भय की मात्रा अधिक थी उनमें दुर्भीति के लक्षण संज्ञान के कारण अधिक उत्पन्न हुए।

7.9 दुर्भीति का उपचार (Treatment of Phobia)

दुर्भीति के उपचार के सम्बन्ध में निम्नलिखित चार प्रकार के उपचार प्रचलित हैं, जिनकी सहायता से दुर्भीति से ग्रस्त लोगों का उपचार किया जाता हैं -

1- जैविक उपचार पद्धति (Biological therapy) - दुर्भीति से ग्रस्त रोगी की चिन्ता को कम या दूर करने के लिए चिन्ता विरोधी औषधियाँ (Antianxiety drugs) दिये जाती हैं। इन औषधियों में बार्बीटुरेट (Barbiturate) औषधि दी जाती हैं।

2- मनोविश्लेषणात्मक उपचार पद्धति (Psychoanalytical Therapy) - इस पद्धति में मनोचिकित्सक दुर्भीति केरोगी के उन दमित मानसिक संघर्षो (Repressed Mental Conflict) को मुक्त साहचर्य विधि (Free association Method) द्वारा अथवा स्वप्न विश्लेषण द्वारा जानने का प्रयास करता हैं जिनके कारण दुर्भीति के लक्षण उत्पन्न होते हैं। दमित मानसिक संघर्षो को जान लेने के बाद मनोविश्लेषण के द्वारा ही उसके लक्षणों को दूर करने का प्रयास किया जाता हैं।

3- व्यवहारपरक उपचार पद्धति (Behavioural Therapy) - वुल्पे के अनुसार इस उपचार पद्धति में रोगी को दुर्भीति उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों में पूर्णतया शान्त और शिथिल (Relaxed) रहने को कहा जाता हैं।रोगी को शान्त और शिथिल रहने का प्रशिक्षण दिया जाता हैं। जब रोगी शान्त और शिथिल रहने का प्रशिक्षण पूर्ण कर लेता हैं तब उसे दुर्भीति उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों में शान्त रहने का व्यवस्थित प्रशिक्षण दिया जाता हैं।

4- संज्ञानात्मक उपचार पद्धति (Cognitive Therapy) - संज्ञानात्मक उपचार पद्धति द्वारा भी दुर्भीति का उपचार किया जाता हैं। इस उपचार पद्धति में रोगी की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को ध्यान मे रखकर उपचार किया जाता हैं। जिससे अधिक लाभप्रद परिणाम प्राप्त होते हैं।

7.10 चिन्ता विकृति : मनोग्रस्तता - बाध्यता विकृति (ANXIETY DISORDER: OBSESSIVE-COMPULSIVE DISORDER)

मनोग्रस्तता का अर्थ **(Meaning of Obsession)**

डेविसन और नील (1996) के अनुसार, ''मनोग्रस्तता में अन्तर्वेधी और पुनरावर्ती चिन्तन, आवेग और प्रतिमाएँ होती हैं जो मन में स्वैच्छिक रूप से बिना बुलाये आती हैं और अनुभव करने वाले व्यक्ति के लिए असंगत ही नहीं होती हैं बल्कि नियन्त्रित भी होती हैं।''

इस लक्षण वाले रोगी के विचार वैज्ञानिक खोज से लेकर आत्म-हत्या तक कुछ भी हो सकते हैं। कोलमैन (1981) का विचार हैं कि इस रोग के विचार चूँकि कार्य रूप में परिणित नहीं होते हैं इसलिए कष्टकारक होते हैं। इसके लक्षण सतत् (Peristent) और अतार्किक होते हैं। उसके यह लक्षण दैनिक व्यवहार में बाधक होते हैं। रोगी जानता हैं कि उसके विचार असंगत हैं, फिर भी वह उन असंगत विचारों से मुक्त नहीं हो पाता हैं।

बाध्यता (Compulsion) में रोगी कोई कार्य करने के लिए बाध्यता (Compulsion) का अनुभव करता हैं। यह कार्य उसे निरर्थक और विचित्र लगता हैं। रोगी कार्य को करना नहीं चाहता हैं फिर भी करता हैं। इन कार्यो का क्षेत्र भी बहुत व्यापक होता हैं।

7.11 मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति का अर्थ (Meaning of Obsessive-Compulsive disorder - OCD)

कोलमैन (1981) के अनुसार, ''मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति में व्यक्ति जिस चीज पर विचार करना नहीं चाहता हैं उसके लिए अपने को बाध्य समझता हैं अथवा वह कोई कार्य अपनी इच्छा के विपरीत करता हैं।''

इस विकृति में मनोग्रस्तता और बाध्यता के मिले-जुले लक्षण पाये जाते हैं। इनमें से यदि किसी पक्ष का प्रभाव अधिक होता हैं तो उसके लक्षणों की आवृति अधिक होती हैं।

7.12 OCD के कारण (Etilogy of OCD)

मनोग्रस्तता और बाध्यता के अनेक कारणो को निम्नलिखित चार कारणों का सिद्धान्तों के अन्तर्गत रखकर मनोग्रस्तता बाध्यता विकृति के कारणों की व्याख्या सरलता से कर सकते हैं :

(1) जैविक कारक या सिद्धान्त (Biological Factors or theories) - मनोग्रस्तता-बाध्यता के सम्बन्ध में हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि **OCD** के रोगियों और उनके सम्बन्धियों में चिन्ता अधिक मात्रा में पायी जाती हैं। (McKeon and Murray, 1987)। लिनाने और उनके साथियों (Lenane, et.al., 1990) ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह बताया कि जिन लोगों में चिन्ता विकृति के लक्षण पाये जाते हैं उनके 30 प्रतिशत सम्बन्धियों में **OCD** का रोग पाया जाता हैं। **(2)** मनोविश्लेषणात्मक कारक या सिद्धान्त **(**Psychoanalytical factors or Theories) - मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तवादियों के अनुसार जब व्यक्ति के अचेतन मन के अवांछनीय दमित चिन्तन चेतन में आने का प्रयास करते हैं तब व्यक्ति सुरक्षात्मक उपाय खोजता हैं और इस सुरक्षात्मक उपायों के रूप में व्यक्ति में **OCD** के लक्षण विकसित हो जाते हैं। एक लड़की के अचेतन मन में यह विचार था कि उसकी माँ तीव्र बुखार से मर सकती हैं। जब अचेतन मन का यह विचार उसके चेतन मन में आता था तो वह लड़की बहुत चिन्तित हो जाती थी और चिन्ता से बचने के लिए वह गर्म पानी में बार-बार स्नान करना अथवा गर्म पानी से हाथ धोने जेसी क्रियाएँ बार-बार करती थी।

1- प्रतिक्रिया निर्माण **(Reaction Formation)** - रोगी के विचार और कार्य अन्तर्निहित भयावह विचारों और कार्यो के विपरीत होते हैं। संक्षेप में, इस रोग में प्रतिक्रिया निर्माण मनोरचना कार्य करती हैं। एक स्त्री अपने सौतेले पुत्र के लिए बहुत कुशल मंगल पूछती थी। वह घर में ही नहीं, स्कूल में भी बालक का कुशल-मंगल रोज पूछने जाती थी। वह यही पूछती- मेरा बच्चा ठीक हैं, उसे कुछ हो तो नहीं गया हैं। वास्तविकता यह थी कि वह अपने सौतेले पुत्र से घृणा करती थी लेकिन प्रतिक्रिया निर्माण मनोरचना के कारण वह उसका कुशल-मंगल ही पूछती थी।

2- दमित इच्छाओं के विस्फोट से सुरक्षा **(Defence from Br**ust **through of Desires)** - दमित इच्छाओं के विस्फोट में सुरक्षा के कारण भी इस रोग के लक्षण उत्पन्न होते हैं। अचेतन मन की दमित इच्छाएँ निरन्तर चेतन मन में आने का प्रयास करती रहती हैं। यह अनैतिक और भयावह इच्छाएँ चेतन मन में न आ जायें, इसे रोकने या इससे सुरक्षार्थ इस रोग के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

3- अपराध-भावना और दण्ड का भय **(Guilt and Fear of Punishment)** - आत्म-अवमूल्यन तथा अपराध-भावना के फलस्वरूप भी मनोग्रस्तता-बाध्यता के लक्षण उत्पन्न होते हैं। अपराध-भावना और आत्म-अवमूल्यन की भावनाएँ अमान्य और घृणित इच्छाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं। भयावह परिस्थिति से निकलने का एकमात्र उपाय (Only way out of a Catastrophic Situations) - व्यक्ति जब भयावह परिस्थिति या प्रतिबल परिस्थिति से बच निकलना चाहता हैं और असफल रहता हैं तो इस अवस्था में अपनी आत्म-सुरक्षा मनोग्रस्तता बाध्यता के लक्षणों के द्वारा करता हैं।

4- सुरक्षा और भविष्य कथनता **(Security and Predictibility)** - जब व्यक्ति को संसार भयावह प्रतीत होता हैं, तब वह कट्टर नियम पालक बनकर अपने अहं की सुरक्षा करता हैं। प्रत्येक चीज को सुरक्षित व्यवस्थित रखता हैं, इसमें कोई भी गड़बड़ी उसे अशान्त और चिन्तित कर देती हैं। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपनी प्रत्येक दिनचर्या एक निश्चित समय पर करते हैं। उनकी हर चीज का समय, दिन और तारीख निश्चित होते हैं।

(3) व्यवहारपरक कारक या सिद्धान्त (Bchavioural factors or theories) - (Operant escape response) - इस सिद्धान्त के अनुसार मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति को एक अधिगमित विकृति (Learned disorder) माना गया हैं। यह अधिगमित विकृति कुछ विशेष प्रकार के परिणामों से पुनर्बलित होती हैं।

(4) संज्ञानात्मक कारक या सिद्धान्त (Cognitive factors or theories) - इस सिद्धान्तवादियों के अनुसार जब व्यक्ति किसी ऐसी परिस्थिति में होता हैं जिसके अवांछनीय अथवा खतरनाक परिणाम होते हैं तब व्यक्ति इन परिणामों का अति मूल्यांकन करता हैं। अति मूल्यांकन के कारण व्यक्ति में मनोग्रस्तता-बाध्यता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

7.13 मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति का उपचार (Treatment of OCD)

मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति के उपचार के लिए अनेक चिकित्सा पद्धतियाँ हैं जिनमें से निम्नलिखित चिकित्सा पद्धतियाँ प्रमुख हैं :-

(1) औषधि चिकित्सा **(Drug Therapy)**

मनोग्रस्तता-बाध्यता का उपचार के लिए क्लोमीप्रेमाइन (Clomipraminc) का उपयोग किया जाता हैं। इस औषधि के उपयोग से मनोग्रस्तता-बाध्यता के लक्षण कम या समाप्त हो जाते हैं। वास्तव में क्लोमीपे्रमाइन एक विषाद विरोधी औषधि हैं जिससे OCD के रोगियों को भी लाभ होता हैं। इसके अधिक दिनों तक सेवन करने से मनोग्रस्तता में कुछ अधिक लाभ होता हैं और बाध्यता में कुछ कम लाभ होता हैं अर्थात् मनोग्रस्तता के लक्षण काफी कुछ समाप्त हो जाते हैं जबकि बाध्यता के लक्षण अपेक्षाकृत कुछ कम अच्छे होत हैं।

(2) व्यवहार चिकित्सा पद्धति **(Behaviour Therapy)**

मनोग्रस्तता-बाध्यता के उपचार में व्यवहार चिकित्सा पद्धति बहुत अधिक प्रभावशाली रही हैं। व्यवहार चिकित्सा पद्धति में अनेक उपचिकित्सा पद्धतियाँ हैं जिनमें से अग्रलिखित तीन उपचिकित्सा पद्धतियाँ मनोग्रस्तता बाध्यता विकृति के रोगियों के उपचार के लिए अधिक सफल मानी जाती रही हैं :-

(क) माडलिंग उपचार पद्धति (Modling Therapy),

(ख) फ्लडिंग उपचार पद्धति (Flooding Therapy)

(ग) अनुक्रिया निवारण उपचार पद्धति (Response prevention therapy)

(3) मनोविश्लेषणात्मक उपचार पद्धति **(Psychoanalytical Therapy)**

मनोग्रस्तता-बाध्यता के रोगियों के उपचार के लिए मनोविश्लेषणात्मक उपचार पद्धति भी उपयेागी रही हैं। मनोग्रस्तता बाध्यता के रोगियों का मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा पद्धति से उपचार करते समय अचेतन मन में दमित इच्छाओं और मानसिक संघर्षों को सर्वप्रथम पहचाना जाता हैं फिर अचेतन मन के इन मानसिक संघर्षो के कारणों की खोज की जाती हैं और अन्त में (OCD) के रोगी में सूझ विकसित की जाती हैं जिससे कि रोग के लक्षण समाप्त होते दिखायी देते हैं।

7.14 सामान्यीकृत चिन्ता विकृत (GENERALIZED ANXIETY DISORDER - GAD)

सामान्यीकृत चिन्ता विकृति (Generalized Anxeity Disorde - GAD) - सामान्यकृत चिन्ता विकृति वह मानसिक रोग हैं जिसमें रोगी अत्यधिक चिन्ता से ग्रस्त होता हैं उसकी यह चिन्ता अवास्तविक होती हैं। उसकी यह चिन्ता चिरकालिक (Chronic) होती हैं। रोगी की यह चिन्ता स्वतन्त्र प्रवाही चिन्ता (Free floating Anxiety) चिन्ता कहलाती हैं।

रोसेन और ग्रेगरी (1965) के अनुसार, ''चिन्ता मनस्ताप से पीड़ित व्यक्ति बेचैनी और आशंका का अनुभव करता हैं। वह अस्पष्ट दिशाहीन चिन्ता (Free floating Anxiety) का अनुभव करता हैं जिसका स्त्रोत वह नहीं बता पाता हैं।''1

कोलमैन (1981) के अनुसार, ''इस रोग की प्रमुख विशेषता रोगी की व्यापक और दिशाहीन चिन्ता हैं जो किसी विशेष पदार्थ या स्थिति से उत्पन्न होती हुई प्रतीत होती हैं। इस चिन्ता से किसी विशेष लक्ष्य और गन्तव्य दिशा का ज्ञान भी नहीं होता हैं।''

GAD के रोगियों में चिन्ता की मात्रा कभी-कभी इतनी तीव्र होती हैं कि दौरा (Attack) पड़ जाता हैं। रोगी की चिन्ता का कोई स्पष्ट कारण दृष्टिगोचर नहीं होता हैं।

GAD के अतिरिक्त अन्य प्रकार के चिन्ता विकारों में भी चिन्ता का लक्षण पाया जाता हैं। लेकिन रोगी की चेतना में अन्य लक्षणों के कारण चिन्ता अधिक समय उपस्थित नहीं रह पाती हैं। चिन्ताविकृति के रोगी में चिन्ता का लक्षण मुख्य रूप से पाया जाता हैं।

7.15 GAD के लक्षण (Symptoms of GAD)

शारीरिक लक्षण **(Physical Smptoms)** - सामान्यीकृत चिन्ता विकृति के रोगी में निम्न महत्वपूर्ण शारीरिक लक्षण पाये जाते हैं :-

1- पेशीय तनाव (Muscular Tension) की रोगी शिकायत करता हैं। बहुधा वह गर्दन और कन्धों के ऊपरी भाग में शिकायत करता हैं।
2- पसीना (sweating) - जब रोगी को चिन्ता के दौरे पड़ते हैं, उस समय उसको आवश्यकता से अधिक पसीना आता हैं। उसकी हथेलियाँ तो अक्सर नम हो जाती हैं।
3- हृदय गति (Heart Rate) - GAD के रोगी की हृदय गति से अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे गये हैं, उदाहरण के लिए, चिन्ता के दौरे में रक्तचाप (Blood Pressure) बढ़ जाता हैं, हृदय की धड़कनें बढ़ जाती हैं। रोगी की नाड़ी गति भी बढ़ जाती हैं।
4- शरीर के आन्तरिक (Internal) अंगों से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं, जैंसे - GAD के रोगी को बार-बार पेशाब लगती हैं और उसे हल्के दस्त (Diarrhea) भी हो जाते हैं।
5- GAD के रोगी को नींद (Sleep) विघ्नपूर्ण और बीच-बीच में टूटने वाली होती हैं। नींद में उसे स्वप्न दिखायी देते हैं। उसमें अनिद्रा (Insomania) का लक्षण भी पाया जाता हैं।
6- रोगी भूख न लगने की शिकायत करता हैं। वह घुटन का अनुभव करता हैं। उसके शरीर का वजन कम हो जाता हैं।

मनोवैज्ञानिक लक्षण (Psychological Symptoms)

चिन्ता मनस्ताप के रोगी में कुछ निम्नलिखित महत्वपूर्ण लक्षण पाये जाते हैं :-

1- चिन्ता (Anxiety) - इस प्रकार के रोगी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण हैं कि रोगी में व्यापक स्थायी चिन्ता दिखायी देती हैं। यह चिन्ता दीर्घकालीन (Chronic) होती हैं (Prusoff & Klerman, 1974)। कभी-कभी रोगी में चिन्ता उग्र (Acute) हो जाती हैं, लेकिन उग्र चिन्ता अस्थायी होती हैं। रोगी कभी-भी चिन्तामुक्त नहीं होता हैं।
2- चिन्ता के दौरे (Anxiety Attacks) - सामान्यीकृत चिन्ता विकृति के रोगी में पड़ते हैं। इन चिन्ता के दौरों में चिन्ता की मात्रा अधिक हो जाती हैं। यह दौरे कुछ सेकेण्ड से कुछ घण्टों तक के होते हैं। चिन्ता के दौरे रोगी में अचानक उत्पन्न होते हैं। चिन्ता के दौरे की अवधि में अनेक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, जैसे चक्कर आना, दिल बैठना, साँस लेने में कठिनाई, उत्तेजना, आशंका, भय आदि।
3- नींद और स्वप्न (Sleep & Dreams) - सामान्यीकृत चिन्ता और विकृति का रोगी सोते समय भी चिन्तामुक्त नहीं होता हैं। यह सोते समय बिस्तर पर पड़े-पड़े भूतकाल और भविष्य की चिन्ताओं में उलझा रहता हैं। वह स्वप्न में गला घोंटने, गोली लगने, दुर्घटना होने, विरोधियों से दण्ड पाते हुए जैसे स्वप्न देखता हैं।
4- सामान्य लक्षण (General Symptoms) - रोगी हमेशा बेचैन (Uneasy), हतोत्साहित और अव्यवस्थित (Upset) रहता हैं। रोगी हमेशा तनाव का अनुभव करता हैं। उसे हमेशा डर लगा रहता हैं कि कहीं वह कोई गलत न कर बैठे या उसके निर्णय में कोठ गलत न हो जाये। रोगी के व्यवहार में रूखापन (Coldness) रहता हैं। अक्सर उसका सिर चकराता (Dizziness) रहता हैं।

5- अनुभव (Feelings) -GAD का रोगी हमेशा अपने आपको अनुपयुक्त (Inadequate) समझता हैं। बहुधा उसमें हल्का विषाद (Mild Depression) रहता हैं।

6- अन्त:वैयक्तिक सम्बन्ध (Interpersonal Rclationship) - GAD का रोगी अन्त:वैयक्तिक सम्बन्धों के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील होता हैं।

7.16 सामान्यीकृत चिन्ता विकृति के कारण (Etiology of GAD)

सामान्य व्यक्ति की चिन्ता और GAD के रोगी की चिन्ता में अन्तर हैं। सामान्य व्यक्ति में परिस्थिति के प्रति उत्पन्न चिन्ता अस्थायी होती हैं। सामान्य व्यक्ति थोड़े ही समय में सन्तुलन स्थापित कर लेता हैं और चिन्ता-मुक्त हो जाता हैं। GAD के रोगी में परिस्थिति के प्रति उत्पन्न चिन्ता स्थायी और अतिरंजित (Exaggerated) होती हैं। वह साधारण चिन्ता परिस्थिति में भी बहुत परेशान हो जाता हैं। GADरोगी की चिन्ता सामान्य व्यक्ति की चिन्ता की अपेक्षा असंगत भी अधिक होती हैं।

7.17 चिन्ता सामान्यीकृत विकृति के उपचार (Treatment of GAD)

(1) मेडिकल औषधियाँ (Medical Drugs) - हल्के प्रशान्तक औषधियों (Tranquilizers) के द्वारा रोगी को कुछ आराम का अनुभव होता हैं। इस प्रकार की औषधियों से रोगी को अस्थायी आराम प्राप्त होता हैं। उसकी जीवन-शैली में इन औषधियों से कोई परिवर्तन नहीं होता हैं।

(2) संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive beahviour therapy) - इस रोग के उपचार में उपयोगी सिद्ध हुई हें। कुछ अध्ययनों (Butler, 1991, Borkovec & Costello, 1993) में यह देखा गया हैं कि संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा पद्धति द्वारा इन रोगियों का सफल इलाज किया गया हैं।

(3) अन्य चिकित्सा (Psychotherapy) - के द्वारा रोगी को स्थायी आराम पहुँचाया जा सकता हैं। मनोचिकित्सा के द्वारा रोगी को वास्तविक और काल्पनिक चिन्ता परिस्थितियों में अन्तर करना सिखाया जा सकता हैं। इससे उसे चिन्ता से मुक्ति पाने और समायोजन करने में सहायता मिलती हैं।

समूह चिकित्सा (Group Therapy) द्वारा भी इस प्रकार के रोगी को आराम पहुँचाया जा सकता हैं।

7.18 उत्तर - आघातीय प्रतिबल विकृति (Post-traumatic Stress Disorder of PTSD)

उत्तर-आघातीय प्रतिबल विकृति वह व्यवहार विकृति हैं जो एक गम्भीर प्रतिबलक के प्रति प्रतिक्रया स्वरूप उत्पन्न होती हैं। इसे DSMK-IV में एक चिंता विकृति (Anxiety Disorder) माना गया हैं। चूँकि PTSD प्रतिबलक के प्रति प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न होती हें। इसलिए इस विकृति का वर्णन प्रतिबल के इस अध्याय में किया जा रहा हैं।

7.19 PTSD के लक्षण (Symptoms of PTSD)

PTSD चिन्ता या भय विकृति हैं। इस रोग की उत्पत्ति कुछ विशेष गम्भीर घटनाओं से होती हें। कुछ प्राकृतिक आपदाएँ या महाविपत्तियाँ (Catastrophe) एसी होती हैं, जिनका कारण मनुष्य न होकर

प्रकृति होती हैं और इन महाविपत्तियाँ से इस रोग को उत्पत्ति होती हैं, उदाहरण के लिए भूकम्प, बाढ़, अकाल, समुद्री तूफान आदि। इसके अतिरिक्त विवाह विच्छेद, प्रियजनों की मृत्यु, बलात्कार जैसी भी कुछ घटनाएँ हैं जो मनुष्य द्वारा सम्पन्न होती हें इनसे भी इस रोग की उत्पत्ति होती हैं। इन सभी घटनाओं से उत्पन्न इस रोग में व्यक्ति में संवेगात्मक और मनोवैज्ञानिक संस्थाएँ कुछ इस प्रकार उत्पन्न होती हैं कि व्यक्ति का व्यवहार कुसमायोजित (Maladjustive) हो जाता हैं। इस कुसमायोजित व्यवहार का कारण कोई न कोई विशिष्ट घटना होती हैं न कि कोई व्यक्ति। DSM-IV में PTSD के निम्न 6 कसौटियों या लक्षणों (Symptoms) को बताया गया हैं :-

1- व्यक्ति को प्रतिबलक से जो मानसिक आघात पहुँचा हैं इसमें व्यक्ति को घटना की याद बार-बार सताती हैं। यह याद उसे नींद में भी आती हैं, यह याद उसे स्पप्न में भी दिखायी देती हैं। व्यक्ति के दैनिक जीवन में इस लक्षण की अभिव्यक्ति प्रतिदिन बार-बार होती हैं।
2- व्यक्ति को जिन उद्दीपकों, परिस्थितियों और घटनाओं से मानसिक आघात पहुँचा हैं उनसे वह दूर भागने की कोशिश करता हैं क्योंकि उनके कारण उसमें गम्भीर चिन्ता उत्पन्न हो जाती हैं।
3- व्यक्ति में उच्च स्तर का उद्दोलन (Arousal) दिखायी देता हैं जिसके कारण उसमें चिरकालिक तनाव (Cronic tension) और चिड़चिड़ापन उत्पन्न हो जाता हैं।
4- रोगी में एकाग्रता की कमी होती हैं, स्मृतिलोप दिखायी देता हैं और रोगी दर्द संवेदनाओंके प्रति सुन्नता (Numbing) दिखायी देता हैं।
5- रोगी में विषाद का स्तर उच्च होता हैं उसमें सामाजिक सम्पर्क कम होते हैं, वह एकान्त में रहना चाहता हैं, वह उन अनुभवों को नहीं दोहराना चाहता हैं जो मानसिक आघात से सम्बन्धित हैं।
6- उपर्युक्त सभी पाँचों लक्षण घटना घटित होने से लगभग एक माह से अधिक तक रहते हैं तभी इन लक्षणों वाले व्यक्तियों को उत्तर-आघातीय प्रतिबल विकृति (PTSD) का रोगी कहते हैं।

7.20 PTSD के कारण (Causes of Etiology of PTSD)

PTSD के जितने भी प्रमुख कारण हैं उन सभी कारणों या कारकों को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटकर उनके प्रभाव को समझा जा सकता हैं :-

1- जैविक कारक (Biological Factors)

क्रिस्टल और उनके सहयोगियों (Krystal, et.al., 1989) ने PTSD के जैविक कारकों का अध्ययन किया हैं। इन अध्ययनकर्ताओं के अनुसार उत्तर-आघातीय प्रतिबल विकृति (PTSD) की उत्पत्ति जैविक कारणों से होती हैं। इन अध्ययनकर्ताओं ने अपने अध्ययनों में यह देखा हैं कि मानसिक आघात (Trauma) प्रतिबल के कारण उत्पन्न होते हैं और मानसिक आघात की अवस्था में नारएड्रीनरजिक (Noreadrenergic) तन्त्र प्रभावित होता हैं। इस तन्त्र के प्रभावित होने से रक्त में नोराइपाइनफ्रीन (Norepinephrine) के स्तर को बढ़ा देता हैं। इस कारण से व्यक्ति में उत्तेजना और आक्रामकता बढ़ जाती हैं। उत्तेजना या आक्रामकता PTSD का प्रमुख लक्षण हैं।

2- मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Faetors)

एक अध्ययन (Breslan, 1991) में यह देखा गया कि जब कोई बालक या कम आयु वाला अपने माता-पिता से बिछुड़ जाता हैं तब इसके PTSD रोग से ग्रस्त होने की सम्भावना अधिक होती हैं। इस प्रकार की पारिवारिक विकृतता के कारण PTSD रोग उत्पन्न होता हैं।

3- सामाजिक कारक (Social Factors) -

PTSD के क्षेत्र में जो मनोवैज्ञानिक अध्ययन हुए हैं उनसे यह स्पष्ट हुआ हैं कि PTSD की उत्पत्ति में अनेक सामाजिक कारकों (Social factors) की भूमिका होती हें। उदाहरण के लिए एक अध्ययन (Oei, et.al., 1990) के अनुसार वियतनाम युद्ध में घायल सैनिकों में PTSD के लक्षण अधिक मात्रा में पाये गये जिन सैनिकों ने पहले तरह-तरह के अत्याचार और हत्या के दृश्य देखे थे।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हैं कि PTSD के अनेक कारण हैं। यह कारक अपना अलग-अलग प्रभाव तो डालते हैं साथ-साथ यह भी होता हैं कि यह कारक एक-दूसरे पर आश्रित होकर PTSD के लक्षणों को उत्पन्न करते हैं।

7.21 PTSD का उपचार (Treatment of PTSD)

PTSD के केसेज में जब व्यक्ति को मानसिक आघात होता हैं तब मानसिक आघात के कुछ ही समय बाद PTSD के लक्षण प्रारम्भ हो जाते हैं। इस अवस्था में यदि आपातकालीन आयाम (Emergency Measures) किये जाये तब इन उपायों से रोगी को लाभ पहुँचता हैं। इन उपायो में वैयक्तिक परामर्श से समूह उपचार पद्धति तक अनेक उपचार पद्धतियों का उपयोग किया जाता हैं। इस आपातकालीन उपचार का लाभ यह होता हैं कि व्यक्ति या PTSD के रोगी को समय-समय पर जो मानसिक आघात की याद बार-बार आती हैं उसमें कमी आ जाती हैं। इस प्रकार के रोगी के उपचार के लिए निम्नालिखित उपाय किये जाने चाहिए :-

1. PTSD के रोगी को मानसिक आघात से निपटने के लिए उपायें का प्रशिक्षण इस प्रकार दिया जाना चाहिए कि वह मानसिक आघात वाली परिस्थिति का सामना ऐसे कर सके कि उसमें रोग के लक्षण कम से कम उत्पन्न हों।
2. PTSD के रोगी को प्रतिबल प्रबन्धन (Stress Management) का प्रशिक्षण इस प्रकार दिया जाना चाहिए कि रोगी प्रतिबल का प्रबन्धन कुछ ऐसे करे कि प्रतिबल का प्रभाव कम हो जाये और उसमें PTSD के लक्षणों की उत्पत्ति कम से कम या नहीं हो।
3. PTSD के रोगी में जहाँ तक हो सके साहस उत्पन्न करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए। साहस जितना ही अधिक मात्रा में उत्पन्न होता हैं रोगी के रोग के लक्षण उसी मात्रा में कम होता हैं।
4. इस प्रकार के रोगियों की चिकित्सा के लिए समूह उपचार पद्धति, व्यवहार उपचार पद्धति और संज्ञानात्मक उपचार पद्धति का उपयोग आवश्यकतानुसार समय से प्रारम्भ कर देना चाहिए जिससे कि लक्षण गम्भीर रूप धारण न कर सकें।
5. PTSD के रोगी के उपचार में साइकोट्रोपिक औषधियों (Psychotropic Medicens) का उपयोग आवश्यकतानुसार करना चाहिए। इस प्रकार के रोगी को चिन्ता विरोधी औषधियों

(Anti anxiety drugs) और विषाद विरोधी औषधियाँ (Anti depression drugs) का उपयोग भी आवश्यकतानुसार व लक्षणों के अनुसार किया जाता हैं।

7.22 भीषिका या आतंक विकृति (Panic Disorder)

चिन्ता विकृति (Anxiety Disorder) का एक प्रमुख प्रकार भीषिका या आतंक विकृति हैं। DSM-IV वर्गीकरण के अनुसार भीषिका विकृति के रोगी को भीषिका विकृति रोगी तब कहा जाता हैं जब उसे सप्ताह में कम से कम एक या दो बार भीषिका विकृति का दौरा पड़ता हैं। रोगी को अचानक भीषिका या आतंक का दौरा पड़ता हैं।

भीषिका विकृति के रोगी में कुछ दैहिक, कुछ संवेगात्मक और कुछ संज्ञानात्मक लक्षण पाये जाते हैं। DSM-IV वर्गीकरण के अनुसार इस प्रकार के रोगी की पहचान के तेरह प्रमुख दैहिक संवेदना (Physiological Sensations) सम्बन्धी लक्षण पाये जाते हैं। दैनिक संवेदना सम्बन्धी यह तेरह लक्षण निम्न प्रकार से हैं।

1- हृदय गति का कम हो जाना अथवा हृदय गति तीव्र हो जाना।
2- रोगी को सामान्य अवस्था की अपेक्षा पसीना बहुत आता हैं।
3- रोगी की माँसपेशियों में कम्पन होता हैं जो रोगी अनुभव करता हैं और यह कम्पन बाहर से भी दृष्टिगोचर होता हैं।
4- रोगी अनुभव करता हैं कि उसकी साँस की गति मन्द हो गयी हैं और रोगी यह भी अनुभव कर सकता हैं कि उसकी साँस की गति रूक रही हैं।
5- रोगी अपनी छाती में तकलीफ अथवा दर्द का अनुभव करता हैं।
6- रोगी अनुभव करता हैं कि उसका दम घुट रहा हैं और घुट जायेगा।
7- रोगी उल्टी का अनुभव करता हैं कई बार साथ वह यह भी अनुभव करता हैं कि उसके पेट में दर्द हो रहा हैं।
8- रोगी को चक्कर आने लगते हैं और वह चक्कर आने के साथ-साथ बेहोश हो जाता हैं।
9- रोगी यह अनुभव करता हैं कि वह अपने आप से अलग हो रहा हैं अर्थात रोगी अवास्तविकता (Derealization) का अनुभव करता हैं।
10-इस रोग की अवस्था में रोगी सनकी (Crazy) दिखायी देता हैं और उसे अनुभव होता हैं कि वह अपने आप पर नियन्त्रण खो रहा हैं और उसे अपने आप पर नियन्त्रण खोने का भय भी लगा रहता हैं।
11-रोगी हर समय मरने के डर से ग्रस्त रहता हैं।
12-रोगी को झुनझुनी (Tingling) संवेदना का अनुभव होता हैं। उसे सुन्नपन (Numbkness) संवेदन का भी अनुभव होता हैं।
13-रोगी को अत्यधिक गर्मी का अनुभव होता हैं अथवा रोगी को कँपकँपी का अनुभव ही नहीं होता हैं बल्कि उसकी कँपकँपी दूसरों को दृष्टिगोचर भी होती हैं।

DSM-IV वर्गीकरण में यह बताया गया हैं कि उपरोक्त तेरह दैहिक संवेदनाओं में से यदि तीन संवेदनाएँ भी रोगी में पायी जाती हैं तो यह मान लिया जाता हैं कि रोगी में भीषिका विकृति का मानसिक रोग हैं।

DSM-IV वर्गीकरण के अनुसार भीषिका विकृति उन लोगों को भी हो सकती हैं जो एगोराफोबिया (Agoraphobia) से ग्रस्त होते हैं।

भीषिका विकृति के कारण (Etiology of Panic Disorder)

भीषिका विकृति के कारणों से सम्बन्धित जो अध्ययन हुए हैं उन अध्ययनों से मुख्यत: दो प्रकार के कारण स्पष्ट हुए हैं। इस प्रकार के कारणों में पहले प्रकार के कारण जैविक कारण हैं और दूसरे प्रकार के कारण मनोवैज्ञानिक कारण हैं।

(1) जैविक कारण (Biological Factors) - इस दिशा में हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि जिस परिवार में कोई व्यक्ति या सदस्य पहले भीषिका विकृति से ग्रस्त रह चुका हैं तब परिवार के अन्य सदस्यों के भीषिका विकृति से ग्रस्त होने की सम्भावना अधिक होती हैं।

(2) मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors) - क्लार्क (Clark, 1989) ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया कि भीषिका विकृति का दौरा उन व्यक्तियों में अधिक पड़ता हैं जो अपनी शारीरिक संवेदनाओं की गलत व्याख्या करते हैं। गलत व्याख्या के कारण व्यक्ति की परेशानी अधिक बढ जाती हैं और अन्ततोगत्वा भीषिका विकृति का दौरा पड़ जाता हैं।

भीषिका विकृति का उपचार (Treatment of Panic Disorder)

भीषिका विकृति के उपचार के लिए औषधियों का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया हैं कुछ औषधियों के प्रयोग से इस प्रकार के रोगियों को विशेष लाभ होता हैं। विषाद विरोधी औषधि जैसे ट्राईसाईक्लिक (Tricyclic antidepresent drugs) और चिन्ता विरोधी औषधि उदाहरण के लिए, अल्परोजालम (Alprozalam) के उपयोग से भीषिका विकृति का रोग अच्छा हो जाता हैं। चिकित्सक यह देखता हैं कि जब रोगी में विषाद की मात्रा अधिक होती हैं तब चिकित्सक उपरोक्त विषाद विरोधी औषधि रोगी को देता हैं। इसी प्रकार जब चिकित्सक वह देखता हैं कि रोगी में चिन्ता की मात्रा अधिक हैं तब वह चिकित्सक रोगी को चिन्ता विरोधी औषधि देता हैं।

7.25 सारांश

- दुर्भीति को एक प्रकार का अकारण भय भी कह सकते हैं जो किसी वस्तु, व्यक्ति या प्राणी आदि के प्रति होता है। दुर्भीति का रोगी भय उद्दीपक को बढा-चढ़ाकर स्वीकार करता है, और अकारण ही डरता है।
- कोलमैन (1981) के अनुसार, ''मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति में व्यक्ति जिस चीज पर विचार करना नहीं चाहता हैं उसके लिए अपने को बाध्य समझता हैं अथवा वह कोई कार्य अपनी इच्छा के विपरीत करता हैं।''
- सामान्यकृत चिन्ता विकृति वह मानसिक रोग हैं जिसमें रोगी अत्यधिक चिन्ता से ग्रस्त होता हैं उसकी यह चिन्ता अवास्तविक होती हैं। उसकी यह चिन्ता चिरकालिक (Chronic) होती हैं।
- उत्तर-आघातीय प्रतिबल विकृति वह व्यवहार विकृति हैं जो एक गम्भीर प्रतिबलक के प्रति प्रतिक्रया स्वरूप उत्पन्न होती हैं।

7.24 प्रश्नोत्तर

1- दुर्भीति को समझाये**?**

2- दुर्भीति की नैदानिक विशेषताएँ, लक्षण, प्रकार तथा उपचार का वर्णन कीजिए?

3- चिन्ता विकृति : मनोग्रस्तता - बाध्यता विकृति के बारे में विस्तार से बताइये?

4- OCD के कारण को समझाइये?

5- मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति का उपचार के बारे में आप क्या जानते हैं?

6- सामान्यीकृत चिन्ता विकृत के लक्षण तथा उपचार को समझाइयें?

7- उत्तर - आघातीय प्रतिबल विकृति के बारे में आप क्या जानते हैं?

8- PTSD के लक्षण, कारण तथा उपचार को समझाइये?

7.25 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 8

मनोविदिलता तथा पैरानोइया

Schizophrenia or paranoia

इकाई रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 मनोविदिलता का अर्थ

8.4 मनोविदिलता का निदान

8.5 मनोविदिलता के सामान्य लक्षण

8.6 मनोविदिलता के प्रकार

8.7 मनोविदिलता के कारण

8.8 मनोविदिलता के उपचार

8.9 पैरानोया का अर्थ

8.10 पैरानोया का निदान

8.11 पैरानोया के प्रकार

8.12 पैरानोया के लक्षण

8.13 पैरानोया का उपचार

8.14 सारांश

8.15 प्रश्नोत्तर

8.16 संदर्भसूची

8.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में मनोविदिलता तथा पैरानोया के बारे में बताया गया हैं। मनोविदिलता का रोग 18 से 19 वर्ष की आयु से लकर लगभग 36 वर्ष की आयु में कभी भी होता पाया गया हैं। इस रोग के होने के कारण भिन्न-भिन्न होते हैं। जब यह रोग सक्रिय अवस्था में होता हैं तब इस रोग के लक्षण रोगी में स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं। मनोविदिलता की सक्रिय अवस्था में रोगी में धनात्मक लक्षण औररोगी में ऋणात्मक लक्षण दिखायी देते हैं। एक अध्ययन (Strang, 1992) के अनुसार मनोविदिलता के 25% रोगी इलाज से पूर्णरूपेण स्वस्थ हो जाते हैं। इसी प्रकार व्यामोही विकृति वह रोग हैं जिसमें व्यामोह (Delusions) की प्रधानता होती हैं। व्यामोह का अर्थ गलत विश्वास (False Belief) होता

हैं। व्यामोही विकृति के रोगी में एक प्रकार के अथवा एक से अधिक प्रकार के व्यामोह पाये जाते हैं। व्यामोह के अतिरिक्त रोगी का व्यक्तित्व अन्य सामान्य व्यक्तियों की ही भाँति होता हैं।

8.2 उद्देश्य

- मनोविदिलता का अर्थ, निदान, लक्षणों के बारे में समझ सकेंगे।
- मनोविदिलता के प्रकार व कारणों को समझ पायेंगे।
- मनोविदिलता के उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- पैरानोया का अर्थ, निदान तथा प्रकारों को समझ पायेंगे।
- पैरानोया के लक्षणों को समझ सकेंगे।
- पैरानोया का उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।

8.3 मनोविदिलता का अर्थ

मनोविदिलता की परिभाषा (Definition of Schizophrenia)

कैमरान (1963) के अनुसार, ''मनोविदिलता सम्बन्धी प्रतिक्रियाएँ वे प्रतिगमनात्मक प्रयास हैं जिसमें व्यक्ति तनाव और चिन्ता से पलायन करता हैं। यह पलायन वह वास्तविक अन्तरवैयक्तिक वस्तु सम्बन्धों के स्थान पर व्यामोह और विभ्रमों के निर्माण द्वारा करता हैं।''1

कोलमैन (1981) के अनुसार, ''मनोविदिलता वह विवरणात्मक पद हैं जिसमें मनोविक्षिप्तता से सम्बन्धित कई विकारों का बोध होता हैं। इसमें बढ़े पैमाने पर वास्तविकता की तोड़-मरोड़ दिखायी देती हैं। रोगी सामाजिक अन्तर्क्रियाओं से पलायन करता हैं। व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण विचार और संवेग अपूर्ण और विघटित रूप में होता हैं।''

8.4 मनोविदिलता का निदान

DSM-IV वर्गीकरण में मनोविदिलता के निदान के लिए जो चार कसौटियाँ बतायी गयी हैं उनका वर्णन निम्न प्रकार से हैं :-

1- मनोविदिलता के रोगी में मनोविदिलता के लक्षण कम से कम छ:माह या उससे अधिक अवधि तक जब बने रहने हैं तब रोगी को मनोविदिलता का रोगी कहते हैं। इसी में तक रोग सक्रिय यह भी बतायी गयी हैं कि छ:माह की अवधि में रोगी में कम से कम एक माह तक रोग सक्रिय अवस्था में होना आवश्यक हैं। इस सक्रिय अवस्था में रोगी में व्यामोह (Delusion), विभ्रम (Hallueination) और विघटित सम्भाषण (Disorganized Speech) पायी जानी आवश्यक हैं। इसके अलावा सक्रिया अवस्था में कैटेटानिक लक्षण और नकारात्मक लक्षण पाये जाने भी आवश्यक हैं।

2- दूसरी कसौटी के अनुसार व्यक्ति का सामान्य काम-काज, सामाजिक सम्बन्ध, स्वयं की देखभाल और निष्पादन आदि सामान्य स्तर की अपेक्षा नीचे गिरे हुए होते हैं।

3- तीसरी कसौटी के अनुसार रोगी में विषादी और उन्मादी घटना का अनुभव मनोविदिलता के सम्पूर्ण अवधि की तुलना में अपेक्षाकृत कम समय के लिए हुआ होना चाहिए इसी

कसौटी के आधार पर मनोविदिलता के रोगी को मनोदशा विकृति (Mood Disorder) से भिन्न कर पाते हैं।

4- चौथी कसौटी के अनुसार मनोविदिलता के लक्षण रोगी में द्रव्य उपयोग (Substance use) से नहीं हुए होने चाहिए। मनोविदिलता के लक्षण मस्तिष्क के ट्यूमर या मस्तिष्क के आघात से भी उत्पन्न नहीं होने चाहिए।

उपर्युक्त चार कसौटियों के आधार पर ही मनोविदिलता के रोगी का निदान किया जाता हैं।

8.5 मनोविदिलता के सामान्य लक्षण

कभी-कभी मनोविदिलता के लक्षणों का विकास मन्द गति से परन्तु विश्वासघात या छल-कपटपूर्ण ढंग से होता हैं। लक्षणों के विकास के प्रारम्भ में यह देखा गया हैं कि व्यक्ति की चारों और के वातावरण में रूचियाँ धीरे-धीरे कम होने लगती हैं। वह दिवास्वप्न देखने लगता हैं। धीरे-धीरे उसका व्यवहार रूखा होता जाता हैं। प्रारम्भ में उसकी प्रतिक्रिया हल्की-सी अनुपयुक्त हो जाती हैं। मनोविदिलता की यह प्रारम्भिक अवस्था Process Schizophrenia कहलाती हैं।

अधिकांशत: यह रोग अचानक उत्पन्न होता हैं। इस अवस्था में विशिष्ट प्रकार के तीव्र संवेगात्मक उपद्रव (Intense Emotional Turmoil) तथा सम्भ्रान्ति (Confusion) प्रारम्भ हो जाता हैं। कुछ विशिष्ट प्रतिबलों (Stresses) से सम्बन्धित यह मनोविदिलता रोगी (Reactive Schizophrenia) कहलाता हैं।

मनोविदिलता उत्पन्न होने की दो प्रतिक्रियाएँ - (1) Process Schizopherniz, (2) Reactive Schizophrenia होती हैं। इन दोनों ही प्रतिक्रियाओं द्वारा उत्पन्न लक्षण भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न होते हैं। लक्षणों में समय बीतने के साथ-साथ भी परिवर्तन देखा गया हैं। लेकिन मनोविदिलता में प्रत्यक्षीकरण, विचार और संवेगों का विघटन हो जाता हैं। कुछ प्रमुख सामान्य लक्षण निम्न प्रकार से हैं :-

1- वास्तविकता से पलायन (Withdrawal from Reality) -

रोगी वास्वविकता से पलायन करता हैं। रोगी के चारों और के वातावरण में जो लोग रहते हैं, वह उनमें रूचि कम लेता हैं। उनसे नाता या सम्पर्क कम करता जाता हैं। रोगी अपनी दुनिया में खोया रहता हैं। उसकी दुनिया ऐसी होती हैं जहाँ उसकी अपनी इच्छाएँ, कल्पनाएँ और संवेग आदि राज्य करते हैं। रोग के लक्षण बढने के साथ-साथ उसका उसके चारों और के लोगों से सम्बन्ध अधिक और अधिक टूटता जाता हैं।

2- स्वलीनता (Autism) -

रोगी स्वनिर्मित कल्पनाओं (Phantasies) में खोया रहता हैं। उसकी यह दुनिया जिसमें वह खोया रहता हैं, उसके व्यवहार को महत्वपूर्ण ढंग से नियन्त्रित करती हैं। उसकी यह आन्तरिक दुनिया उसकी बातचीत, उनके संवेगों और चिन्तन को प्रभावित करती हैं।

3- संवेगात्मक रूखापन और विरूपण (Emotional Blunting and Distoration) -

मनोविदिलता के रोगी की संवेगात्मक अभिव्यक्ति में रूखापन और विरूपण दिखायी देता हैं। जब यह लक्षण साधारण अवस्था में होता हैं, तब रोगी संवेगों की अभिव्यक्ति आवश्यकता से बहुत कम मात्रा में करता हैं। रोग की साधारण अवस्था में भी रोगी के संवेग

परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होते हैं। वह अकारण किसी भी संवेग की अभिव्यक्ति कर सकता हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर संवेग की त्रुटिपूर्ण अभिव्यक्ति कर सकता हैं। उदाहरण के लिए, दु:खद समाचार सुनकर रोने के स्थान पर खिलखिलाकर हँस सकता हैं।

4- विचार प्रक्रिया का विघटन (Disorganization in Thought Process) -

मनोविदिलता के रोगी की विचार-प्रक्रिया रोग की गम्भीरता बढ़ने के साथ-साथ विघटित और विघटित होती चली जाती हैं। साधारण अवस्था में विचारों में विघटन कम मात्रा में तथा तीव्र अवस्था में विचारों का विघटन अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में हो जाता हैं।

5- भाषा विकृतियाँ (Speech Disorders) -

मनोविदिलता का रोगी बहुत कम बोलता हैं। अक्सर वह चुप, शान्त और गुमसुम-सा रहता हैं। थोड़ा-बहुत यह रोगी जो बातचीत करते हैं, उसमें शब्द असम्बन्धित होते हैं। इनकी भाषा में कुछ प्रमुख लक्षण हैं - असंगत (Irrelevant), पुनरावृत्ति (Repetitiveness), अस्पष्ट (Incoherent) तथा असम्बन्धित (Disconnected) आदि।

6- व्यामोह (Delusions) -

इसका अर्थ झूठे विश्वास हैं। इस लक्षण में रोगी यह विश्वास करता हैं कि उसके विचार सत्य हैं। दूसरे व्यक्ति उसके इन विश्वासों के लिए चाहे कितने तर्क दें, रोगी तर्क के बाद भी अपने विचारों को सत्य मानता हैं। व्यामोह के साथ-साथ मनोविदिलता के रोगी में स्मृति विकार, संवेगात्मक विकास और विभ्रम जैसे लक्षण भी उपस्थित होते हैं। मनोविदिलता के रोगी में निम्न प्रकार के व्यामोह पाये जाते हैं :- (1) महानता व्यामोह (Delusis of Grandeur), (2) उत्पीड़न व्यामोह (Delusions of Presecution), (3) स्व-सन्दर्भ (Delusion of Reference), (4) चिन्ता व्यामोह (Hypochondriacal Delusion), (5) प्रभाव व्यामोह (Delusion of Influence) आदि। इन विभिन्न प्रकार के व्यामोह का वर्णन असामान्यता के लक्षण अध्याय में किया गया हैं।

7- विभ्रम (Hallucinations) -

विभ्रम व्यक्ति उद्दीपक की अनुपस्थिति में भी उद्दीपन का प्रत्यक्षीकरण करता हैं। विभ्रम में मनोविदिलता के रोगी को विभिन्न प्रकार की आवाजें सुनायी दे सकती हैं। सुनायी देने वाली आवाजों से उसे कुछ कार्य करने का आदेश प्राप्त हो सकता हैं। वह इन आवाजों में अपनी आलोचना भी सुन सकता हैं। यह आवाजें मित्रों या दुश्मनों में से किसी की भी हो सकती हैं। देवी-देवताओं की भी आवाजें हो सकती हैं। अन्य विभ्रमों की अपेक्षा श्रवणात्मक विभ्रम मनोविदिलता के रोगी को अधिक अनुभव होते हैं। उसे विभिन्न प्रकार की गैस की बदबू आ सकती हैं। उसे ऐसा लगता हैं कि वह विष का स्वाद ले रहा हैं। मनोविदिलता के रोगी में विभ्रम व्यामोह के साथ-साथ उत्पन्न होते हैं।

8- चिन्ता और आतंक (Anxiety and Panic) -

मनोविदिलता के रोगी का उसके विचारों और भावनाओं पर नियन्त्रण नहीं होता हैं तथा उसकी विचार प्रक्रिया कभी-कभी पूर्णत: अवरूद्ध-सी हो जाती हैं, तब उसकी भावनाओं और विचारों में तालमेल नहीं बन पाता हैं। इस अवस्था में रोगी अत्यधिक चिन्तित और आतंकित हो जाता हैं।

9- कुछ व्यवहार सम्बन्धी विकृतियाँ (Some Anamalies of Behaviour) -
मनोविदिलता के रोगी के बाह्य व्यवहार में कुछ निम्न विकृतियाँ और विचित्रताएँ दृष्टिगोचर होती हैं - विचित्र प्रकार से बैठना, विचित्र प्रकार से खड़े रहना, एक ही मुद्रा में कई दिन तक खड़े या बैठे रहना, बाल नोचना, हाथ मलना, वस्तुओं को तोड़ना-फोड़ना और फेंकना।

8.6 मनोविदिलता के प्रकार (Types of Schizophrenia)

मनोविदिलता के विभिन्न प्रकार American Psychiatric Association ने बताये हैं। इसका नामकरण निम्न प्रकार हैं :-

1- सरल मनोविदिलता (Simple Schizophrenia)
2- विघटित मनोविदिलता या हेबीफ्रेनिक मनोविदिलता (Disorganized Schizophreniz of Hebephrenic Type Schizophrenia)
3- कैटाटानिक मनोविदिलता (Catationic Type Schizophrenia)
4- पैरानाइड मनोविदिलता (Parnoid Type Schizophrenia)
5- तीव्र प्रकार की मनोविदिलता (Active Type Schizophrenia)
6- बाल्यकालीन मनोविदिलता (Childhood Type Schizophrenia)
7- दीर्घकालीन अभिभेदित मनोविदिलता (Chronic Undifferentiated Type Schizophrenia)
8- भाव प्रारूप मनोविदिलता (Schizo-Affective Type Schizophrenia)
9- अविशिष्ट मनोविदिलता (Residual Type)
10- गुप्त प्रकार की मनोविदिलता (Latent Type Schizophrenia)

इनमें से प्रत्येक का अलग-अलग वर्णन इस प्रकार से हैं :-

1- सरल मनोविदिलता (Simple Schizophrenia) :- यह मनोविदिलता बहुत कम संख्या में पायी जाती हैं (Straker, 1974)। सरल मनोविदिलता के लक्षण धीरे-धीरे उत्पन्न और विकसित होते हैं। रोगी की वातावरण के प्रति रूचियाँ धीरे-धीरे संकीर्ण होती हैं। धीरे-धीरे उसके सामाजिक सम्बन्ध टूटने लगते हैं। विपरीत सैक्स में रूचि कम होने लगती हैं।रोगी अपनी कल्पित दुनिया में रहना अधिक पसन्द करता है। रोगी मूड़ी और चिड़चिड़ा हो जाता हैं।
2- विघटित मनोविदिलता या हेबीफ्रेनिक मनोविदिलता (Disorganized Schizophreniz of Hebephrenic Type Schizophrenia) - DSM-III में हेबीफ्रेनिक मनोविदिलता का नाम था जो DSM-IV में विघटित मनोविदिलता हो गया हैं। इस प्रकार के रोगियों की आयु अपेक्षाकृत कम होती हैं। इस रोगी का व्यवहार विचित्र होता हैं। इसमें व्यक्तित्व विघटन कुछ अधिक तीव्र होता हैं। जैसे-जैसे यह रोग बढ़ता जाता हैं, रोगी में संवेगात्मक उदासीनता आती जाती हैं।
3- कैटाटानिक मनोविदिलता (Catationic Type Schizophrenia) - मनोविदिलता का यह रूप अचानक विकसित होता हैं। इस रोग की दो अवस्थाएँ हैं :- (1) मूच्छित अवस्था (Stupor Stage of Withdrawn Stage), (2) उत्तेजना अवस्था (Excited Stage)।रोगी कभी भी एक अवस्था से दूसरी अवस्था में और दूसरी से पहली अवस्था में

पहुँच सकता हैं। किसी रोगी में एक अवस्था अधिक समय और दूसरी कम समय रह सकती हैं।

मूच्छित अवस्था (Stupor Stage of Withdrawn Stage) - इस अवस्था में रोगी घण्टों गतिहीन रह सकता हैं और एक ही आसन में कई-कई घण्टे बैठा रह सकता हैं। एक आसन में कई-कई घण्टे बैठने के कारण उसके पैरों में सूजन आ सकती हैं और नील भी पड़ सकते हैं। यदि रोगी के आसन को बदलने का प्रयास किया जाये तो वह विरोध करता हैं। मल-मूत्र और मुँह से लार बहने का उसे कोई ध्यान नहीं रहता हैं। वह अनेक प्रकार के विभ्रम से पीड़ित होता हैं।

उतेजना अवस्था (Excited Stage) - शान्त रोगी एकाएक उत्तेजित हो सकता हैं। इस स्थिति में उसकी क्रियाशीलता बहुत बढ़ी हुई होती हैं। वह अस्पष्ट, बेतुकी, जोर-जोर से बातें करता हैं। दूसरों के सामने गन्दा व्यवहार कर सकता हैं और हस्तमैथुन भी कर सकता हैं। वह इस अवस्था में हिलता रहता हैं जैसे घड़ी का पेण्डलम। वह कमरे के चक्कर काटता हैं। वह स्वयं की हत्या कर सकता हैं और दूसरों पर आक्रमण तथा स्वयं पर आक्रमण भी कर सकता हैं। कुछ घण्टे या दिनों या कुछ सप्ताह तक यह अवस्था चल सकती हैं।

4- पैरानाइड मनोविदिलता (Paranoid Type Schizophrenia) - इस प्रकार की मनोविदिलता अन्य प्रकारों की अपेक्षा अधिक मात्रा में पायी जाती हैं। इस मनोविदिलता में रोगी अनेक प्रकार के व्यामोह से पीड़ित होता हैं। रोगी के व्यामोह अर्थहीन और शीघ्र परिवर्तित होने वाले व्यामोह होते हैं।

मनोविदिलता के लगभग आधे रोगी 'Paranoid Type' के होते हैं। उनके अन्त:वैयक्तिक सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। इस प्रकार के रोगी को दण्डात्मक व्यामोह (Delusions of Persecution) सर्वाधिक दिखायी देते हैं। उसे आशंका होती हैं कि उसके रिश्तेदार और सम्बन्धी उस पर निगरानी रख रहे हैं, उसका पीछा कर रहे हैं, उसके ही बारे में बातें करते रहते हैं। लोग उसे जहर देकर मार डालना चाहते हैं। विद्युतीय किरणें उसके शरीर से पास हो रही हैं। विद्युत उपकरणों द्वारा उसकी मानसिक क्रियाएँ प्रभावित हैं।

रोगी स्व-सन्दर्भ और महानता के व्यामोह (Delusions of Grandeur) भी पाये जाते हैं। व्यक्ति दृष्टि और श्रवण आदि से सम्बन्धित विभ्रमात्मक अनुभव भी करता हैं। वह देवी-देवताओं और ईश्वर की आवाजें या विचित्र संगीत सुनता हैं। यह विभिन्न प्रकार की विचित्र आवाजें सुनकर रोगी तोड़-फोड़ कर सकता हैं।

5- तीव्र प्रकार की मनोविदिलता (Active Type Schizophrenia) - इस मनोविदिलता को पहले Acute Undifferentiated Type कहा जाता था। चूँकि मनोविदिलता का प्रत्येक प्रकार तीव्र हो सकता हैं। अत: यह तीव्र प्रकार उन सबसे भिन्न एक अलग प्रकार हैं। यह एक सापेक्षित रूप से सामान्य व्यक्ति में अकस्मात् उत्पन्न हो सकता हैं। इसमें व्यापक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं जिससे व्यक्तित्व का विघटन हो जाता हैं। यह रोगी कुछ दिनों या कुछ सप्ताह में अपनी समस्याओं का समाधान करके सामान्य व्यक्ति बन जाता हैं।

इस रोगी के कुछ प्रमुख लक्षण हैं - त्रुटिपूर्ण प्रत्यक्षीकरण नियन्त्रण ढीला पड़ते ही आतंक मचा देता हैं, उसके चारों और क्या हो रहा हैं, इसे समझने का बार-बार प्रयत्न करता हैं।

भविष्य के प्रति बहुत अधिक आशंका होती हैं, अनुपयुक्त पारस्परिक सम्बन्ध होते हैं, आदि।

6- बाल्यकालीन मनोविदिलता (Childhood Type Schizophrenia) - बाल्यकालीन मनोविदिलता जैसा इसके नाम से स्पष्ट हैं, यह बाल्यावस्था में होने वाला रोग हैं। इस रोग के कुछ प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार से हैं - विचार-प्रक्रिया का विरूपण (Distortion), पारस्परिक सम्बन्धों का अभाव, कामुक और आक्रामक आवेगों की अकस्मात उत्पत्ति, चिन्तन का विघटन, असंगत व्यवहार, भाषा सम्बन्धी विकार जैसे धीरे बोलना और शब्दों का विरूपण और मनोग्रस्तता आदि।

7- दीर्घकालीन अभिभेदित मनोविदिलता (Chronic Undifferentiated Type Schizophrenia) - यह मनोविदिलता का वह रूप हैं जो अन्य रूपों की अपेक्षा अधिक दिनों तक बना रहता हैं वास्तव में यह मनोविदिलता के पूर्व की अवस्था हैं। इसमें मिश्रित प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं। इस प्रकार के रोगी में लक्षण गुप्त और मनोविदिलता के हल्के प्रकार के लक्षण होते हैं। इन हल्के मनोविदिलता के लक्षणों के होते हुए भी रोगी किसी न किसी सीमा तक अपना समायोजन करने में सफल होता हैं और अपनी जीविका चलाता रहता हैं।

8- भाव प्रारूप मनोविदिलता (Schizo-Affective Type Schizophrenia) - यह मनोविदिलता का वह प्रकार हैं जिसमें मनोविदिलता और उत्साह-विषाद मनोविक्षिप्तता के मिश्रित लक्षण पाये जाते हैं। यद्यपि रोगी में प्राथमिक लक्षण मनोविदिलता के ही होते हैं परन्तु समय-समय पर उत्साह-विषाद रोग के लक्षणों से भी प्रभावित रहता हैं।

9- अविशिष्ट मनोविदिलता (Residual Type) - इस वर्ग के अन्तर्गत वे रोगी आते हैं जो अस्पताल के उपचार के बाद काफी ठीक तो हो जाते हैं परन्तु मनोविदिलता के लक्षणों के कुछ अवशेष विद्यमान रह जाते हैं। यह अवशेष मनोविदिलता के हल्के लक्षण होते हैं।

10-गुप्त प्रकार की मनोविदिलता (Latent Type Schizophrenia) - इस प्रकार के मनोविदिलता के लक्षण तो होते हैं परन्तु लक्षणों का इतिहास पूर्ण रूप से मनोविदिलता के प्रसंग में नहीं होता हैं।

8.7 मनोविदिलता के सामान्य कारण (General factors of Schizophrenia)

(क) जैविक कारक (Biological Factors)

1- आनुवंशिकता (Heredity) - आनुवंशिकता के प्रभाव के अध्ययन के लिए इस दिशा में निम्न प्रकार के अध्ययन किये गये हैं :-

(i) जुड़वाँ बच्चों के अध्ययन (Twin Studies) - इस दिशा में कोलमैन (F.J. Kallman. 1953) ने अपने अध्ययनों के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि समरूपी जुड़वाँ बच्चों (Identical Twins) में मनोविदिलता होने की सम्भावना 86.7% तथा असमरूपी जुड़वाँ बच्चों (Froternal Twins) में मनोविदिलता होने की केवल 14.5% सम्भावना हैं। इस दिशा में जो आधुनिक अध्ययन (S.M. Cohen, et.al., 1972) किये गये हैं, उनमें यह

प्रतिशत क्रमश: 23.5% और 5.3% प्राप्त हुआ हैं। यह जुड़वाँ बच्चे मनोविदिलता के रोगियों के थे।

(ii) मनोविदिलता रोग से पीड़ित माँ से बच्चों को अलग पाया गया -

एक अध्ययन (L. Heston, 1966) में यह देखा गया कि मनोविदिलता रोग से पीड़ित माँ के बच्चों को जन्म के तुरन्त बाद दूसरे उन घरों में रखा गया जहाँ इस प्रकार के रोगियों का कोई प्रभाव नहीं था। इन बच्चों में यह देखा गया कि 16.6% बच्चे मनोविदिलता रोग से पीड़ित हो गये जबकि नियन्त्रित समूह के किसी भी बच्चे को मनोविदिलता का रोग नहीं हुआ।

(iii) पारिवारिक अध्ययन (Family Studies) -

इस प्रकार के अध्ययनों में वे परिवार चुने गये जिनमें माँ या पिता में से कोई एक व्यक्ति मनोविदिलता का शिकार था। एक अध्ययन (L.L. Heston, 1970) में यह देखा गया कि उन परिवारों के 46% बच्चों को बाद में किसी न किसी प्रकार का मनोविदिलता रोग उत्पन्न हो गया।

2- जैव-रासायनिक कारक (Biochemical Factors) -

इस दिशा में हुए अध्ययनों के आधार पर हिमविच (H.E. Himwich, 1979) ने यह निष्कर्ष निकाला कि मनोविदिलता का रोगी जैविक रूप से अन्य रोगियों और लोगों से भिन्न होता हैं। जब इस प्रकार के व्यक्ति प्रतिबल (Stress) परिस्थितियों में होते हैं, तब इन व्यक्तित्व में कुछ ऐसे जैव रासायनिक तत्व उत्पन्न होते हैं, जो मनोविक्षिप्तता उत्पन्न करते हैं।

3- न्यूरोफिजियोलॉजिकल कारक (Neurophysiological Factors) -

इस दिशा में मुख्यत: निम्न तीन प्रकार के अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि जब व्यक्ति के सामने प्रतिबल परिस्थिति उत्पन्न होती हैं, तब इनके मस्तिष्क में कुछ विशेष प्रकार की Neurophysiological Processes चलती हैं।

(i) असामान्य मस्तिष्क की संरचना (Abnormal Brain Structurc) - कुछ अध्ययनों (Strange, 1992, Buchsbaum and Haier, 1987) से यह स्पष्ट हुआ हैं कि मनोविदिलता का कारण मस्तिष्क की संरचना का असामान्य होना हैं।

(ii) उद्दोलन और विघटन (Arousal and Disorganization) :- इस दिशा में हुए अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि मनोविदिलता का रोग स्वतन्त्र नाड़ी संस्थान (Autonomic Nervous System) में गड़बड़ी के फलस्वरूप उत्पन्न होता हैं।

(ख) मनोवैज्ञानिक और अन्त:वैयक्तिक कारक (Psychologicals & Interpersonal Factors)

1- **आरम्भिक जीवन में मनोघात (Early Psychic Trauma) -**

कुछ अध्यनों में यह भी देखा गया कि जिन बालकों को बाल्यावस्था में माता-पिता द्वारा तिरस्कार या अस्वीकृत किया जाता हैं, इनमें असुरक्षा, कुण्ठा उत्पन्न होती हैं और आत्म-अवमूल्यन (Self-Devaluation) होता हैं, इस अवस्था में बाह्य संसार उन्हें भयावह लगता हैं, फलत: बच्चे अनम्य (Rigid) और कठोर हो जाते हैं। इस परिस्थिति के परिणामस्वरूप उनमें स्नेह और सामाजिकता कम होती चली जाती हैं।

2- दोषपूर्ण संरक्षक-पुत्र सम्बन्ध और पारिवारिक अन्त:क्रियाएँ (Pathogenic Parent-Child Relationship & Family Interactions) -

मनोविदिलता के रोगियों की पारिवारिक अन्त:क्रियाओं सम्बन्धी अध्ययन मुख्यत: निम्न प्रकार के हैं :-

(i) मनोविदिलता के रोगी की माँ और पिता (Mother & Father of Schizophrenic) - अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि मनोविदिलता के रोगी की माँ का व्यवहार तिरस्कारपूर्ण, प्रभुत्वशाली, शीत (Cold), अति संरक्षण वाला होता हैं। यह भी हो सकता हैं कि इस प्रकार की माँ मौखिक रूप से स्नेह प्रदान करने वाली होती हैं लेकिन मौलिक रूप से उनके व्यवहार में उपर्युक्त विशेषताएँ होती हैं।

(ii) पारिवारिक सम्बन्ध और अन्त:क्रियाएँ (Family Relationships & Interactions) -

एक अध्ययन (Wynne, et. al., 1958) में यह देखा गया हैं कि मनोविदिलता के रोगी के परिवार के सदस्यों के रोल (Role) संरचना में अनम्यता होती हैं। यह अनम्यता बालक के वृद्धि सम्बन्धी विकास को अवरूद्ध करती हैं तथा बालक के आत्म-निर्देश को भी अवरूद्ध करती हैं। मनोविदिलता के रोगी के परिवार के सदस्यों में संवेगात्मक दूरी (Emotional Distance) होती हैं तथा परिवार के कुछ सदस्यों में संवेगात्मक विच्छेद (Emotional Divorce) भी पाया जाता हैं।

(iii) दोषपूर्ण सम्प्रेषण (Faulty Communication) -

यह एक अध्ययन (G. Bateson, 1960) कि जब रोगी के परिवार के सदस्यों के बीच सम्प्रेषण अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न करने वाला और अस्पष्ट होता हैं तो दोषपूर्ण सम्प्रेषण मनोविदिलता के रोगी में विचार विकृतियों (Thought Disorders) को उत्पन्न करता हैं।

(vi) विनाशकारी विवाह सम्बन्धी अन्त:क्रियाएँ (Destructive Marital Interactions)-

माता-पिता के वैवाहिक जीवन में सम्बन्धित अन्त-क्रियाएँ भी बालकों में मनोविदिलता के प्रति उन्मुखता बढ़ाती हैं। माता-पिता की आपसी खींचातानी और संवेगात्मकता कुसमायोजन बालक के व्यवहार के लिए बहुत ही घातक होता हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध और अन्त:क्रियाओं के क्षेत्र में जो अध्यन हुआ हैं, उनसे लिडज (T. :odz. et.al., 1969, 1973) ने निम्न महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं -

(1) मनोविदिलता के पुरूष रोगी बहुधा ऐसे परिवारों से आते हैं जो विकृत और निष्क्रिय होते हैं। इन परिवारों के माता-पिता का बालकों के प्रति व्यवहार अति दोषपूर्ण होता हैं।

(2) मनोविदिलता रोगियों के सभी परिवारों में लगभग आधे परिवार ऐसे होते हैं जिनमें माता-पिता में गम्भीर रूप में दोषपूर्ण संवेगात्मकता पायी जाता हैं।

(3) इन परिवारों में बालक वास्तविकता विकृत रूप में देखता और सीखता हैं।

3- दोषपूर्ण अधिगम (Faulty Learning) - मनोविदिलता के लक्षण की उत्पत्ति में दोषपूर्ण अधिगम का महत्वपूर्ण कार्य हैं। दोषपूर्ण अधिनियम से सम्बन्धित निम्न दो स्थितियाँ हैं :-

(i) दुर्बल आत्म-संरचना (Deficient Self-Structure) -

दोषपूर्ण अधिगम बहुधा वे बालक करते हैं जिनकी आत्म-संरचना दुर्बल होती हैं। दुर्बल आत्म-संरचना वाले बच्चे अपने आपको असुरक्षित और और अनुपयुक्त ही नहीं समझते हैं बल्कि इन लोगों में आत्म-अवमूल्यन (Self-Devaluation) भी पाया जाता हैं।

(ii) मानसिक मनोरचनाओं का अतिरंजित उपयोग (Exaggerated use of Ego Defence Mechanisms) -

जब कोई व्यक्ति मानसिक मनोरचनाओं का उपयोग अन्तर्द्वन्द्व और चिन्ता के समाधान के लिए अतिरंजित ढंग से करता हैं तो ऐसे व्यक्ति में विभ्रम और व्यामोह उत्पन्न होने की सम्भावना बन जाती हैं।

4- सामाजिक भूमिका सम्बन्धी समस्याएँ (Social Role Problems) -

मनोविदिलता के रोगी का सामाजिक भूमिका सम्बन्धी व्यवहार अनुपयुक्त होता हैं। किसी व्यक्ति का सामाजिक भूमिका सम्बन्धी व्यवहार जब अनुपयुक्त होता हैं, तब व्यक्ति को सामाजिक व्यवहार के पुरस्कार स्वरूप असफलता प्राप्त होती हैं जिससे उसका आत्म-अवमूल्यन होता हैं।

5- तीव्र प्रतिबल (Excessive Stress) -

मनोविदिलता के लक्षणों की उत्पति का कारण अत्यधिक या तीव्र प्रतिबल परिस्थिति भी हो सकती हैं। यह प्रतिबल परिस्थिति रोगी के लिए असहनीय होती हैं। कामुकता और अवास्तविक आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) से सम्बन्धित अनेक परिस्थितियाँ रोगी के लिए प्रतिबलपूर्ण होती हैं। इन असहनीय प्रतिबल परिस्थितियों का समाधान व्यक्ति जब मानसिक मनोरचनाओं द्वारा भी नहीं कर पाता हैं, तब उसमें मनोविदिलता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

(ग) सामान्य सामाजिक -सांस्कृतिक कारक (General Socio-Cultural Factors)

मनोविदिलता के लक्षणों की उत्पत्ति सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों से भी प्रभावित होती हैं। कुछ अध्ययनों (L. Levy & C. Rowitz, 1972) में यह स्पष्ट हुआ कि मनोविदिलता का रोग निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के लोगों में अधिक मात्रा में पाया जाता हैं। यह रोग उन बड़े शहरों में अधिक मात्रा में पाया जाता हैं जिनमें तीव्र और बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन होते हैं।

8.8 मनोविदिलता का उपचार और परिणाम (Treatment and Outcomes of Schizophrenia)

1- मनोविक्षिप्तता विरोधी औषधियाँ (Antipsychotic Drugs)

मनोविक्षिप्तता के उपचार के लिए मनोविक्षिप्तता विरोधी औषधियों का उपयोग पिछले 50 वर्षो से एक क्रान्ति के रूप में सामने आया हैं। औषधियों में इस क्रान्ति के फलस्वरूप नयी-नयी औषधियों का उपयोग किया जाने लगा हैं। (Bresslin, 1992, Weinberger, 1991)। प्रशान्तक औषधियों (Tranquilizer) के रूप में क्लोरप्रोमाजिन (Chlorpromazine) का उपयोग उद्दोलित रोगी को शान्त करने में किया जाता हैं। इस औषधि से रोगी की विचार विकृतियों को भी शान्त किया जाता हैं। क्लोरप्रोमाजिन के स्थान पर अब अनेक नयी औषधियाँ आ गयी हैं, जिनके नाम हैं-

थियोरिडाजिन(Thioridazine), मेसोरिडाजिन(Mesoridazine), फ्लूफेनाजिन (Fluphenazine) तथा ट्राईफ्लोपेराजिन (Trifluoperazine)। इन सभी औषधियों के व्यापारिक नाम क्रमश: इस प्रकार से हैं - मेलारिल (Mellarill), सेरेनटिल (Serentil), प्रोलिक्सिन (Prolixin) तथा स्टेलाजिन (Stelazine)। यह सभी औषधियाँ रोगी की बढ़ी हुई क्रियाओं को शान्त करती हैं(Davis, et.al., 1988, Strange, 1992)।

2- उपचार की मनोसामाजिक विधियाँ (Psychosocial Approaches to treatment)

मनोविदिलता के रोगियों की चिकित्सा के लिए मनोचिकित्सा पद्धति (Psychotherapy) भी उपयोगी हैं। इसके द्वारा मानव सम्बद्धता को पुन: स्थापित किया जा सकाता हैं। रोग के वास्तविक उपचार और अन्त:वैयक्तिक सम्बन्धों के पुनस्थापन के लिए मनोचिकित्सा पद्धति उपयोगी हैं।

सामाजिक चिकित्सा (Sociotherapy) की सहायता से रोगी के परिवार की विकृतिजन्य परिस्थितियों को दूर किया जाता हैं तथा रोगी को स्वस्थ वातावरण दिलवाया जाता हैं। मनोविदिलता के उपचार के लिए Occupational Therapy और Recteational Therpay भी उपयोगी हैं। बहुधा मनोविदिलता के रोगी की चिकित्सा किसी एक विधि से न करके अनेक विधियों की सहायता से की जाती हैं।

सामुदायिक उपचार (Community Therapy) - मनोविदिलता के रोगियों के उपचार में दो प्रकार के उपागमों का उपयोग होता हैं। पहले प्रकार के उपागम में रोगियों को मानसिक आरोग्यशाला में रखकर उपचार किया जाता हैं अथवा हॉस्पीटल में भर्ती करके उपचार किया जाता हैं।

8.9 व्यामोही विकृति या पैरानोय्या विकृति (DELUSIONAL DISORDER OR PARANOID DISORDER)

पैरानोय्या का अर्थ व्यामोह (Delusions) था अर्थात् इसे रोग न मानकर लक्षण माना जाता था। सर्वप्रथम 1893 ई. में क्रेपलिन ने बताया कि Paranoid Dementia Praecox एक अलग रोग हैं तथा यह रोग Paranoia (व्यामोह) के प्राचीन अर्थ की अपेक्षा पूर्णत: भिन्न हैं। Paranoia शब्द सर्वप्रथम प्रयोग Kahlbaum ने 1883 ई. में किया।

कैमरान (1963) के अनुसार, ''इस प्रकार का रोगी तनाव और चिन्ता से बचाव हेतु अस्वीकरण (Denial) और प्रक्षेपण (Projection) करता हैं फलस्वरूप इन रोगियों में व्यवस्थित व्यामोह के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।''

पैरानोय्या रोग में रोगी विभिन्न प्रकार के व्यामोह (Delusions) देखता हैं। इन व्यामोहों के अतिरिक्त रोगी का वास्तविकता से सम्पर्क होता हैं और व्यक्तित्व गम्भीर विघटन नहीं होता हैं, रोगी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व संगठित तो होता हैं लेकिन तार्किक व्यामोहों को छोड़कर।

कोलमैन (1981) के अनुसार, ''पैरानोय्या के रोगी के व्यामोह से सम्बन्धित सिस्टम का विकास मन्द गति से होता हैं, यह विकास गूढ़, तार्किक और व्यवस्थित होता हैं तथा दण्डात्मक और

महानता के व्यामोहों की प्रधानता होती हैं। व्यामोहों के अतिरिक्त रोगी का व्यक्तित्व सापेक्षित रूप से जुड़ा (Intact) होता हैं, जिसमें कोई गम्भीर विघटन या विभ्रम नहीं होते हैं।''

8.10 व्यामोही विकृति के निदान की कसौटियाँ

DSM-IV वर्गीकरण में व्यामोही विकृति की पहचान या निदान की जो कसौटियाँ बतायी गयी हैं उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से हैं -

1- व्यक्ति में व्यामोह की उपस्थिति कम से कम एक माह से हो रही और यह व्यामोह व्यक्ति के सामान्य जीवन की परिस्थितियों से सम्बन्धित होने चाहिए।
2- व्यक्ति में व्यामोही मनोविदिलता (Paranoid Schizoprenia) के लक्षण उपस्थित नहीं होने चाहिए। व्यक्ति में यदि किसी प्रकार के विभ्रम हैं तो वह विभ्रम प्रबल नहीं हाने चाहिए।
3- व्यक्ति का व्यवहार व्यामोहों को छोड़कर किसी भी प्रकार से असामान्य या अनोखा दृष्टिगोचर नहीं होना चाहिए।
4- व्यक्ति में व्यामोह के साथ यदि उसकी मनोदशा (Mood) यदि कुछ गड़बड़ हैं तब हर हाल में मनोदशा की गड़बड़ी व्यामोही अवधि की तुलना में बहुत कम होनी चाहिए।
5- व्यक्ति के व्यवहार में किसी भी प्रकार क्षुब्धता (Disturbance) का विघ्न का कारण कोई सामान्य मेडिकल अवस्था नहीं होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में किसी औषधि आदि के प्रयोग के कारण व्यक्ति व्यवहार में क्षुब्धता या विघ्न नहीं होना चाहिए।

8.11 व्यामोही विकृति के प्रकार (Types of Paranoid Disorder)

स्थिर व्यामोही विकृति के कुछ प्रमुख प्रकार निम्न प्रकार से हैं -

1- दण्डात्मक व्यामोही विकृति (Persecutory Paranoid Disorder) -
इस प्रकार के रोगी में यह गलत विश्वास या व्यामोह होता हैं कि दूसरे लोग उसके लिए षड्यन्त्र रच रहे हैं या उसका पीछा कर रहे हैं अथवा उसके फँसाने के लिए जाल बिछा रहे हैं। ऐसा व्यक्ति जिसमें यह व्यामोह होते हैं वह उन व्यक्तियों के प्रति क्रोध और हिंसात्मक व्यवहार करते हैं जो उसका पीछा कर रहे हैं।
2- व्यामोही विकृति- ईर्ष्यालु प्रकार (Delusional Disorderea Jealous Type) -
इस प्रकार की व्यामोही विकृति में व्यक्ति दूसरों से या अपने ही परिवार के सदस्यों से ईर्ष्या रखता हैं। कई बार ऐसा रोगी अपने जीवन साथी के प्रति छोटे-छोटे सबूतों के आधार पर यह त्रुटिपूर्ण अनुमान लगा बैठता हैं कि उसका जीवन साथी दूसरे से प्रेम करता हैं।
3- व्यामोही विकृति-कामोन्मादी प्रकार (Delusional Disorder - Erotomanic Type) -
इस प्रकार केरोगी को यह विश्वास हो जाता हैं कि दूसरा परिचित्त व्यक्ति उससे न केवल प्रेम करता हैं बल्कि उसके साथ लैंगिक सम्बंध भी रखना चाहता हैं। जबकि वास्तविकता यह नहीं होती हैं। इसके बाद भी रोगी व्यक्ति उस व्यक्ति से सम्पर्क बनाये रखता हैं जिसके लिए वह सोचता हैं कि वह उससे प्रेम करता हैं।

4- व्यामोही विकृति-आडम्बरी प्रकार (Delsuional Disorder - Grandiose Type) - इस प्रकार के रोगी को यह गलत विश्वास होता हैं कि वह कोई असाधारण या दिव्य सूझ या दिव्य शक्ति वाला व्यक्ति हैं। कई बार वह अपने लिये यह समझ बैठता हैं कि उसने कोई महत्वपूर्ण खोज की हैं।

5- व्यामोही विकृति-शारीरिक प्रकार (Delusional Disorder- Somatic Type)- इस प्रकार का रोगी यह गलत विश्वास करता हैं कि उसमें कोई शारीरिक क्षुब्धता या विघ्न (Physical Disturbance) हैं। इस शारीरिक क्षुब्धता से वह हर समय परेशानी का अनुभव करता हैं। कई बार वह इस प्रकार की शारीरिक क्षुब्धता में यह विश्वास कर बैठता हैं कि उसके मुँह से भारी दुर्गन्ध आ रही हैं या उसकी त्वचा से भारी दुर्गन्ध आ रही हैं अथवा वह यह विश्वास करता हैं कि उसकी त्वचा में कोई बड़ा रोग हो गया हैं आदि।

6- व्यामोही विकृति मिश्रित प्रकार (Delusional Disorder-Mixed Type) - व्यामोही विकृति का यह वह प्रकार हैं जिसमें थोड़े-थोड़े कई व्यामोह पाये जाते हैं।

अविशिष्ट प्रकार (Unspecified Type) - व्यामोही विकृति के इस प्रकार में रोगी में जब यह निश्चय नहीं हो पाता हैं कि उसका व्यामोह किस प्रकार हैं तब उसे इस श्रेणी में रखा जाता हैं।

8.12 पैरानोय्या के लक्षण (Symptoms of Paranoia)

पैरानोय्या के रोगी के कुछ अनुभव और लक्षण निम्न प्रकार से होते हैं -

1- उसे अकेला छोड़ दिया गया हैं।
2- लोग उससे नाजायज फायदा उठा रहे हैं।
3- लोग उसके विरूद्ध षड्यन्त्र रच रहे हैं।
4- लोग उसके साथ दुर्व्यवहार रहे हैं।
5- वह यह अनुभव करता हैं कि उसके पीछे जासूस लगे हुए हैं।
6- वह अपने आपको उपेक्षित समझता हैं।
7- उसके दुश्मन उसके साथ दुर्व्यवहार कर रहे हैं।
8- उसके विश्वासों और व्यामोहों के कथानक का क्षेत्र व्यापक होता हैं।
9- वह यह मानता हैं कि संसार के लोग निष्ठुर हैं, स्वार्थी और निर्दयी भी हैं।
10- उसकी कुछ चीजों की चोरी हो गयी हैं।
11- वह यह अनुभव करता हैं कि लोग उसके पीछे हाथ धोकर पड़े हैं।
12- इन रोगियों में दण्डात्मक व्यामोह (Delusion of Persection) और महानता के व्यामोह (Delusions of Grandeur) सर्वाधिक मात्रा में पाये जाते हैं।

मिलनर (K.O. Milner, 1949) ने पैरानोय्या के एक केस का वर्णन निम्न प्रकार से किया हैं- रोगी की आयु 33 वर्ष थी। इस रोगी ने अपनी पत्नी की हत्या सिर में हथौड़े मार-मार कर की थी। अपनी पत्नी की हत्या करने से पूर्व उसे विश्वास था कि उसकी पत्नी किसी अज्ञात रोग से पीड़ित हैं और उसने अपने पति को रोग इसलिए लगाया हैं कि पति की मृत्यु हो जाए। उसका यह भी विश्वास था कि बीमारी कैंसर कीटाणुओं से सम्बन्धित हैं। उसने अपने इस प्रकार के विश्वास के लिए निम्न तर्क प्रस्तुत किये हैं -

1- अपने विवाह के कुछ समय के बाद ही उसने अपनी पत्नी का छोटा-सा बीमा करवा दिया।
2- एक युवा पुरूष जो शादी से पहले उसकी पत्नी का मित्र था, उसकी अचानक मृत्यु हो गयी। वह समझता था कि युवक की मृत्यु का कारण पत्नी की अज्ञात बीमारी में लगा संक्रमण (Infection) हैं।
3- एक छोटा बच्चा उस मकान में रहता था जिस मकान में रोगी के सास-श्वसुर रहते थे, उस बच्चे को दौरे पड़ते थे। रोगी का विश्वास था कि सास-श्वसुर भी इस दौर के रोग से पीड़ित हैं।
4- रोगी ने जब अपनी पत्नी की हत्या की, उसके कुछ माह पहले से ही उसके खाने का स्वाद कुछ विचित्र हो गया तथा हत्या के कुछ सप्ताह पहले उसकी छाती में दर्द रहने लगा और मुँह का स्वाद बिगड गया।

पैरानोय्या का रोगी बहुत सन्देही होता हैं। पैरानोय्या के रोगी के व्यामोह सिस्टम को यदि उसके व्यक्तित्व से अलग कर दिया जाये तो वह व्यवहार और बातचीत में सामान्य व्यक्ति-सा प्रतीत होता हैं। उसकी संवेगात्मक अभिव्यक्ति भी सामान्य प्रतीत होती हैं। इस प्रकार के रोगी में विभ्रम तथा मनोव्याधिकी (Psychopathology) के लक्षण केवल कभी-कभी ही पाये जाते हैं, लेकिन इस प्रकार के लक्षण दुर्लभ ही हैं।

पैरानोय्या के रोगी में दण्डात्मक व्यामोहों (Delusions of Persecution) के साथ-साथ महानता के व्यामोहों (Delusions of Grandeur) भी पाये जाते हैं। दण्डात्मक व्यामोह में रोगी अपने आपको महान कवि, महान नेता, महान अभिनेता, महान वकील, डॉक्टर, व्यवसायी आदि कुछ भी समझ सकता हैं। वह अपने आपको एक महान अन्वेषक भी समझ सकता हैं।

व्यामोही विकृति के कुछ प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार से हैं -

1- व्यामोही विकृति में मुख्य लक्षण व्यामोह (Delusion) हैं। व्यामोह का अर्थ झूठे विश्वास होता हैं।
2- विभ्रम की कमी (Lack of Hallucination) व्यामोही विकृति के रोगी में पायी जाती हैं।
3- क्रमबद्ध व तार्किक चिन्तन (Systematic & Logical Thinking) - व्यामोही विकृति के रोगी का चिन्तन क्रमबद्ध व तार्किक होता हैं। वह अपने व्यामोह को भी क्रमबद्ध व तार्किक ढंग से प्रस्तुत करता हैं।
4- व्यामोही विकृति के रोगी में स्थिति-भ्रांति (Disorientation) की कमी पायी जाती हैं।
5- क्रमिक चिन्तन (Sequential Thinking) - व्यामोही विकृति के रोगी में चिन्तन का एक विशेष क्रम होता हैं।

8.13 पैरानोय्या के कारण (Etiology of Paranoia)

(क) जैविक कारक (Biological Factors)

कुछ विद्वानों का विचार हैं कि पैरानोय्या का कारण आनुवंशिकता और शरीर संरचना सम्बन्धी कारक हैं। परन्तु इस प्रकार का विचार त्रुटिपूर्ण हैं। एक अध्ययन (Founding, 1961) में यह देखा गया कि पैरानोय्या और वंशानुक्रम में कोई महत्वपूर्ण सम्बन्ध नहीं हैं। एक अन्य अध्ययन (Rosen

and Kiene, 1946) में यह देखा गया कि पैरानोय्या और शारीरिक कारकों में कोई महत्वपूर्ण सम्बन्ध नहीं हैं।

(ख) मनोवैज्ञानिक कारक (Psycholoigical Factors)

पैरानोय्या मनोविक्षिप्तता के लक्षणों की उत्पत्ति के लिए मनोवैज्ञानिक कारकों का योगदान ही सर्वाधिक हैं। कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिक कारक निम्न प्रकार के हैं -

1- दोषपूर्ण अधिगम और विचार (Faulty Learning and Development) - पैरानोय्या रोग से पीड़ित रोगियों के अध्ययनों (J.Schwartz, 1963, D.N. Swanson, et.al., 1970) में यह देखा गया हैं कि यह रोगी अपने बालक जीवन में निम्न विशेषताओं वाले रहे होते हैं - सन्देही, जिद्दी, अनुशासन विरोधी, दूसरों से दूर भागने वाले तथा उदास किस्म के होते हैं। बालकों का समाजीकरण भी सही प्रकार से नहीं हुआ होता हैं। इन रोगियों की बाल्यावस्था सामाजिक सम्पर्कों और सौहाद्रपूर्ण सम्बन्धों से हीन होती हैं। उनका इस अवस्था में खेलकूद भी सामान्य नहीं रहा होता हैं।

   पैरानोय्या के रोगियों के प्रारम्भिक जीवन का विकास अनुपयक्त होता हैं इस अनुपयुक्तता के कारण आगे चलकर ये बालक अपने को महत्वपूर्ण समझते हैं और उच्च जीवन लक्ष्य निर्धारित करते हैं। आवश्यक योग्यताओं के अभाव में असफलता के लिए दूसरों पर दोषारोपण करते हैं। सन्देही स्वभाव के कारण इस अवस्था में महानता के व्यामोह उत्पन्न हो जाते हैं।

2- असफलता और हीनता (Failure & Inferiority) - पैरानोय्या के रोगियों में श्रेष्ठ समझने, थोड़ी-सी घबराहट, प्रशंसा की लालसा आदि लक्षण अन्तर्निहित हीनता की भावना की पुष्टि करते हैं।

   पैरानोय्या के रोगी का जीवन असफलताओं से पूर्ण होता हैं। यह असफलताएँ सामाजिक, आर्थिक, व्यावसायिक आदि किसी भी क्षेत्र से सम्बन्धित हो सकती हैं। इन असफलताओं का कारण रोगी की अनम्यता (Rigidty), अवास्तविक जीवन लक्ष्य तथा दूसरों के साथ मिल-जुलकर न रह सकने की योग्यता आदि हैं।

3- सुरक्षा का विस्तार और स्वनिर्मित समुत्पय सिद्धान्त (Elaboration of Defences and the Psedo Community) - पैरानोय्या के रोगी में लक्षणों की उत्पति तब होती हैं जब वह अपनी सुरक्षा का विस्तार करता हैं। पैरानोय्या का रोगी सन्देह करने वाला, अनम्य और रूखा व्यक्ति होता हैं जो अपने लोगों में बिलकुल लोकप्रिय नहीं होता हैं। वह अपने चारों और के वातावरण को ऐसे समझता हैं जैसे दूसरे लोग उसके विरोधी हो। वह अपने आत्म-अवमूल्यन (Self-Devaluation) को बचाने के लिए, अपनी असफलता और अपने चारों और स्थित विरोधी लोगों के लिए तर्कपूर्ण कारण ढूँढ़ता हैं।

4- अपराध वृत्ति का प्रक्षेपण (Projection of Guilt) - पेरानोय्या के लक्षण रोगी में तब उत्पन्न होते हैं जब वह अपनी अपराध भावना को दूसरों पर आरोपित करता हैं।

5- यौनिक असमायोजन - पैरानोय्या के रोगियों के लक्षणों की उत्पत्ति का कारण उनका सैक्स सम्बन्धी असमायोजन हैं। बहुधा ऐसे रोगी उच्च नैतिकता के वातावरण में पले

हुए होते हैं। यह लोग सैक्स सन्तुष्टि को पापमय समझते हैं, जब ऐसे लोगों का विवाह होता हैं तो वे कुछ समय बाद ही तलाक ले लेते हैं।

(ग) सामाजिक कारक (Social Factors)

पैरानोय्या के रोगी उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के होते हैं। इनका शैक्षिक स्तर भी उच्च होता हैं। इनके जीवन लक्ष्य भी उच्च होते हैं। कुछ अध्ययनों में पैरानोय्या का अध्ययन उच्च सामाजिक स्तर और प्रतिष्ठा के साथ सम्बन्धित करने के लिए किया गया हैं। सामाजिक कारकों का पैरानोय्या रोग में कितना योगदान हैं, अब तक के अध्यनों से स्पष्ट नहीं हो पाया हैं।

8.14 पैरानोय्या उपचार (Treatment of Paranoia)

पैरानोय्या केरोगी के उपचार के लिए कई चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाता हैं -(1) औषधि चिकित्सा (Drug Therapy), (2) मनोचिकित्सा (Psychotherapy), (3) सामाजिक चिकित्सा (Sociotherapy)।

पैरानोय्या के रोगी का उपचार उस अवस्था में तो हो जाता हैं जब लक्षणों का विकास हो रहा होता हैं। एक बार जब लक्षण पूर्ण रूप से विकसित हो जाते हैं तो इस रोग का उपचार कठिन हो जाता हैं। ये रोगी अपना उपचार करना भी नहीं चाहते हैं। अत: रोगी को अस्पताल में रखने से कोई लाभ नहीं होता हैं।

इस रोग के उपचार में व्यवहार चिकित्सा (Behaviour Therapy) की उपविधि Aversive Conditioning हैं, यह उपचार पद्धति कुछ केसेज में अधिक लाभप्रद हैं।

8.15 सारांश

- मनोविदिलता सम्बन्धी प्रतिक्रियाएँ वे प्रतिगमनात्मक प्रयास हैं जिसमें व्यक्ति तनाव और चिन्ता से पलायन करता हैं। यह पलायन वह वास्तविक अन्तरवैयक्तिक वस्तु सम्बन्धों के स्थान पर व्यामोह और विभ्रमों के निर्माण द्वारा करता हैं।''
- DSM-IV वर्गीकरण में मनोविदिलता के निदान के लिए जो चार कसौटियाँ बतायी गयी है।
- मनोविदिलता के लक्षणों का विकास मन्द गति से परन्तु विश्वासघात या छल-कपटपूर्ण ढंग से होता हैं। लक्षणों के विकास के प्रारम्भ में यह देखा गया हैं कि व्यक्ति की चारों और के वातावरण में रूचियाँ धीरे-धीरे कम होने लगती हैं।
- पैरानोय्या के रोगी का उपचार उस अवस्था में तो हो जाता हैं जब लक्षणों का विकास हो रहा होता हैं। एक बार जब लक्षण पूर्ण रूप से विकसित हो जाते हैं तो इस रोग का उपचार कठिन हो जाता हैं। ये रोगी अपना उपचार करना भी नहीं चाहते हैं। अत: रोगी को अस्पताल में रखने से कोई लाभ नहीं होता हैं।

8.16 प्रश्नोत्तर

1- मनोविदिलता से आप क्या समझते हैं ? इसके सामान्य लक्षणों, कारणों और उपचार को समझाइए।
2- मनोविदिलता का क्या अर्थ हैं ? मनोविदिलता के विभिन्न प्रकारों को समझाइए।

3- निम्नलिखित लघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

(i) मनोविदिलता के रोगी का संवेगात्मक रूखापन और विरूपण।

(ii) मनोविदिलता के रोगी की विचार प्रक्रिया।

(iii) मनोविदिलता के रोगी का व्यामोह।

(iv) सरल मनोविदिलता।

4- निम्नलिखित लघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

(i) कैटाटानिक मनोविदिलता।

(ii) पैरानाइड मनोविदिलता।

(iii) मनोविदिलता के जैविक वैज्ञानिक कारक।

5- निम्नलिखित लघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

(i) मनोविदिलता के मनोवैज्ञानिक कारक।

(ii) तीव्र प्रकार की मनोविदिलता।

(iii) हेबीफ्रेनिक मनोविदिलता।

(iv) मनोविदिलता का निदान (Diagnosis)

6- पैरानोय्या से आप क्या समझते हैं ? इस रोग के लक्षण, कारण और उपचार समझाइये।

7- निम्नलिखित लघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

(i) पैरानोय्या के प्रकार।

(ii) पैरानोय्या के जैविक और मनोवैज्ञानिक कारण।

(iii) पैरानोय्या के व्यामोह सम्बन्धी लक्षण।

(iv) पैरानोय्या का उपचार।

8.16 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 9

व्यक्तित्व विकृतियाँ

Personality disorder

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 व्यक्तित्व विकृति का अर्थ

9.4 व्यक्तित्व विकृति के निदान से संबंधितसमस्याओं

9.5 व्यक्तित्व विकृति का नैदानिक स्वरूप

9.6 व्यक्तित्व विकृति के प्रकार

9.7 व्यक्तित्व विकृति के कारण

9.8 व्यक्तित्व विकृति का उपचार

9.9 समाज विरोधी व्यक्तित्व

9.10 समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति का नैदानिक स्वरूप

9.11 समाज विरोधी व्यक्तित्व के कारण

9.12 समाज विरोधी व्यक्तित्व का उपचार

9.13 सारांश

9.14 प्रश्नोत्तर

9.15 संदर्भसूची

9.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में व्यक्तित्व विकृतियों तथा समाज विरोधी व्यक्तित्व के बारे में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया हैं। व्यक्तित्व विकृति का अर्थ उन विकृतियों से हैं जो व्यक्तित्व के शीलगुणों से सम्बन्धित होती हैं। जब व्यक्तित्व के शीलगुण अपरिपक्व रह जाते हैं या विकृत हो जाते हैं जिससे व्यक्ति का चिन्तन दोषपूर्ण हो जाता हैं। व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण भी दोषपूर्ण हो जाता हैं। इन विकृतियों के कारण व्यक्ति का समायोजन भी कुसमायोजन में बदल जाता हैं। ऐसी अवस्था में यह विकृति व्यक्तित्व विकृति कहलाती हैं।

समाज विरोधी व्यक्ति या व्यवहार के समान दो अन्य पद भी हैं- Psychopathy तथा Sociopathy इन सभी पदों का समान अर्थ हैं। एक व्यवहार समाज विरोधी हैं या नहीं, यह समय और स्थान पर निर्भर करता हैं क्योंकि प्रत्येक समाज के नियम भिन्न -भिन्न होते हैं। अत: एक समाज में एक

व्यवहार समाज विरोधी हो सकता हैं और दूसरे समाज में वह व्यवहार सामान्य कहा जा सकता हैं। इसी प्रकार समाज के व्यवहार, नियम समय-समय पर बदलते रहते हैं। अत: एक समय में एक व्यवहार समाज विरोधी हो सकता हैं और कुछ वर्षो बाद वह सामान्य व्यवहार समझा जा सकता हैं।

इनका वर्णन इकाई में आगे किया गया हैं।

9.2 उद्देश्य

- व्यक्तित्व विकृति का अर्थ को समझ सकेगे।
- व्यक्तित्व विकृति के निदान से संबंधितसमस्याओं एवं स्वरूप् के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- व्यक्तित्व विकृति के प्रकार व कारणों को समझ पायेंगे।
- व्यक्तित्व विकृति का उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति का अर्थ एवं नैदानिक स्वरूप को समझ सकेंगे।
- समाज विरोधी व्यक्तित्व के कारण के बारे में पता चल पायेगा।
- समाज विरोधी व्यक्तित्व का उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।

9.3 व्यक्तित्व विकृति का अर्थ

व्यक्तित्व विकृति का अर्थ उन विकृतियों से हैं जो व्यक्तित्व के शीलगुणों से सम्बन्धित होती हैं। जब व्यक्तित्व के शीलगुण अपरिपक्व रह जाते हैं या विकृत हो जाते हैं जिससे व्यक्ति का चिन्तन दोषपूर्ण हो जाता हैं। व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण भी दोषपूर्ण हो जाता हैं। इन विकृतियों के कारण व्यक्ति का समायोजन भी कुसमायोजन में बदल जाता हैं। ऐसी अवस्था में यह विकृति व्यक्तित्व विकृति कहलाती हैं। व्यक्तित्व विकृति मानसिक विकृतियों से भिन्न हैं। व्यक्तित्व विकृतियाँ तनावपूर्ण परिस्थिति के प्रति प्रतिक्रिया भी नहीं होती हैं। संक्षेप में व्यक्तित्व विकृतियों के लिए कह सकते हैं कि अपरिपक्व व्यक्तित्व विकास (Immature Personality Development) का प्रतिफल ही व्यक्तित्व विकृतियाँ हैं। व्यक्तित्व विकृतियों के लक्षण किशोरावस्था से ही विकसित होना प्रारम्भ हो जाते हैं। व्यक्तित्व विकृतियों का अर्थ व्यक्तित्व के शीलगुणों (Traits) की विकृति हैं। इस सम्बन्ध में कुछ अधिक करने से पूर्व यह आवश्यक हैं कि व्यक्तित्व विकृतियों की कुछ परिभाषाएँ समझ ली जायें।

व्यक्तित्व विकृति की परिभाषाएँ

कारसन और बूचर (Carson & Butcher) ने व्यक्तित्व विकृतियों को परिभाषित करते हुए लिखा हैं कि ''सामान्य रूप से व्यक्तित्व विकृतियाँ व्यक्तिगत शीलगुणों का एक बढा हुआ या अतिरंजित रूप हैं जो व्यक्ति का परेशानीपूर्ण व्यवहार विशेषकर अन्तरवैयक्तिक प्रकृति के परेशानीपूर्ण व्यवहार को करने के लिए एक झुकाव उत्पन्न करती हैं।''1

DSM-IV वर्गीकरण (1994) के अनुसार व्यक्तित्व विकृति की परिभाषा इस प्रकार हैं,''व्यक्तित्व विकृति व्यवहार आन्तरिक अनुभूतियों का वह स्थायी पैटर्न हैं जो व्यक्ति की संस्कृति की प्रत्याशाओं

से लम्बरूप से विचलित होता हैं, यह पैटर्न अनमन और व्यापक होता हैं। इसका प्रारम्भ किशोरावस्था या आरम्भिक बाल्यावस्था से होता हैं। यह पैटर्न विशेष समय तक स्थिर रहता हैं और इससे परेशानी या हानि होती हैं।"

डेविसन और नील (Davison & Neal, 1996) ने व्यक्तित्व व विकृतियों को परिभाषित करते हुए लिखा हैं कि "व्यक्तित्व विकृतियों का यह विषम समूह हैं जिसमें व्यवहार और अनुभूतियों का स्थायी और अनमन पैटर्न पाया जाता हैं। यह सांस्कृतिक प्रत्याशाओं से विचलित प्रकार का होता हैं इससे व्यक्ति को परेशानी या हानि होती हैं।"

व्यक्तित्व विकृतियों को उपरोक्त तीन परिभाषाओं के आधार पर अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता हैं कि व्यक्तित्व विकृति व्यवहार तथा अनुभूतियों का वह स्थायी नमूना और अनम्य नमूना हैं जो सांस्कृतिक प्रत्याशाओं से विचलित होता हैं। यह विशेष समय तक स्थिर रहता हैं तथा व्यक्ति के लिए यह परेशानी वाला या हानिकारक होता हैं। किसी व्यक्ति के व्यवहार को व्यक्तित्व विकृति की श्रेणी में तभी रखा जा सकता हैं जब कम-से-कम निम्न विशेषताएँ हो -

1- व्यक्तित्व शीलगुण या व्यवहार और अनुभूतियाँ अतिरंजित अर्थात अधिक बढ़ी हई या अधिक घटी हुई होती हैं।
2- व्यक्तित्व शीलगुण या व्यवहार और अनुभूतियाँ अस्थायी न होकर स्थायी प्रकार के होते हैं जो एक समय विशेष तक स्थायी रहते हैं।
3- व्यक्तित्व विकृति के व्यक्ति के यह व्यवहार और अनुभूतियाँ सांस्कृतिक प्रत्याशाओं से विचलित या भिन्न होते हैं, यह सांस्कृतिक प्रत्याशाओं से मेल खाते हुए नहीं होते हैं।
4- व्यक्तित्व विकृतियों का प्रारम्भ बाल्यावस्था या किशोरावस्था से हो जाता हैं।
5- व्यक्तित्व विकृतियों से सम्बन्धित व्यवहार और अनुभूतियाँ उस व्यक्ति या समाज या दोनों के लिए परेशानी वाली और हानि वाली होती हैं।

9.4 व्यक्तित्व विकृति के निदान से संबंधितसमस्याओं

व्यक्तित्व विकृति के निदान में अनेक समस्याएँ हैं। इन समस्याओं में कुछ प्रमुख समस्याएँ निम्न प्रकार से हैं -

1- व्यक्तित्व विकृति के निदान में सर्वप्रथम समस्या यह हैं कि इस दिशा में शोध अध्ययनों का अभाव हैं अर्थात् ज्ञान की कमी होने के कारण व्यक्तित्व विकृति की पहचान में समस्या हैं।
2- व्यक्तित्व विकृति की पहचान के लिए अब तक हुए अनुसन्धानों के आधार पर कोई कसौटियों को भी विकसित नहीं किया गया हैं जिससे व्यक्तित्व विकृति की पहचान की जा सके।
3- व्यक्तित्व विकृति की अब तक कोई सर्वमान्य परिभाषा भी नहीं हैं जिसके आधार पर विकृति व्यक्तित्व की पहचान के लिए कसोटियों का निर्माण किया जा सके।
4- व्यक्तित्व शीलगुण विभा (Dimension) के रूप में पाये जाते हैं। सामान्य व्यक्तियों में शीलगुण सामान्य मात्रा में पाये जाते हैं और रोगात्मक अभिव्यक्ति (Pathological

Expression) भी पाया जाता हैं। इस कारण से व्यक्तित्व विकृति की पहचान कठिन होती हैं।

5- व्यक्तित्व विकृति का निदान इसलिए भी कठिन होता हैं कि व्यक्तित्व शीलगुणों की पहचान अनुमान पर अधिक आधारित हैं और वास्तविकता पर बहुत कम आधारित हैं।

व्यक्तित्व विकृति की पहचान में जो उपरोक्त कठिनाइयाँ हैं उनको ध्यान में रखकर कहा जा सकता हैं कि व्यक्तित्व विकृति निदान की विश्वसनीयता बहुत कम हैं। मनोचिकित्सक इस दिशा में अनुसन्धान के आधार पर कसौटियों के निर्माण में लगे हैं।

9.5 व्यक्तित्व विकृति का नैदानिक स्वरूप (Clinical Picture of Personality Disorder)

1- **बाधित व्यक्तिगत सम्बन्ध (Disrupted Personal Relationship)** - व्यक्तित्व विकृति किसी भी प्रकार क्यों न हो अर्थात् सभी प्रकार की व्यक्ति विकृतियों में एक सामान्य विशेषता यह पायी जाती हैं कि रोगी के व्यक्तिगत सम्बन्ध बाधित प्रकार के या विघटित प्रकार के होते हैं। व्यक्तित्व विकृति के रोगी के अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध अच्छे नहीं होते हैं। लोगों से वह और लोग उससे नाराज रहते हैं और दूसरे लोग ऐसे रोगी से घबराये भी रहते हैं।

2- **चिरकालिक दुःख देने वाला व्यवहार (Chronic Troublesome Behaviour)** - व्यक्तित्व विकृति के रोगी का व्यवहार दुःखदायी और दूसरों को परेशान करने वाला होता हैं, व्यवहार दूसरों को कष्ट पहुँचाने वाला होता हैं। व्यक्तित्व विकृति के रोगी का यह व्यवहार कुछ समय के लिए न होकर लम्बे समय तक रहने वाला होता हैं या लम्बे समय से ऐसा व्यवहार चल रहा होता हैं।

3- **ऋणात्मक परिणाम (Negative Cutcome)** - व्यक्तित्व विकृति वाले रोगी को अपने व्यवहार का परिणाम हमेशा ऋणात्मक परिणाम वाला ही न केवल दिखायी देता हैं बल्कि होता भी हैं। इस विकृति के व्यक्ति के दूसरों से सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं। उसका विवाह-विच्छेद (Divorce) हो सकता हैं। वह नशीली औषधियों का सेवन करने वाला हो सकता हैं तथा उसका व्यवहार आपराधिक प्रकार का भी हो सकता हैं।

4- **कुसमायोजी व्यवहार को दुहराना (Repitition of Maladaptie Behaviour)** - व्यक्तित्व विकृति के व्यक्ति के व्यक्ति में यह देखा गया हैं कि व्यक्ति एक ही प्रकार के कुसमायोजी व्यवहार को बार-बार दुहराता रहता हैं। उदाहरण के लिए, जिद करना, द्वैषभाव प्रदर्शित करना, शक की दृष्टि से देखना आदि कुसमायोजी व्यवहार हैं। व्यक्तित्व विकृति के रोगी में यह देखा गया हैं कि व्यक्ति इन कुसमायोजी व्यवहारों को बार-बार करता रहता हैं।

5- **व्यक्तित्व विकृति की गम्भीरता (Severity of Personality Disorder)** - व्यक्तित्व विकृति का रोगी अपने रोग से मुक्ति नहीं पाना चाहता हैं। वह इस रोग से मुक्ति के लिए कोई प्रयास नहीं करता हैं। फलस्वरूप उसमें व्यक्तित्व विकृति को गम्भीरता ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। यदि कोई व्यक्ति चिकित्सक के पास ले जाता हैं तब वह चिकित्सक के साथ सहयोग नहीं करता हैं। वह चिकित्सक के परामर्श के अनुसार उपचार पर अमल नहीं करता हैं।

6- **व्यवहार परिवर्तन का विरोध (Resistant to Change in Behaviour)** - व्यक्तित्व विकृति का रोगी अपने व्यवहार में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं चाहता हैं। कोई दूसरा व्यक्ति यदि व्यवहार परिवर्तन का सुझाव देता हैं तब वह उस व्यक्ति के सुझावों पर भी कोई अमल नहीं करता हैं। रोगी अपने व्यवहार में किसी भी प्रकार के परिवर्तन को पसन्द नहीं करता हैं।

उपरोक्त व्यक्तित्व विशेषताओं के आधार पर व्यक्तित्व विकृति के रोगी का नैदानिक स्वरूप काफी कुछ स्पष्ट हो जाता हैं।

9.6 व्यक्तित्व विकृति के प्रकार (Types of Personality Disorder)

DSM-IV वर्गीकरण (1994) के अनुसार व्यक्तित्व विकृति के रोग के प्रमुख प्रकार निम्न प्रकार से हैं -

1- स्थिर व्यामोही विकृति
2- सीजोयड व्यक्तित्व विकृति
3- सीजोटायपल व्यक्तित्व विकृति
4- हिस्ट्रीओनिक व्यक्तित्व विकृति
5- आत्ममोही व्यक्तित्व विकृति
6- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति
7- सीमान्त रेखीय व्यक्तित्व विकृति
8- परिवर्जित व्यक्तित्व विकृति
9- अवलम्बित व्यक्तित्व विकृति
10-मनोग्रस्तता बाध्यता व्यक्तित्व विकृति

उपरोक्त व्यक्तित्व विकृतियों के लक्षणों और व्यवहार का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से हैं -

1- चिन्ता व्यामोही व्यक्तित्व विकृति **(Delusional Personality Disorder)**- इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति वाले लोगों के कुछ प्रमुख लक्षण इस प्रकार से हैं - इन लोगों में अति संवदेनशीलता पायी जाती हैं। इनमें ईर्ष्या और जिद्दीपन के लक्षण पाये जाते हैं। यह लोग दूसरों पर शक करने वाले होते हैं अथवा यह लोग बात-बात पर शक करने वाले होते हैं। यह लोग अपने गलत कार्यों को तर्क के आधार पर सही ठहराते हैं। यह लोग अपने को हमेशा निर्दोष सिद्ध करते हैं। इस प्रकार के लोगों के व्यवहार को यदि गहराई से देखा जाएँ तो कहा जा सकता हैं कि इनका व्यवहार हर प्रकार से दोषपूर्ण होता हैं फिर भी यह अपने दोषपूर्ण व्यवहार को स्वीकार नहीं करते हैं।
2- सीयोयड व्यक्तित्व विकृति **(Schizoid Personality Disorder)** - इस प्रकार की व्यक्तित्व विकृति वाले लोगों के व्यक्तित्व का प्रमुख लक्षण यह होता हैं कि इनमें दूसरे व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध बनाने में कोई रूचि दिखायी नहीं देती हैं। साथ-साथ यह भी देखा गया हैं कि इन व्यक्तियों के दूसरे लोगों के साथ सामाजिक सम्बन्ध बहुत कम पाये जाते हैं। वास्तविकता यदि देखी जाये तो यह कहा जा सकता हैं कि इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले

लोगों में वह क्षमता नहीं पायी जाती हैं जिसके आधार पर व्यक्ति दूसरों से अच्छे सामाजिक सम्बन्ध बना लेते हैं।

3- सीजोटायपल व्यक्तित्व विकृति **(Schizotytypal Personality Disorder)** - इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में झक्कीपन (Eccentric) अधिक पाया जाता हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति वाले लोगों के व्यवहार में एकान्तप्रिय भी होते हैं। यह समाज से अलग-थलग एकान्त जीवन व्यतीत करना अधिक पसन्द करते हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में अति संवदेनशीलता का लक्षण भी पाया जाता हैं।

4- **हिस्ट्रीओनिक व्यक्तित्व विकृति (Histrionic Personality Type)** - इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों की एक प्रमुख विशेषता या लक्षण यह हैं कि इन लोगों में उतावलेपन की उत्तेजना बहुत अधिक दिखायी देती हैं। इन लोगों के व्यवहार में अपरिपक्वता का लक्षण भी प्रमुख रूप से पाया जाता हैं। संवेगात्मक अस्थिरता भी एक तीसरा प्रमुख लक्षण हैं, जो इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में पाया जाता हैं।

5- **आत्ममोही व्यक्तित्व विकृति (Narcissistic Personality Disorder)** - जिस प्रकार का इनका नाम हैं वही व्यक्तित्व विशेषता इन लोगों में सबसे अधिक पायी जाती हैं। आत्ममोही इनका नाम हैं और आत्ममोह का लक्षण इनके व्यक्तित्व में सबसे अधिक दिखायी देता हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में आत्म महत्त्व (Self importance) की भावना सबसे अधिक पायी जाती हैं।

6- **समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति (Antisocial Personality Disorder)** - इस प्रकार की व्यक्तित्व विकृति वाले लोगों का सबसे प्रमुख लक्षण इनका समाज विरोधी व्यवहार का होना हैं। इस प्रकार की व्यक्तित्व विशेषता वाले लोग प्राय: हर समय समाज विरोधी व्यवहार की अभिव्यक्ति करते हैं तथा दूसरों के व्यवहारो की यह अवहेलना करते रहते हैं।

7- **सीमान्त रेखीय व्यक्तित्व विकृति** (**Borderline Personality Disorder)** - इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति के रोगी में व्यक्तित्व विकृति के लक्षण तो पाये ही जाते हैं, इसके साथ-साथ इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति के रोगी में भावात्मक रोग (Affective Disorder) के लक्षण भी पाये जाते हैं। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार के व्यक्तित्व विकार वाले व्यक्ति में मानसिक रोग के लक्षण भी पाये जाते हैं।

8- **परिवर्जित व्यक्तित्व विकृति (Avoicant Personality Disorder)** - इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों की सबसे बड़ी विशेषता यह हैं कि जब दूसरे व्यक्ति इन लोगों की अवहेलना या तिरस्कार करते हैं तब वह व्यक्ति इस अवहेलना या तिरस्कार के प्रति अति संवेदनशील हो जाते हैं। इन व्यक्तियों के दूसरे लोगों के साथ सामाजिक और अन्तवैयक्तिक सम्बन्ध बहुत कम मात्रा मे पाये जाते हैं। इन व्यक्तियों के सामाजिक सम्बन्ध सीमित होते हैं क्योंकि यह लोग नये सामाजिक सम्बन्धों को बनाने अथवा पुराने सम्बन्धों को मजबूत करने की इन्हें कोई चिन्ता नहीं होती हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों को अपनी आलोचना से डर लगता हैं।

9- **अवलम्बित व्यक्तित्व विकृति (Dependent Personality Disorder) -** इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति वाले लोग दूसरे व्यक्तियों पर निर्भर या अवलम्बित होने वाले होते हैं।

यही कारण हैं कि जब इस प्रकार के व्यक्तित्व विकृति वाले लोग अकेले में होते हैं तब इनमें घबराहट और बेचैनी होती हैं। अकेले में घबराहट और बेचैनी इसलिए होती हैं कि जिस पर यह निर्भर होते हैं वह व्यक्ति नहीं होता हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में कौशल और क्षमताएँ तो पर्याप्त मात्रा में होती हैं लेकिन उनमें आत्म-विश्वास की कमी होती हैं। इसीलिए इन्हें अवलम्बित व्यक्ति की आवश्यकता होती हैं। यह जब दूसरो के साथ मिलकर कार्य करते हैं तब इनका निष्पादन अच्छा होता हैं लेकिन इनका आश्रय हट जाता हैं और इन्हें अकेले में काम करना पड़ता हैं तब इनका निष्पादन घट जाता हैं।

10-**मनोग्रस्तता-बाध्यता व्यक्तित्व विकृति (Obsessive-Compulsive Personality Disorder)** - इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोगों में मनोग्रस्तता और बाध्यता के व्यवहारात्मक लक्षण तो पाये जाते हैं। साथ-साथ कुछ और भी व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताएँ पायी जाती हैं।

9.7 व्यक्तित्व विकृति के कारण (Etiology of Personality Disorders)

व्यक्तित्व विकृति की पहचान सन् 1952 के बाद हुई। इसी कारण से इस विकृति के सम्बन्ध में शोध अध्ययनों का अभाव दूसरे व्यक्तित्व विकृति की पहचान और निदान (Diagnosis) आज भी कठिन हैं। मनोवैज्ञानिकों को अभी तक व्यक्तित्व विकृति के रोगियों की पहचान करने में कठिनाई हैं।

1- **जैविक कारण (Bilogical Factors)** - जैविक कारकों की दिशा में हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि बच्चों में एक विशेष प्रकार की शारीरिक गठन सम्बन्धी प्रवृति (Constitutional Reaction Tendency) पायी जाती हैं। उदाहरण के लिए, उच्च या निम्न जीवनी शक्ति, अति संवेदनशीलता आदि इस कारण से भी व्यक्तित्व प्रकृति का रोग उत्पन्न होता हैं। केण्डलर तथा ग्रुयनबर्ग (Kendler & Gruenberg, 1982) ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह बताया कि व्यक्तित्व विकृति जननिक कारकों (Genetic Factors) के कारण सीमान्त रेखाओं में भी जननिक कारकों की भूमिका होती हैं और समाज विरोधी व्यक्तित्व में भी जैविक कारकों की भूमिका होती हैं।

2- **मनौवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors)** - व्यक्तित्व विकृति के मनोवैज्ञानिक कारकों की व्याख्या करते हुए यह कहा गया हैं कि व्यक्तित्व विकृतियाँ बाल्यावस्था में किये गये दोषपूर्ण अधिगम (Faulty learning) का परिणाम हैं। यह देखा गया हैं कि बाल्यावस्था में बच्चे दूसरे लोगों के दोषपूर्ण व्यवहारों को करना सोख लेते हैं जो आगे चलकर व्यक्तित्व विकृति का कारण बनता हैं। समाज विरोधी व्यक्तित्व के विकास में इस प्रकार का कारण बहुत महत्वपूर्ण हैं।

3- **सामाजिक - सांस्कृतिक कारक (Social-Cultural Factors)** - कुछ मनोवैज्ञानिकों का मानना हैं कि आधुनिक समाज में और आधुनिक संस्कृति ने प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्या का समाधान तुरन्त चाहता हैं वह आराम वाली जिन्दगी ही नहीं चाहता हैं बल्कि वह अपनी आवश्यकताओं की सन्तुष्टि भी तुरन्त चाहता हैं। इस कारण से व्यक्ति की जीवन-शैली में उत्तरदायित्व हीनता पायी जाती हैं। आधुनिक समाज का व्यक्ति आत्मकेन्द्रित हो

गया हैं। इन कारणों से व्यक्ति के व्यक्तित्व में व्यक्तित्व विकृति के विकसित होने की सम्भावना अधिक होती हैं।

9.8 व्यक्तित्व विकृति का उपचार (Treatment of Personality Disorder)

व्यक्तित्व विकृति से ग्रस्त लोग यह मानने को तैयार नहीं होते हैं कि वह मानसिक रोगी हैं यही कारण हैं कि जब व्यक्तित्व विकृति के रोगियों की चिकित्सा प्रारम्भ की जाती हैं तो वह अपनी चिकित्सा का विरोध करते हैं। इसलिए ऐसे रोगियों को चिकित्सा करने में कठिनाई होती हैं। जब ऐसे रोगियों को पकड़कर मनोचिकित्सक के पास ले जाया जाता हैं तो यह रोगी मनोचिकित्सक के साथ विचित्र व्यवहार करते हैं इसलिए इनका उपचार कठिन होता हैं।

व्यक्तित्व विकृति के व्यक्तियों की चिकित्सा के लिए अनेक प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। इनकी चिकित्सा के लिए विद्युत आघात पद्धति और मनोचिकित्सा पद्धतियों का उपयेाग किया जाता हैं। औषधि चिकित्सा पद्धति अर्थात् लक्षणों के अनुसार दवाइयों के आधार पर चिकित्सा भी व्यक्तित्व विकृतियों के रोगियों के लिए की जाती हैं।

कुछ अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि ऐसे रोगियों की चिकित्सा में व्यवहार चिकित्सा पद्धति से सम्बन्धित कुछ पद्धतियाँ उपयोगी हैं।

9.9 समाज विरोधी व्यक्तित्व (Antisocial Personality)

समाज विरोधी व्यक्ति या व्यवहार के समान दो अन्य पद भी हैं- Psychopathy तथा Sociopathy इन सभी पदों का समान अर्थ हैं। एक व्यवहार समाज विरोधी हैं या नहीं, यह समय और स्थान पर निर्भर करता हैं क्योंकि प्रत्येक समाज के नियम भिन्न -भिन्न होते हैं। अत: एक समाज में एक व्यवहार समाज विरोधी हो सकता हैं और दूसरे समाज में वह व्यवहार सामान्य कहा जा सकता हैं। इसी प्रकार समाज के व्यवहार, नियम समय-समय पर बदलते रहते हैं। अत: एक समय में एक व्यवहार समाज विरोधी हो सकता हैं और कुछ वर्षो बाद वह सामान्य व्यवहार समझा जा सकता हैं।

कारसन और बूचन (1992) ने समाज विरोधी व्यक्तित्व को परिभाषित करते हुए लिखा हैं कि "समाज विरोधी वयक्तित्व विकृति वह व्यक्तित्व विकृति हैं जिसकी प्रमुख विशेषता नैतिक विकास की कमी हैं। समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति के व्यवहार में अनुमोदित मॉडल को ग्रहण करने की स्पष्ट अक्षमता होती हैं। मूल रूप से यह व्यक्ति असामाजिक होते हैं तथा यह अन्य व्यक्तियों, समूहों एवं सामाजिक मूल्यों के प्रति कोई सार्थक निष्ठा अभिव्यक्त करने के योग्य नहीं होते हैं।"

समाज विरोधी व्यक्तित्व की पहचान

DSM-IV वर्गीकरण (1994) के अनुसार समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति के रोगी की पहचान निम्नलिखित कसौटियों के आधार पर की जाती हैं -

1- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति समाज के नियमों के अनुसार व्यववहार करने और सामाजिक मानकों के प्रति अनुरूपता दिखाने में असफल होता हैं।

2- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाला व्यक्ति बार-बार झूठ बोलकर अपने व्यक्तित्व लाभ और अपनी प्रसन्नता के लिए धोखाधड़ी का व्यवहार करता रहता हैं।
3- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति का व्यवहार किसी भी प्रकार से नियोजित नहीं होता हैं। उसका व्यवहार आवेगशील (Impulsive) होता हैं।
4- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति के व्यवहार में आक्रमणशीलता और चिड़चिड़ापन होता हैं।
5- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति का व्यवहार यदि देखा जाये तो कहा जा सकता हैं कि वह अपनी और दूसरों की सुरक्षा के लिए लापरवाह होता हैं।
6- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति में उत्तरदायित्वहीनता पायी जाती हैं।
7- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाला व्यक्ति अपने द्वारा किये गये गलत कायरपूर्ण कार्य के लिए प्रायश्चित नहीं करता हैं या बहुत कम प्रायश्चित करता हैं।
8- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति की आयु कम से कम अट्ठारह वर्ष की होनी चाहिए।
9- समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति वाले व्यक्ति में पन्द्रह वर्ष की आयु से पहले चरित्र सम्बन्धी विकृतियाँ पायी जाती हैं।

9.10 समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति का नैदानिक स्वरूप

समाज विरोधी व्यक्तियों के व्यवहार में अनेक महत्वपूर्ण लक्षण पाये जाते हैं जैसे- अत्यन्त प्रभावशाली होते हैं। यह प्रथम परिचय में ही आदमी को आकर्षित कर लेते हैं। ये बुद्धिमान और मिलनसार होते हैं। कोलमैन (1976) का विचार हैं कि ये लोग संवेगात्मक दृष्टि से परिपक्व होते हैं उचित्त निर्णय न ले सकने वाले, गैर-जिम्मेदार और आवेगी होते हैं। ये लोग दूसरों के हित और सुख का ध्यान नहीं रखते हैं। इन लोगों की क्रियाओं और व्यवहार का सम्बन्ध वर्तमान से अधिक होता हैं। इन व्यक्तियों को अपने भूत और भविष्य के परिणामों की भी परवाह नहीं होती हैं। इनकी एक विशेषता यह भी होती हैं कि ये अपने समाज विरोधी व्यवहार को तर्कपूर्ण, युक्तिसंगत और उपयुक्त बताते हैं।

कोलमैन (1972, 1976) ने समाज विरोधी व्यक्तियों की कुछ प्रमुख विशेषताओं का वर्णन निम्न प्रकार से किया हैं -

1. **अन्तरात्मा का अपार्याप्त विकास (Inadequate Conscience Development)** - ये लोग नैतिक मूल्यों को मौखिक स्तर पर तो स्वीकार करते हैं परन्तु इनकी अन्तरात्मा इन नैतिक मूल्यों को स्वीकार नहीं करती हैं। इन्हें नैतिक रूप से मूढ़ (Moral Moron) कहा जा सकता हैं। इनके बौद्धिक विकास और इनकी अन्तरात्मा में बहुत अन्तर होता हैं। ये अपनी बुद्धि के सहारे किसी को भी अपनी लच्छेदार बातों में फँसाकर धोखा देते हैं।
2. **आत्म-केन्द्रित,आवेगी और अनुत्तरदायी (Ego-centric, Impulsive and Irresponsible)** - ये व्यक्ति दूसरों से लेना जानते हैं। इनके लैंगिक प्रतिमान विचलित प्रकार के होते हैं। इसमें उत्तरदायित्व की भावना का अभाव होता हैं।
3. **निम्न कुण्ठा सहनशीलता (Low Frustration Tolerance)** - इनमें कुण्ठा के प्रति सहनशीलता बहुत अधिक होती हैं। बहुधा यह देखा गया हैं कि वे तत्कालीन सुखों को

भविष्य के लाभों के लिए छोड़ देते हैं। ये लोग भविष्य में कभी दूर होने वाले लाभों के लिए भी अपने तत्कालीन लाभों को छोड़ देते हैं।

4. **चिन्ता एवं अपराध भावना का विकास (Lack of Anxiety and Guilt)** - समाज विरोधी व्यक्तियों में चिन्ता, तनाव और अपराध भावना नाममात्र को पायी जाती हैं। दूसरे लोगों के प्रति इनका व्यवहार अक्सर आक्रामक और शत्रुतापूर्ण होता हैं तथा इस व्यवहार के लिए इनमें कोई अपराध भावना नहीं होती हैं। इन व्यक्तियों का ईमानदारी और दिखावे का व्यवहार ऐसा होता हैं कि इनके अवैध और गलत कार्यो के लिए शक करना कठिन होता हैं क्योंकि इनमें न अपराध भावना दिखायी देती हैं और न चिन्ता दिखायी देती हैं।
5. **त्रुटियों से सीखने की अयोग्यता (Inability to Profit from Mistakes)** - इन व्यक्तियों को दण्ड प्राप्त होते हैं या यह लोग अपने जीवन के अनुभवों से कुछ नहीं सीखते हैं। स्वार्भ-सिद्धि और हेर-फेर में दक्ष होते हैं। अत: गलत कार्य के दण्ड और सजा से बच जाते हैं।
6. **दूसरों को प्रभावित करने और उनमें स्वार्थ-सिद्धि के लिए अच्छा नाटक (Ability to out up a Good front to Impress & Exploit Others)** - ये व्यक्ति अपने बनावटी, मधुर और लुभावने व्यवहार से दूसरे से मित्रता और दूसरों की पसन्दों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। देखने में मजाकिया और आशावादी होते हैं। दोस्ती गाँठने और स्वार्थ-सिद्धि में उस्ताद होते हैं।
7. **दोषपूर्ण सामाजिक सम्बन्ध (Defective Social Relations)** - इन व्यक्तियों की निम्न विशेषताएँ होती हैं जिनके कारण इनके सामाजिक सम्बध दोषपूर्ण होते हैं। ये विशेषताएँ हैं - कुटिल, असहानुभूतिपूर्ण, अकृतज्ञ और पश्चाताप हीन। ये न दूसरों के प्यार की कीमत समझते हैं और न ये प्यार देना जानते हैं।
8. **सत्ता और अनुशासन का तिरस्कार (Rejection of Authority and Discipline)** - समाज विरोधी व्यक्ति सत्ता और अनुशासन की परवाह नहीं करते हैं। सत्ता और अनुशासन के प्रति इनका व्यवहार तिरस्कारपूर्ण, विरोधी और शत्रुतापूर्ण होता हैं। ये लोग कभी-कभी अपराध कर बैठते हैं परन्तु पेशेवर अपराधी नहीं कहे जा सकते हैं।
9. **अच्छे अन्त:वैयक्तिक सम्बन्ध बनाये रखने की अयोग्यता (Inability to maintain Good Interpersonal Relationship)** - समाज विरोधी लोग मित्रता स्थापित करने में माहिर होते हैं लेकिन अहंवादी (Ego-Centric) और अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार वाले होते हैं। अत: इनके अन्त:वैयक्तिक सम्बन्ध अच्छे नहीं होते हैं। इन अन्त:वैयक्तिक सम्बन्धों को बनाये रखने की योग्यता भी नहीं होती हैं। ये लोग दूसरों को परेशान करते हैं, सताते हैं तथा संकट में डालते हैं।
10. **तर्क देने की क्षमता (Ability to Rationalize)** - समाज विरोधी व्यक्ति जो गलत कार्य करते हैं, उनको उपयुक्त सिद्ध करने के लिए विभिन्न प्रकार के तर्क देते हैं। यह जानते हुए भी झुठ बोलते हैं कि उनकी पोल खुल सकती हैं।

9.11 समाज विरोधी व्यक्तित्व के कारण

1. **जैविक कारक (Biological Factors)** - समाज विरोधी व्यक्तियों की मस्तिष्क तरंगों के अध्ययन में यह देखा गया हैं कि इनके मस्तिष्क के टेम्पोरेल लोव में (Slow-Wave Activity) होती हैं।
2. **अपर्याप्त संवेगात्मक उद्दोलन (Deficient Emotional Arousal)** - अनेक अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि समाज विरोधी व्यवहार वाले रोगियों में चिन्ता की मात्रा निम्न होती हैं। उदाहरण के लिए, लाइकेन (D.T.Lykken, 1957) ने अपने अध्ययन में देखा कि साइकोपैथस में निम्न चिन्ता होती हैं। आइजनेक (H.J. Eysenck, 1960) ने भी अपने अध्ययनों के आधार पर यह सिद्ध किया कि इस प्रकार के रोगी हानिकारक उद्दीपकों (Noxious Stimulus) के प्रति कम संवेदनशील होते हैं।
3. **प्रारम्भ में संरक्षकों की मृत्यु और संवेगात्मक वंचन (Early Parental Loss and Emotional Deprivation)** - समाज विरोधी व्यक्तियों के अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ हैं कि इनमें इस प्रकार के लक्षण उत्पन्न होने का कारण प्रारम्भिक जीवन में माता-पिता दोनों या इनमें से किसी की मृत्यु हो जाना हैं। माता-पिता में अलगाव या विवाह-विच्छेद भी इनके लिए एक मानसिक आघात होता हैं जिससे ये लोग समाज विरोधी व्यक्ति बनते हैं।
4. **संरक्षकों का तिरस्कार (Rejection of Parents)** - माता-पिता का तिरस्कार और अनुपयुक्त अनुशासन बालक को समाज विरोधी कार्यो को करने के लिए प्रेरित करता हैं। एक अध्ययन (W. McCord & J. McCord, 1964) से यह स्पष्ट हुआ हैं कि संरक्षकों का तिरस्कार समाज विरोधी व्यक्तित्व का प्रमुख कारण हैं।
5. **आर्थिक वंचन (Economic Deprivation)** - अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि वय:सन्धि अवस्था के बालकों को यदि अपनी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने और जेब-खर्च आदि के लिए पैसे नहीं मिलते हैं तो बालकों में समाज विरोधी व्यक्तित्व का विकास होता हैं।
6. **दोषपूर्ण पारिवारिक अन्त:क्रियाएँ (Faulty Family Interactions)** - समाज विरोधी व्यक्तियों के एक अध्ययन (W.L. Wilkins, 1961) में यह देखा गया हैं कि समाज विरोधी व्यक्तियों की एक विशिष्ट जीवन शैली (Life Style) होती हैं ये लोग इसी जवीन शैली के अनुसार व्यवहार कते हैं। इनकी जीवन शैली में परिवर्तन कठिन हैं अनम्य जीवन शैली के कारण इनकी पारिवारिक अन्त:क्रियाएँ दोषपूर्ण होती हैं। अनम्य जीवन शैली और दोषपूर्ण पारिवारिक अन्त:क्रियाओं के कारण इनमें समाज विरोधी व्यवहार विकसित होता हैं।
7. **स्वतन्त्रता (Freedom)** - कुछ अध्ययनों में यह भी देखा गया हैं कि जब बालकों पर माता-पिता का कोई नियन्त्रण नहीं होता हैं और मनमाने ढंग से व्यवहार करते हैं तथा अपनी प्रत्येक इच्छा की तात्कालिक सन्तुष्टि चाहते हैं तो उस अवस्था में समाज विरोधी व्यवहार सीखने की अधिक सम्भावना रहती हैं।
8. **मित्र समूह (Friend Circle)** - यह देखा गया हैं कि यदि मित्र मण्डली में ऐसे मित्र हैं जिनका व्यवहार समाज विरोधी प्रकार का हैं तो साथ रहने के कारण साथी मित्र भी समाज विरोधी व्यवहार सीख लिया करते हैं।

9. **सामाजिक -**सांस्कृतिक कारक **(Socio-Cultural Factors)** - यह समाज विरोधी व्यवहार के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। विघटन, सामाजिक प्रतिमानों में परिवर्तन आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो समाज विरोधी व्यवहार को उत्पन्न करते हैं या इस प्रकार के विकार में सहायक होते हैं। एक अध्ययन (Leighton, 1959) में यह देखा गया हैं कि संगठित सम्प्रदायों की अपेक्षा असंगठित सम्प्रदायों (Communities) में इस प्रकार केरोगी अधिक पाये जाते हैं। एक अन्य अध्ययन (Cohen, 1955) में यह देखा गया हैं कि सामाजिक स्तर और प्रतिष्ठा सम्बन्धी कुण्ठा और हानि एक महत्वपूर्ण कारक हैं जो समाज विरोधी व्यवहार उत्पन्न करता हैं।

9.12 समाज विरोधी व्यक्तित्व का उपचार

समाज विरोधी व्यक्तियों के कारण अभी पूर्णत: स्पष्ट नहीं हैं तथा समाज विरोधी व्यक्तियों की विशेषताएँ भी सभी समाज विरोधी व्यक्तियों में समान रूप से नहीं पायी जाती हैं। अत: इनका उपचार भी संदिग्ध हैं।

समाज विरोधी व्यक्तियों की चिकित्सा के लिए अनेक प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाता हैं, जैसे - मनोचिकित्सा, विद्युत आघात पद्धति तथा औषधि चिकित्सा आदि का उपयोग किया जाता हैं।

इनका उपचार इसलिए कठिन होता हैं कि इनकी जवीन शैली अनम्य होती हैं तथा समाज विरोधी व्यक्ति अपने व्यवहार को बदलने की इच्छा नहीं रखता हैं। कुछ अध्ययनों में यह देखा गया हैं कि कुछ रोगी 40 वर्ष की आयु के बाद स्वत: ही सुधर जाते हैं। बंडूरा (A. Bandura, 1969, 73) का विचार हैं कि (1) समाज विरोधी व्यक्तियों के व्यवहार परिमार्जित करने के लिए अधिगम सिद्धान्तों पर व्यवहारों के लिए पुनर्बलन हटा लेना चाहिए और यदि उपयुक्त हो तो ऐसे व्यवहारों के लिए रोगी को उपयुक्त दण्ड भी देना चाहिए। (2) रोगी यदि इच्छित या सामान्य व्यवहार का अनुकरण करता हैं तो उसे पूनर्बलन या पुरस्कार देना चाहिए। (3) रोगी का व्यवहार जैसे-जैसे नियन्त्रित हो जाता हैं,रोगी को दिये जाने वाले प्रलोभन और पुरस्कार उसी रूप में कम करते रहना चाहिए।

9.13 सारांश

- सामान्य रूप से व्यक्तित्व विकृतियाँ व्यक्तिगत शीलगुणों का एक बढता हुआ या अतिरंजित रूप हैं जो व्यक्ति का परेशानीपूर्ण व्यवहार विशेषकर अंतर्व्यक्तिक प्रकृति के परेशानीपूर्ण व्यवहार को करने के लिए एक झुकाव उत्पन्न करती हैं।"
- व्यक्तित्व विकृति व्यवहार तथा अनुभूतियों का वह स्थायी नमूना और अनम्य नमूना हैं जो सांस्कृतिक प्रत्याशाओं से विचलित होता हैं। यह विशेष समय तक स्थिर रहता हैं तथा व्यक्ति के लिए यह परेशानी वाला या हानिकारक होता हैं।
- समाज विरोधी व्यक्तियों की चिकित्सा के लिए अनेक प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाता हैं, जैसे - मनोचिकित्सा, विद्युत आघात पद्धति तथा औषधि चिकित्सा आदि का उपयोग किया जाता हैं।

- विघटन, सामाजिक प्रतिमानों में परिवर्तन आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो समाज विरोधी व्यवहार को उत्पन्न करते हैं या इस प्रकार के विकार में सहायक होते हैं।
- व्यक्तित्व विकृति जननिक कारकों (Genetic Factors) के कारण सीमान्त रेखाओं में भी जननिक कारकों की भूमिका होती हैं और समाज विरोधी व्यक्तित्व में भी जैविक कारकों की भूमिका होती हैं।

9.14 प्रश्नोत्तर

1- समाज विरोधी व्यवहार से आप क्या समझते हैं ? समाज विरोधी व्यवहार के लक्ष्ण कारण और उपचार पर प्रकाश डालिए।
2- समाज विरोधी व्यक्तिय विकृति के अन्य तीन तकनीकी नाम लिखिए।
3- निम्नलिखित प्रश्नों में से प्रत्येक का उत्तर अधिक से अधिक 100 शब्दों में दीजिए-
   (i) समाज विरोधी व्यवहार से आप क्या समझते हैं ?
   (ii) समाज विरोधी व्यवहार के लक्षण।
   (iii) समाज विरोधी व्यवहार के व्यवहार प्रतिमान।
   (iv) समाज विरोधी व्यवहार के मनोवैज्ञानिक कारक।
   (v) समाज विरोधी व्यवहार का मनोवैज्ञानिक उपचार।

9.15 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press

इकाई - 10

संज्ञानात्मक एवं स्मृतिलोपीय विकृतियाँ

Cognitive and amnestic disorder

मनोभ्रम, अल्जीमर प्रकार के मनोभ्रंश तथा अन्य मेडिकल अवस्थाओं से उत्पन्न मनोभ्रंश

Delirium, dementia, dementia of alzheimer's type, other medical conditions causing dementia

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 **उद्देश्य**

10.3 संज्ञानात्मक विकृति

10.4 उन्माद

10.5 उन्माद की व्यापकता तथा दिशा

10.6 उन्माद के कारण

10.7 उन्माद का उपचार

10.8 स्मृतिलोपीय विकृतियों

10.9 स्मृतिलोपीय विकृति का कारण

10.10 मनोभ्रंश

10.11 मनोभ्रंश के कारण

10.12 अल्जीमर प्रकार के मनोभ्रंश

10.13 अन्य मेडिकल अवस्थाओं से उत्पन्न मनोभ्रंश

10.14 सारांश

10.15 प्रश्नोत्तर

10.16 संदर्भसूची

10.1 प्रस्तावना

संज्ञानात्मक विकृति को DSM-IV के पहले वाले संस्करण में आंगिक मानसिक विकृति कहा जाता था या क्योकि ऐसे विकृतियों का स्पष्ट आधार मस्तिष्क में उत्पन्न कुछ जैविक परिवर्तन होते है। DSM-IV में जब इसका नाम बलदकर संज्ञानात्मक विकृति रखा गया, तो इससे तात्पर्य मानसिक विकृतियों के ऐसे समूह से होता है।

संज्ञानात्मक विकृति में जो अवस्थाएं उत्पन्न होती है, उनके कई कारण होते है परन्तु इनमें मस्तिष्क में चोट लगना, टयूमर, छुतहा रोग, किसी प्रकार के जहर का प्रभाव तथा द्रव्य-उत्पन्न परिवर्तन आदि प्रधान है। जब इन विकृतियों मे मस्तिष्कीय क्षति होता है, तो इसका स्वरूप या तो नभीय होता है या फिर विकेन्द्रित। नाभीय क्षति में मस्तिष्क के विशिष्ट क्षेत्र में क्षति होता देखा गया है जबकि विकेन्द्रित क्षति में फैले होते है। छुतहा रोगों तथा जहर से सामान्यत: विकेन्द्रित क्षति ही उत्पन्न होती है। इस प्रकार की विकृति के अन्तर्गत निम्नांकित विकृतियाँ आती है, जिनका संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं-

उन्माद - उन्माद के लक्षण सामान्यत: अचानक रोगी में विकसित हो जाते है। रोगी को किसी घटना या वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने में काफी कठिनाई होती है तथा वह एक संगत एवं निर्देशित चिंतन करने में असमर्थता दिखा पाता है। उन्माद के आरंभिक अवस्था में रोगी खासकर रात्रि में अधिक बेचैन होता है क्योंकि नींद जागत क्रम क्षुब्ध हो जाता है। परिणामत: दिन में रोगी उंघते रहता है तथा रात्रि में बेचैन तथा उत्तेजित रहता है। उनमें घबरा देने वाले स्वप्न भी अधिक आता है।

स्मृतिलोप **विकृतियाँ-** स्मृतिलोपीय विकृति में स्मृतिलोप की अवस्था होती है जिसमें रोगी में स्मृति से संबंधकई तरह के दोष पाए जाते है। इस तरह की विकृति में स्मृति लोप ही मुख्य लक्षण होता है। कभी-कभी अन्य संज्ञानात्मक कठिनाईया भी होती है जिनमें डतपाद या मनोभ्रंश के लक्षण देखे जा सकते है।

मनोभ्रंश - मैककाउले तथा वर्नस्टीन के शब्दों में इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है-''मनोभ्रंश में कई संज्ञानात्मक कार्य जिसमें स्मृति, चिंतन, तर्क तथा एकाग्रता सम्मिलित होता है, का समग्र क्षति होता है तथा जो इतना गंभीर होता है कि इससे घर या कार्य पर व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के कार्य बाधित होते है।''

इन सबका विस्तृत वर्णन इकाई में आगे प्रस्तुत किया गया हैं।

10.2 उद्देश्य

- संज्ञानात्मक विकृति के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- उन्माद का नैदानिक वर्णन के बारे में सुचना प्राप्त होगी।
- उन्माद की व्यापकता तथा दिशा के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- उन्माद के कारण को जान सकेंगे।
- उन्माद का उपचार को समझ पायेंगे।
- स्मृतिलोपीय विकृतियों का परिचय को समझ पायेंगे।
- स्मृतिलोपीय विकृति के कारणों के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- मनोभ्रंश का परिचय का ज्ञान प्राप्त होगा।
- मनोभ्रंश के कारण समझ सकेंगे।
- अल्जीमर प्रकार के मनोभ्रंश का अर्थ समझ पायेंगे।
- अन्य मेडिकल अवस्थाओं से उत्पन्न मनोभ्रंश का वर्णन ज्ञात होगा।

10.3 संज्ञानात्मक विकृतियाँ (Cognitive disorder)

संज्ञात्मक विकृति द्वारा तैयार किया गया मानसिक विकृतियों की सूची का एक प्रमुख भाग है। संज्ञानात्मक विकृति को DSM-IV के पहले वाले संस्करण में आंगिक मानसिक विकृति कहा जाता था क्योकि ऐसे विकृतियों का स्पष्ट आधार मस्तिष्क में उत्पन्न कुछ जैविक परिवर्तन होते है। DSM-IV में जब इसका नाम बलदकर संज्ञानात्मक विकृति रखा गया, तो इससे तात्पर्य मानसिक विकृतियों के ऐसे समूह से होता है जिसमें निम्नांकित तीन विशेषताएं स्पष्ट रूप से दिखती है-

1- ऐसे विकृत मूलत: मस्तिष्क में होने वाले जैविक परिवर्तनों से उत्पन्न होते है।
2- ऐसे विकृतियों में व्यक्ति के संज्ञान में दोष उत्पन्न हो जाता है।
3- ऐसे विकृति किसी भी उम्र में उत्पन्न हो सकते है परन्तु वृद्ध लोगों में अधिक उत्पन्न होते है

संज्ञानात्मक विकृति में जो अवस्थाएं उत्पन्न होती है, उनके कई कारण होते है परन्तु इनमें मस्तिष्क में चोट लगना, टयूमर, छुतहा रोग, किसी प्रकार के जहर का प्रभाव तथा द्रव्य-उत्पन्न परिवर्तन आदि प्रधान है। जब इन विकृतियों मे मस्तिष्कीय क्षति होती है, तो इसका स्वरूप या तो नभीय होता है या फिर विकेन्द्रित। नाभीय क्षति में मस्तिष्क के विशिष्ट क्षेत्र में क्षति होता देखा गया है जबकि विकेन्द्रित क्षति में फैले होते है। छुतहा रोगों तथा जहर से सामान्यत: विकेन्द्रित क्षति ही उत्पन्न होती है।

संज्ञानात्मक विकृतियों के कई सामान्य लक्षण होते है जिनमें निम्नांकित प्रधान है-

1- इसमें रोगी उन घटनाओं की याद भी नहीं रख पाता है जो चन्द मिनट पहले घटी थी।
2- संज्ञानात्मक विकृति के रोगी में लिखित भाषा को समझनें की क्षमता की कमी होती है हालांकि ऐसे रोगी बोल-चाल की भाषा को आसानी से समझ लेते है।
3- परिचित्त वस्तुओं या व्यक्तियों को ऐसे रोगी ठीक से नहीं पहचान पाते है।
4- ऐसे रोगी व्यवहार के साधारण क्रम को भी सुनियोजित नहीं कर पाते है।
5- ऐसे रोगियों की चेतना इतनी धुंधली हो जाती है कि वे यह नहीं समझ पाते है कि उनके इर्द गिर्द के वातावरण में क्या हो रहा है।
6- ऐसे रोगियों में संभ्राति तथा स्थिति भ्रांति की स्थिति काफी गंभीर होती है जिसके करण इनमें व्यामोही विश्वास उत्पन्न हो जाता है।
7- ऐसे रोगियों में व्यवहार की उपयुक्तता के बारें मे निर्णय लेने की कमी पायी जाती है।
8- ऐसे रोगियों में देशिक व्यवस्थाओं को सही ढंग से समझने या पेशीय व्यवहारों को समन्वित करने में पर्याप्त कठिनाई होती है।

10.4 उन्माद (Delirium)

डिलिरियम जिसका हिन्दी अनुवाद उन्माद है,यह लैटिन भाषा से लिया गया है| इसमें डी का अर्थ होता है परे या हटकर तथा लिरा का अर्थ होता है लीक या मार्ग। अत: डिलिरियम पद का शाब्दिक अर्थ लीक से हटकर है | जैसा कि वेल्स तथा डनकन ने कहा कि सामान्य अवस्था से अलग हो जाना है । लगभग इसी अर्थ में उन्माद को आधुनिक नैदानिक विशेषज्ञों ने बताया चेतन के साथ ही साथ संज्ञान भी कुछ दिनो या घंटो तक प्रभावित रहता है लिपोस्की के अनुसार उन्माद एक ऐसा मानसिक रोग है जिसके लक्षणों का उल्लेख हमें 25,00 वर्ष पहले की कृतियों में भी मिलता है।

उन्माद के लक्षण सामान्यत: अचानक रोगी में विकसित हो जाते है। रोगी को किसी घटना या वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने में काफी कठिनाई होती है तथा वह एक संगत एवं निर्देशित चिंतन करने में असमर्थता दिखा पाता है। उन्माद के आरंभिक अवस्था में रोगी खासकर रात्रि में अधिक बेचैन होता है क्योंकि नींद जागत क्रम क्षुब्ध हो जाता है। परिणामत: दिन में रोगी उंघते रहता है तथा रात्रि में बेचैन तथा उत्तेजित रहता है। उनमें घबरा देने वाले स्वप्न भी अधिक आता है।

उन्माद के रोगी बातचित ठीक से नहीं कर पाते है क्योंकि उनका ध्यान तथा चिंतन दोनों ही क्षुब्ध रहता है। उनके द्वारा बोले गये शब्द अस्पष्ट होते है तथा उनका हस्तलेखन तथा शब्दों का हिज्जे दोषपूर्ण होता है। गभींर उन्माद में रोगी की भाषा बिलकुल ही असंगत हो जाती है ऐसे रोगी में संभ्रति इतनी अधिक हो जाती है कि उनमें समय स्थान तथा व्यक्ति के लिये पूर्णत: स्थिति भ्रांति उत्पन्न हो जाती है ऐसे रोगी अपना नाम भी नहीं बतला पाते है। 24 घंटे की अवधि में बीच में उन्माद के रोगियों में सामान्य अन्तराल भी देखा जाता है जहां रोगी सतर्क एवं संगत दिखते है। इस तरह की अस्थिरता रोगी को अन्य विकृति जैसे मनोभ्रंश से भिन्न करता है।

उन्माद के रोगीयों में प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक कठिनाईयां भी सामान्य ढंग से देखने को मिलता है। रोगी प्राय: अपरिचित्त को परिचित्त समझने की भूलकर बैठता है। किसी चीज को बहुत छोटा या बहुत बडा समझने की मूल भी ऐसे रोगियों द्वारा काफी होता है। भ्रम तथा विभ्रम की मात्रा भी काफी होता पाया जाता है। वृद्ध लोगों में उत्पन्न उन्माद की स्थिति में करीब 40-70 प्रतिशत लोगों में स्थिरव्यमोही गलत विश्वास उत्पन्न हो जाता है।

इस विकृति चिंतन तथा प्रत्यक्षणों के साथ-साथ ऐसे रोगियों की मनोदशा तथा क्रिया में पर्याप्त उतार-चढाव होता देखा गया है। ऐसे रोगी का व्यवहार अनियमित होता है।

10.5 उन्माद की व्यापकता तथा दिशा (course and prevalence of delirium)

उन्माद के लक्षण किसी भी उम्र के व्यक्तियों में हो सकता है परंतु यह सबसे सामान्य बच्चों एवं वृद्ध लोगों में होता है। बच्चों में उन्माद की शुरूआत उच्च बुखार होने पर अक्सर देखा जाता है। वृद्धों में उन्माद तेजी से या फिर मन्द गति से भी विकसित होता है। उन्माद की अवस्था वृद्धों के लिये अधिक गंभीर होता है। मिलर के अनुसार 10 से 15 प्रतिशत ऐसे वृद्ध लोग जिन्हे सर्जिकल ऑपरेशन हुआ होता है में उन्माद के लक्षण विकसित हो जाते है।

10.6 उन्माद के कारण (causes of delirium)

वृद्ध लोगों में उन्माद के कारणों को कई सामान्य वर्गो में बांटा गया है- औषध उत्तेजना, चयापचयी तथा पोषण असंतुलन, संक्रमण, बुखार, तंत्रकीय **विकृतियाँ** तथा इर्द-गिर्द के वातावरण में परिवर्तन से उत्पन्न तनाव आदि मुख्य है। लिपोवस्की के अनुसार उन्माद बड़े सर्जिकल ऑपरेशन के बाद तथा मनोसक्रिय तत्वों में प्रत्याहार तथा सिर में चोट लगने आदि से भी उत्पन्न होता है। वृद्ध लोगों में उन्माद कुछ खास बीमारी से भी उत्पन्न होता है। इन बीमारियों में निमोनिया, मूत्रपथ का संदूषण, कैंसर, मस्तिष्क स्टोक, आदि प्रमुख है वेसडाइन के अनुसार वृद्ध लोगों में उन्माद का सबसे महत्वपूर्ण इकलौता कारण बतलाए गए औषधों को लेने की तीव्र उत्तेजना मानी गयी है। परंतु सोलोन के अनुसार अधिकतर केसेज में उन्माद के एक से अधिक कारण होते है।

हालांकि उन्माद सामान्यत: बहुत तेजी से अर्थात कुछ घंटो या दिनों में विकसित हो जाता है, इसके प्रांरभ होने का वास्तविक तरीका इसकों उत्पन करने वाले कारकों पर निर्भर करता है। जैसे, विष - जन्य प्रतिक्रिया या मस्तिष्क घात से उन्माद का कारण चयापचयी क्षुब्धता होती है, और इसके लक्षण धीर-धीरे एक विशेष समय तक विकसित होते रहते है।

10.7 उन्माद के उपचार (treatment of delirium)

उन्माद का उपचार उसे उत्पन्न करने वाले कारकों को ध्यान में रखकर किया जाता है। जब उन्माद का कारण अल्कोहल पीना बंद कर देना होता है या अन्य लिए जा रहे औषधों को रोक देना होता है, तो ऐसे केसेज का उपचार जैसा कि काज ने बतलाया है, बेनजोडियाजेपाइन्स देकर किया जाता है। इस औषध से रोगी को मानसिक शांति मिलती है तथा उसे नींद आती है। संदूषण, मस्तिष्कीय आघात तथा टयूमर से उन्माद उत्पन्न होने पर फिर उसी के अनुरूप मेडिकल हस्तक्षेप किया जाता है टरजेपैक के अनुसार उन्माद की हल्की अवस्था होने पर मनोविकृति विरोधी औषध जिसमें हेलोपैरीडोल महत्वपूर्ण होता है, अधिक लाभकारी सिद्ध हुआ है।

रिकिमर ने उन्माद के उपचार के लिए मनोसामाजिक हस्तक्षेप को भी महत्वपूर्ण माना है। इस तरह के हस्तक्षेप का उद्देश्य रोगी में पुर्नविश्वास उत्पन्न करना होता है कि वह अपनी चिंता, विभ्रमों एवं घबराहट को आसानी से दूर कर सकता है। जैसे, जब रोग के उपचार में लिए गए निर्णयों में रोगी का निर्णय भी सम्मिलित कर लिया जाता है, तो इससे रोगी में आत्म नियंत्रण एवं आत्म विश्वास काफी बढ़ जाता है जिसमें उसे अपनी अवस्थाओं से निबटनें में मदद मिलती है।

कुछ निरोधक उपाय का उपयोग करके भी उन्माद के प्रति संवेदनशील रोगियों में उन्माद को रोका जा सकता है विशेष मेडिकल देख रेख तथा उपयुक्त चिकित्सीय औषध के उपयोग से उन्माद की अवस्था को उत्पन्न होने से रोका जा सकता है।

स्पष्ट हुआ कि उन्माद का उपचार संभव है तथा यह रोग उत्पन्न ही न हो, इसके लिए कुछ रोधात्मक प्रविधियां भी उपलब्ध है।

10.8 स्मृतिलोपीय विकृतियाँ (Amnestic disorders)

स्मृतिलोपीय विकृति में स्मृतिलोप की अवस्था होती है जिसमें रोगी में स्मृति से संबंध कई तरह के दोष पाए जाते है। इस तरह की विकृति में स्मृति लोप ही मुख्य लक्षण होता है। कभी-कभी अन्य संज्ञानात्मक कठिनाईया भी होती है जिनमें उत्पाद या मनोभ्रंश के लक्षण देखे जा सकते है। स्मृतिलोपीय विकृतियां सामान्य मेडिकल अवस्था के प्रत्यक्ष प्रभाव से उत्पन्न होता है या फिर अल्कोहल के सतत उपयोग के प्रभाव से भी उत्पन्न होता है। जब अल्कोहल पीने के सतत उपयोग के प्रभाव से समृति लोप के लक्षण उत्पन्न होता है, तो इस अवस्था को वर्निक कारसाकाफ्फ संलक्षण कहा जाता है।

DSM-IV में स्मृतिलोपीय विकृति के पहचान के लिए कुछ विशेष कसौटी बनाया गया है जिसमें अन्य बातो के अलावा इस तथ्य पर बल डाला गया है कि स्मृति लोप के स्वरूप को इतना गम्भीर होना चाहिए कि उससे उसका सामाजिक या व्यवसायिक समायोजन पर बुरा असर पडता हो, तथा उसमें नयी सूचनाओं को सीखने तथा सीखी गये सूचनाओं का प्रत्याव्हान करने की समर्थता हो।

स्मृतिलोपीय विकृति में मूलत: दो तरह के स्मृतिलोप देखने को मिलते है-

- एन्टीरोग्रेड स्मृतिलोप
- रिटोग्रेड स्मृतिलोप

एन्टीटोग्रड स्मृतिलोप में व्यक्ति में नयी सूचनाओं को याद करने की असमर्थता पायी जाती है जबकि रिटोग्रट स्मृतिलोप में व्यक्ति सीखी गयी या याद की गयी सूचनाओं का जरूरत के अनुसार प्रत्याहान नहीं कर पाता है। इन स्मृति लोपों की गम्भीरता कैसी होगी, यह बहुत कुछ इस बात पर आधारित होता है कि मस्तिष्क के कौन-सी संरचना में क्षति हुई है। यदि हिपोकेम्पस या मेडियल डायनसिफेलोन का क्षेत्र क्षतिग्रस्त हुआ होता है, तो स्मृति संबद्ध गडबडिया स्थायी होती है।

बहुत रोगी जिनमें स्मृतिलोप विकृतिया काफी गंभीर होती है, उन्हे अपनी समस्याओं में सूझ-बूझ की कमी तो दिखाई देती है और वे लोग या तो इन समस्याओं को मानने से इनकार कर देते है या फिर उनके प्रति तटस्थ रहने लगते है। ऐसे लोगों में समय तथा स्थान की स्थिति भ्रांति भी पायी जाती है पंरन्तु वे अपनी पहचान के बारे में सतर्क रहते है। ऐसे रोगी स्मृति लोप से स्मृति में उत्पन्न खाई को अन्य आवश्यक बातों से भर देते हैं, जिसे गपशप की घटना का नाम दिया गया है। अत: वैज्ञानिकों को रोगी द्वारा बतलाये गये तथ्यों का सत्यापन करने के लिए किसी तीसरी पार्टी जैसे उसके दोस्त, माता-पिता आदि से जानकारी लेना आवश्यक हो जाता है।

10.9 स्मृतिलोपीय विकृति का कारण (causes of amnestic disorders)

स्मृतिलोपीय विकृतियों की व्यापकता का सही सही आंकलन करना कई कारणों से मुश्किल होता है। इन कारणों में निम्नांकित प्रमुख है-

1- अधिकतर केसेज में यह देखा गया है कि स्मृतिलोपीय **विकृतियाँ** चंद घंटों या दिनों से अधिक नहीं टिक पाता है। फलत: प्रभावित व्यक्ति नैदानिक विशेषज्ञों के ध्यान में आता ही नहीं है।

2- कुछ केसेज में ऐसा देखा गया है कि ऐसी विकृतिया इतना धीरे धीरे व्यक्ति में विकसित होती है कि उस पर भी विशेषज्ञों का ध्यान नही जाता है। जैसे, जो लोग अल्कोहल को बहुत लम्बे समय से पीते आ रहे होते है, तो उनमें स्मृतिलोपीय विकृति विटामिन बी - 1 अर्थात थियामिन की कमी के कारण काफी धीरे- धीरे उत्पन्न होता है।

3- सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों से भी स्मृतिलोपीय विकृति का मूल्यांकन कठिन हो जाता है। जैसे, कुछ ऐसी संस्कृति है जिसमें जन्मदिन को कोई खास महत्व नहीं दिया जाता है अत: यदि वैसे व्यक्ति से जन्मदिन से सम्बन्ध सूचनाएं पूछी जाती है तो प्राय: व्यक्ति उसे नहीं बता पाता है । अत: ऐसी परिस्थिति में स्मृतिलोपीय विकृति की पहचान गलत हो सकती है।

4- कभी कभी जान बूझकर भी व्यक्ति स्मृतिलोप का लक्षण दिखलाता है ताकि उसे कुछ संभावित दुखद अनुभूतियों से छुटकारा मिल सके।

5- अत: यह आवश्यक है कि नैदानिक विशेष ज्ञ वास्तविक स्मृति लोपीय विकृति को नकली विकृति से भिन्न कर के लें जिनमें उसे कभी-कभी सफलता नहीं भी मिलती है।

10.10 मनोभ्रंश (Dementia)

मनोभ्रंश एक ऐसा संज्ञानात्मक विकृति है जिसे साधारण लोग 'सठियाना' कहते है। इस विकृति में व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता का ऐसा क्रमिक ह्रास होता है कि उसका सामाजिक एवं व्यावसायिक कार्य दोषपूर्ण हो जाते है। मनोभ्रंश को निटजेल, स्पेल्ज मैककाउले तथा वर्नस्टीन के शब्दों में इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है-

''मनोभ्रंश में कई संज्ञानात्मक कार्य जिसमें स्मृति, चिंतन, तर्कण तथा एकाग्रता सम्मिलित होता है, का समग्र क्षति होता है तथा जो इतना गंभीर होता है कि इससे घर या कार्य पर के व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के कार्य बाधित होते है।''

मनोभ्रंश की अवस्था जब थोडा आगे बढ़ती है तो रोगी की शाब्दिक अभिव्यक्ति लघु या आवर्तीय हो जाता है तथा कुछ गंभीर केसेज में रोगी इकोलेलिया का व्यवहार भी दिखलाता है जिसमें रोगी दूसरों द्वारा बोले गये शब्दों को ठीक उसी ढंग से जोर जोर से बोलकर दोहराता है। मनोभ्रंश किसी भी उम्र के व्यक्तियों में हो सकता है परन्तु यह सामान्यत: वृद्ध लोगो में अधिक होता है । आरंभिक अवस्था मे व्यक्तियों में हो सकता है परंतु यह सामान्यत: वृद्ध लोगों में अधिक होता है। रीवोक तथा फोलस्टीन के अध्ययन के अनुसार 65 साल या उससे उपर के कुल व्यक्तियों में से 5 प्रतिशत में मनोभ्रंश उत्पन्न होता है तथा और जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है, मनोभ्रंश होने की संभावना बढ़ते जाती है। 85 साल की आयु के सम्पूर्ण व्यक्तियों में से 10 प्रतिशत व्यक्तियों में मनोभ्रंश का रोग उत्पन्न होता है।

आरंभिक अवस्था में मनोभ्रंश के लक्षण बहुत कुछ विशाद के लक्षण से मिलते जूलते है। परंतु ग्रासवर्ग तथा नकारा के अनुसार कुछ ऐसी विशेषताएँ है जिनके आधार पर इन दोनो में अन्तर किया जा सकता है। इन दोनों के बीच अन्तर के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार है-

1- विशाद की शुरूआत अचानक एवं तेजी से होती है। इसका एक व्यक्तिगत तथा पारिवारिक इतिहास भी होता है। मनोभ्रंश की शुरूआत धीरे धीरे विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए होता है।

2- मनोभ्रंश के रोगी अपने लक्षणों के प्रति उदासीन होते है। वे अपने रोग के लक्षणों से अनभिज्ञता दिखलाते हैं जबकि विशाद के रोगी अपनी समस्याओं के बारे में बहुत बल देकर दूसरों को बतलाते है।

3- विशाद के लक्षण सुबह में बहुत ही गंभीर होता है जबकि मनोभ्रम के लक्षण सुबह में उतने गंभीर नहीं होते है परंतु जैसे-जैसे दिन चढ़ता जाता है, लक्षण की गंभीरता बढ़ते जाती है।

4- किसी उत्तेजक औषध देने से विशादी व्यक्ति अधिक क्रियाशील महसूस करता है तथा उसमें संभ्राति भी कम हो जाती है परंतु ऐसे औषध के प्रति मनोभ्रंश के रोगीयों में संभ्राति और भी अधिक बढ़ जाता है ऐसे रोगी में प्रत्याहारी प्रवृतियां भी बढ़ जाती है।

5- मनोभ्रंश के रोगी का हालत गिरता जाता है जबकि विशाद के रोगियों का हालत समय बीतने के साथ या तो स्थिर रहता है या फिर उन्नत होता जाता है।

10.11 मनोभ्रंश के कारण (causes of dementia)

मनोभ्रंश की पहचान सामान्यत: लक्षणों के संभावित कारणों पर आधारित होता है DSM-IV में मनोभ्रंश के पांच प्रमुख कारण बतलाए गये है। अल्झीमर प्रकार का मनोभ्रंश संवहनी मनोभ्रंश, अन्य मेडिकल अवस्थाओं के कारण उत्पन्न मनोभ्रंश, द्रव्य-उत्पन्न मनोभ्रंश तथा बहुकारणों से उत्पन्न मनोभ्रंश।

मनोभ्रंश के सबसे सामान्य कारण इस प्रकार है-

1. अल्झीमर रोग के कारण मनोभ्रंश बहुत अधिक होता पाया गया है।
2. संवहनी रोग जिसमें स्टोक के कारण मस्तिष्क में रक्त आपूर्ति तथा आक्सीजन की आपूर्ति में कमी आ जाती है, भी मनोभ्रंश का एक प्रमुख कारण है। उक्त दोनों कारणों से उत्पन्न मनोभ्रंश को मुख्य मनोभ्रंश कहा जाता है क्योकि ऐसा मनोभ्रंश मस्तिष्कीय दोष से प्रत्यक्ष रूप से उत्पन्न होते है।
3. बहुत सारी अवस्थाएं जैसे संदूषण, चपाचयी क्षुब्धता, औषध प्रतिक्रिया, टयूमर, विटामिन की कमी तथा सिर में चोट आदि से मनोभ्रंश की उत्पत्ति होती है। इन कारणों से उत्पन्न मनोभ्रंश को गौण मनोभ्रंश कहा जाता है।

   स्पष्ट हुआ कि मनोभ्रंश के विभिन्न कारण होते है जिनमें विभिन्न प्रकारों का मनोभ्रंश उत्पन्न होता है। अब हम इन सभी प्रकार के मनोभ्रंश का अध्ययन अलग से करेंगे।

10.12 अल्झीमर प्रकार के मनोभ्रंश (Dementia of Alzheimer's type or DAT)

मनोभ्रंश का सबसे प्रमुख कारण अल्झीमर रोग बतलाया गया है क्योकिं आधे से अधिक रोगियों में मनोभ्रंश का कारण यही अल्झीमर रोग होता है। यह रोग की पहचान सबसे पहले पहल जर्मन तंत्रिका विज्ञानी एलीइस अल्झीमर ने 1907 में किया। इस रोग में व्यक्ति के मस्तिष्क का कार्टेक्स अपलटावी क्रमिक ह्रास उत्पन्न हो जाता है। जिसके कारण उसमें स्मृति दोष तथा अन्य संज्ञानात्मक अभाव के लक्षण उत्पन्न हो जाते है। यह रोग तुलनात्मक रूप से महिलाओं में अधिक होता है यह रोग 65 वर्ष या इससे अधिक आयु के व्यक्तियों में अधिक होता देखा गया है कभी कभी यह रोग 65 साल से कम आयु के व्यक्तियों से भी उत्पन्न हो जाता है।

DSM-IV के नैदानिक कसौटी के अनुसार DAT के पहचान के लिए बहु संज्ञानात्मक आभाव जो धीरे धीरे विकसित होता है पर बल डाला गया है। इसमें सबसे प्रबल स्मृति दोष होता है रोगी नयी सूचनाओं को संगठित करने की अक्षमता दिखलाता है। जिसका परिणाम यह होता है कि वह नयी सूचनाओं को ठीक से नहीं सीख पाता है। DAT के रोगी महत्वपूर्ण घटनाओं की याद भूल जाते हैं। इतना ही नहीं, ऐसे लोग वातावरण में या दिनचर्या में हुए परिवर्तनों के साथ समायोजन की क्षमता को भी खो देता है।

अल्झीमर रोग कम से कम तीन या अधिक से अधिक आठ अवस्थाओं के क्रम से गुजरता है। रोग के आंरभिक अवस्थाओं में रोगी दिनचर्या के सामाजिक परिस्थितियों के साथ ठीक से निबट लेता है परंतु बाद में जैसे रोगी की आयु बढ़ती है, रोगी सांवेगिक रूप से भोथरा तथा सामाजिक रूप से अपने आप को अलग रखने लगता है। इस रोग के बीच की अवस्थाओं में रोगी प्रत्यक्षण, बोध तथा भाषा

से संबंध**विकृतियाँ** भी दिखलाता है। इनमें ऐफासिया जिसमें भाषा से संबंधितकठिनाईया होती है, एप्राक्सिया जिसमें रोगी का पेशीय कार्य दोषपूर्ण होता है तंत्रिका एगनेसिया जिसमें रोगी परिचित्त वस्तुओं की पहचान में असमर्थता दिखलाता है, प्रधान हैं। ये सभी संज्ञानात्मक दोष इतने गंभीर होते है कि उसका व्यक्ति के सामाजिक, व्यवसायिक कार्यो पर गंभीर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा क्षमताओं की तुलना में वर्तमान क्षमता काफी दबा हुआ होता है।

इस रोग में रोगी का व्यक्तित्व में भी काफी बदलाव आता है। सांवेगिक रूप से अस्थिर हो जाता है। तथा परिवार के सदस्यों पर दैहिक रूप से या शाब्दिक रूप से आक्रमण भी कर बैठता है। रोगी में स्थिर व्यामोह भी उत्पन्न हो जाता है जिसमें उसका देख रेख प्रभावित होता है। अन्तोत्वगत्वा, रोगी इस हद तक गिर जाता है कि वो अपने आप की देख रेख करने के लायक भी नहीं समझता है। ऐसी स्थिति में यहां तक दिनचर्या कार्य जैसे कपड़ा पहनना, भोजन करना तथा स्नानगृह का उपयोग करना इनके लिए कठिन हो जाता है। रोग के लक्षण उत्पन्न होने पर सामान्यत: रोगी 8 से 12 साल तक जीवित रहता है।

आधे से अधिक मनोभ्रंश का कारण अल्झीमर रोग ही होता है। अत: नैदानिक विशेषज्ञों ने इस रोग के कारणों का विशेष अध्ययन किया है और निम्नाकिंत तथ्य पाए गए है-

1- गुणसूत्र 1,14,19 तथा 21 में जब कुछ असामान्य जीन्स होते है तो वे कुछ ऐसा प्रोटीन पैदा करते है जिससे व्यक्ति में तरह - तरह के संज्ञानात्मक अभाव धीरे धीरे उत्पन्न हो जाते है जिसे अल्झीमर रोग की संज्ञा दी जाती है।

2- कुछ अन्य अध्ययनों से यह पता चलता है कि पारिवारिक इतिहास, मस्तिष्कीय चोट, पर्यावरणी जीव-विष से सम्पर्क, हदय-रोग, एसिटिलकोलाइन का निम्न स्तर आदि के मौजूद रहने से अल्झीमर रोग उत्पन्न होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है।

अज्झीमर रोग आज की तिथि में लाइलाज है तथा इसका रोक-थाम भी उपलब्ध नहीं है फिर भी इस दिशा में कुछ बिन्दु विचारणीय है जो इस प्रकार है-

1- अभी कुछ नये नये औषध जो अस्थायी तौर पर इनके लक्षणों की गंभीरता को कम कर सकता है, कि खोज की जा रही है। टेक्राइन, डीप्रेनिल, निमोडिपिन, प्रोपेन्टोफिलिन आदि प्रधान है।

2- कुछ मनोसामाजिक हस्तक्षेप प्रविधियां भी है जो अल्झीमर के रोगियों को तथा उन्हे देख-रेख करने वालों को रोग के लक्षणों की गंभीरता को कम करने में मदद करता है। जैसे, काजमैन तथा कावास ने अपने अध्ययन में आधार पर यह बतलाया है कि सिर में चोट न लगने देना, हदय संवहनी रोग की रोकथाम, रक्तचाप तथा तनाव को व्यायाम तथा उपयुक्त भोजन के माध्यम से नियंत्रित करके अल्झीमर रोग के उत्पन्न होने की संभावना को रोका जा सकता है।

स्पष्ट हुआ कि DAT मनोभ्रंश का एक प्रमुख प्रकार है जिसमें रोगी मे कई तरह के संज्ञानात्मक अभाव उत्पन्न हो जाते है।

10.13 अन्य मेडिकल अवस्थाओं से उत्पन्न मनोभ्रंश (Other medical conditions dementia)

नैदानिक विशेष ज्ञों तथा DSM-IV में कुछ ऐसी तंत्रकीय एवं जैव रासायनिक प्रक्रियाओं की पहचान की गयी है जिनमें भी मनोभ्रंश उत्पन्न होते है। ऐसी प्रक्रियाए कई है जिनमें निम्नाकिंत प्रधान है-

1- पेरी के अनुसार एच.आई.वी. जिसमें व्यक्ति में एड्स उत्पन्न होता है, से मनोभ्रंश उत्पन्न होता है। एच.आई.वी. से उत्पन्न मनोभ्रंश के आरंभिक लक्षण कुछ इस प्रकार होते है- संज्ञानात्मक मंदी, दोषपूर्ण अवधान तथा स्मृति ह्रास आदि। नाविया के अनुसार मनोभ्रंश के ऐसे रोगी फूहड होते है तथा भाव शून्य तथा सामाजिक रूप से अलग-थलग व्यवहार करने लगते है। एड्स के 29 से 87 प्रतिशत रोगियों में संज्ञानात्मक दोष इतना गंभीर हो जाता है कि करीब इनमें से एक तिहाई लोग DSM-IV के एच.आई.वी. से उत्पन्न मनोभ्रम की कसौटी पर खरे उतरने लगते है। एच.आई.वी. से उत्पन्न मनोभ्रंश को सबकार्टिकल मनोभ्रंश भी कहा जाता है क्योकिं इसमे मस्तिष्क के भीतरी क्षेत्रो अर्थात कार्टेक्स के भीतर का क्षेत्र प्रभावित होते है जिसके कारण मनोभ्रंश के लक्षण उत्पन्न होते है।

2- मनोभ्रंश पिक रोग से भी उत्पन्न होता है। यह एक तरह का प्रगामी या पुरोगामी हासी रोग हैं जिसका कारण अभी तक ज्ञात नहीं हो पाया है। इसमें अल्झीमर रोग के समान ही कार्टिकल मनोभ्रंश के लक्षण उत्पन्न होते है। इस रोग के आरंभिक दिनों में रोगी की यादास्त ठीक-ठाक होती है तथा स्थितभ्रांति भी कम होता है। व्यक्तित्व में परिवर्तन, अवरोधहीन मनोदशा, तथा सांवेगिक प्रतिक्रियाएं इसके आरंभिक लक्षण होते है। यह रोग सामान्यत: 40 से 50 साल की आयु में व्यक्ति को होता है और मनोभ्रंश का लक्षण उत्पन्न करता हैं।

3- लीवी वाडी मनोभ्रंश एक अन्य हासी मनोभ्रम है हनसेल तथा उनके सहयोगियों के अध्ययन के अनुसार इसमें व्यक्ति में असामान्य प्रोटीन जमा हो जाते है इसे लीवी वाडी कहा जाता है और यह मस्तिष्कीय स्तंभ के भीतर तथा कार्टेक्स के न्यूरोन्स में विकार उत्पन्न कर देते है। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति में मनोभ्रंश के लक्षण उत्पन्न हो जाते है इस रोग में विभ्रम सामान्य होते है तथा संज्ञानात्मक क्षमताएँ में भी काफी उतार चढाव होने लगता है। कभी रोगी के चिंतन स्पष्ट होते है तो कभी उसमें स्मृति ह्रास तथा संभ्राति के लक्षण दिखने लगते है। लीवी वाडी मनोभ्रंश में कुछ विशेष पेशीय लक्षण जैसे मांसपेशियों का अकडन, मंद गति आदि भी स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है।

4- पारकिन्स रोग से भी मनोभ्रंश होता है। फ्रेडमेन के अनुसार पारकिन्सन रोग जो पूरे संसार में 1000 में से एक व्यक्ति मे होता है में विशेष तरह के पेशीय लक्षण देखने को मिलता है। ऐसे रोगियों में चूंकि डोपामाइन नामक न्युरोटांसमीटर की मात्रा कम हो जाती है, अत: इनकी शारिरिक गतियां मन्द हो जाती है, शरीर में कम्पन्न होने लगता है तथा चलने फिरने में हिचकते है। इन्हे अपने शारिरिक गति पर नियत्रण कम हो जाता है

पारकिन्सन रोग के सभी रोगियों में मनोभ्रंश नहीं विकसित होता है परन्तु कुछ रोगियों में मनोभ्रंश विकसित हो जाते है। इनमें सवकार्टिकल मनोभ्रम जिसकी चर्चा उपर की गई है, के सभी लक्षण दिखते है।

5- हनटिंगटन रोग के कारण भी मनोभ्रंश के लक्षण व्यक्ति में विकसित हो जाते है इस रोग में भी रोगी में प्रगामी सबकार्टीकल ह्रास होता है जिससे रोगी में पेशीय क्षुब्धता उत्पन्न हो जाती है। हनटिंगटन रोग व्यक्ति में 30 से 40 साल की आयु में सामान्यत: होता है। यह रोग आनुवांषिक होता है तथा गुणसूत्र 4 में एक प्रथम जीन के कारण उत्पन्न होता है। इस रोग के लक्षणों में आनन विकृति, मांशपेशियों में फडकन, अनावश्यक हचकन आदि प्रमुख है इसमें व्यक्तित्व में परिवर्तन हो जाता है तथा स्मृति ह्रास एवं विषद, रोग के आरंभिक दिनों में स्पष्ट रूप से दिखते है। बाइ में इनमें प्रगामी बौद्धिक हास, स्मृति समस्या, असंगठित संभावना आदि भी उत्पन्न हो जाते है।

6- क्रेरटफेल्ड जैकोब रोग के कारण भी मनोभ्रंश उत्पन्न होते है क्रेटफेल्ड जैकोब रोग जैसा कि गिब्सन तथा उनके सहयोगियों ने कहा है, एक ऐसा छुतहा रोग है जो व्यक्ति में रोगग्रस्त उत्तकों के खाने से उत्पन्न होता है। स्मीथ तथा काउसेन्स के अनुसार इसे पागल गाय रोग भी कहा जाता है जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में रोगग्रस्त गाय का मांस खाने से उत्पन्न होता है। पेशीय समन्वय में कमी, स्मृति में तेजी से ह्रास, ध्यान में विचलन तथा व्यवहार में परिवर्तन आदि इसके सामान्य लक्षण है जो इस रोग के आरम्भिक दिनों में आमतौर पर दिखते है। यह रोग काफी तेजी से आगे बढता है और साल भर के अन्दर में ही रोगी की मृत्यु भी हो जाती है।

स्पष्ट हुआ कि कई तंत्रकीय तथा जैव रसायनिक प्रक्रियाए ऐसे है जो व्यक्ति में न केवल कोई रोग उत्पन्न करते है बल्कि वे धीरे-धीरे व्यक्ति में मनोभ्रंश के लक्षण भी उत्पन्न कर देते है।

10.14 सारांश

1- संज्ञानात्मक विकृति से तात्पर्य एक ऐसे विकृति से होता है जो मूलत: मस्तिष्क में होने वाले परिवर्तनों से उत्पन्न होता है तथा जिसमें व्यक्ति के संज्ञान में दोष उत्पन्न हो जाता है ऐसी विकृतिया वृद्ध लोगों में ही अधिकतर होती है।

2- संज्ञानात्मक विकृति में तीन तरह की विकृतियों को सम्मिलित किया गया है- स्मृतिलोपीय विकृति तथा मनोभ्रंश ।

3- स्मृतिलोपीय विकृति में मुख्यत: स्मृतिलोप की अवस्था होती है जिसमें रोगी में स्मृति से संबद्ध कई तरह के दोष पाए जाते है। वर्निक कोरसाकोफ्फ संलक्षण एक ऐसी ही स्मृतिलोपीय विकृति है। स्मतिलोपीय विकृति में मुख्यत: दो तरह के स्मृतिलोप होते है- एन्टीरोग्रेड स्मृतिलोप तथा रिटीग्रेड स्मृतिलोप।

4- उन्माद एक अन्य संज्ञानात्मक विकृति है जिसमें रोगी को किसी घटना या वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने में अधिक कठिनाई होती है तथा वह संगत एवं निर्देशित चिंतन करने में असमर्थता दिखलाता है।

5- मनोभ्रंश एक ऐसी संज्ञानात्मक विकृति है जिसे साधारण लोग सठियाना के नाम से जानते है। इस रोग में व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता का क्रमिक ह्रास इतना अधिक होता है कि उसका सामाजिक एवं व्यवसायिक कार्य दोषपूर्ण हो जाता है। मनोभ्रम के कई कारण बतलाए गए है तथा उन कारणों पर आधारित मनोभ्रंश के प्रमुख प्रकार है- अल्झीमर प्रकार का मनोभ्रंश, संवहनी मनोभ्रंश अन्य मेडिकल कारणों से उत्पन्न मनोभ्रंश तथा द्रव्य-उत्पन्न मनोभ्रंश॥

10.15 प्रश्नोत्तर

1- संज्ञानात्मक विकृति से आप क्या समझते हैं?
2- स्मृतिलोप विकृति के स्वरूप पर प्रकाश डालें? इसकी व्यापकता का आंकलन किन कारणों से मुश्किल हैं, समझाइये।
3- उन्माद के लक्षणों, दिशा , व्यापकता तथा कारणों का उल्लेख कीजिए?
4- मनोभ्रंश के प्रमुख लक्षण बतलाइये?
5- मनोभ्रंश के प्रकारों का वर्णन कीजिए?
6- स्मृतिलोप किसका उदाहरण हैं?
7- मनोभ्रंश की अन्य मेडिकल अवस्थाओं का वर्णन कीजिए?
8- अल्जीमर प्रकार के मनोभ्रंश पर प्रकाश डालिये?
9- निम्नलिखित का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए-
    1- एच.आई.वी. से उत्पन्न मनोभ्रंश
    2- पिक रोग
    3- लीवी वाडी मनोभ्रंश
    4- पारकिन्स रोग
    5- हनटिंगटन रोग

10.16 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 11

विभिन्न चिकित्सा

Various therapy

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा, फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा, अहम् वैलेशिक चिकित्सा, वस्तु-संबंध चिकित्सा तथा अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा

Humanistic-Experiential therapy, fredudian psychoanalytic therapy, ego analytic therapy,object-relation therapy,interpersonal psychodynamics therapy

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के स्वरूप एवं लक्ष्य

11.4 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा की प्रमुख चिकित्सा प्रविधि

11.5 क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा

11.6 गेस्टाल्ट चिकित्सा

11.7 लोगो चिकित्सा

11.8 अस्तित्ववादी चिकित्सा

11.9 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा का मूल्यांकन

11.10 फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा

11.11 फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के चरण

11.12 अहम् वैलेशिक चिकित्सा

11.13 अहम् वैलेशिक चिकित्सा के गुण तथा दोष

11.14 वस्तु-संबंधचिकित्सा

11.15 वस्तु-संबंधचिकित्सा के गुण एवं दोष

11.16 अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा

11.17 अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा के गुण एवं दोष

11.18 सारांश

11.19 प्रश्नोत्तर

11.20 संदर्भसूची

11.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा व उसके प्रकारों, फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा, अहम् वैलेशिक चिकित्सा, वस्तु-संबंध चिकित्सा तथा अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा तथा उपरोक्त चिकित्सा पद्धतियों के मूल्यांकन पहलूओं पर बल डाला गया हैं। इन चिकित्सा पद्धतियों का संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं-

- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा एक सूझ-केन्द्रित चिकित्सा हैं जो इस बात की पूर्वकल्पना करता हैं कि किसी भी असामान्य व्यवहार का उपचार व्यक्ति की मनोचिकित्सा के परिघटनात्मक मॉडल के तहत रखा गया हैं। इस उपागम या मॉडल मानव व्यवहार का आधार चेतन अनुभूति बतलाया गया हैं। इस चिकित्सा पद्धति में व्यक्ति को सर्जनात्मक तथा उत्तरोतर आगे बढ़ने वाला प्राणी माना जाता हैं।
- फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा में व्यक्ति दमित इच्छाओं, चिंतन, संघर्ष एवं डर आदि पर मनोविश्लैशिक दृष्टिकोण से प्रकाश डाला जाता हैं। ऐसे संघर्ष, इच्छाओं, डर आदि को अचेतन से बाहर निकाल कर उसमें पर्याप्त सूझ विकसित करने की कोशिश की जाती हैं। ताकि उससे उत्पन्न होने वाले संवेगात्मक एवं समायोजन संबंधी कठिनाइयों को रोगी ठीक ढ़ंग से सुलझा सके।
- अहं विश्लेषक चिकित्सा मनोवैज्ञानिकों का एक ऐसा समूह हैं जो फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित नियमों एवं संप्रत्ययों का एडलर के समान पूर्णत: अस्वीकृत न करके उसमें कुछ परिमार्जन किया हैं और अपनी चिकित्सा पद्धति में उपयोग किया हैं। इस समूह को अहं विश्लेषक कहा गया। इनमें हार्टमान 1939, अन्ना फ्रॉयड, क्रिस 1950, इरिक्सन 1956 तथा रैपापोर्ट मुख्य रूप से मशहूर हैं। अहं विश्लेषकों द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा से कुछ मात्रा में ही भिन्न हैं।
- वस्तु-संबंध सिद्धान्त का प्रतिपादन कई ब्रिटिश विश्लेषकों जिसमें फेयरमैन 1952, विनकोट1965, मार्गरेट मेहलर 1952 आदि प्रमुख हैं, द्वारा किया गया। वस्तु-संबंध सिद्धान्त मां-शिशु अंत:क्रिया से उत्पन्न होने वाले अंतवैयक्तिक संबंध तथा अहं की शक्ति एवं संरचना पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाता हैं।
- अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा का प्रतिपादन हैरी स्टैक सुलिभान द्वारा किया गया हैं। इस चिकित्सा में रोगी तथा उसके वातावरण के बीच अंत:क्रिया पर बल दिया जाता हैं। सुलिभान के अनुसार चिकित्सक अंत:वैयक्तिक संबंधों का विशेष प्रेक्षक होता हैं जो रोगी को यह स्पष्ट करता हैं कि किस तरह से उसका विशेष संज्ञान तथा संबंधित दोषपूर्ण व्यवहार शैली उसे अपनी जिन्दगी उत्तम छंग से जीने में कठिनाई उत्पन्न कर रहा है। जब रोगी इस पहलू को समझ लेता है तो वह अधिक समायोजनशील तरीकों से व्यवहार करनें के लिये प्रेरित हो उठता है।

उरोक्त चिकित्सा प्रणालियों का विस्तृत वर्णन इस इकाई में प्रस्तुत किया गया हैं।

11.2 उद्देश्य

- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के स्वरूप एवं लक्ष्य बता सकेंगे।
- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा की प्रमुख चिकित्सा प्रविधि को समझ सकेंगे।
- क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा को समझ सकेंगे।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा समझ सकेंगे।
- लोगो चिकित्सा समझ सकेंगे।
- अस्तित्ववादी चिकित्सा समझ सकेंगे।
- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा का मूल्यांकन बता सकेंगे।
- फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा को समझ सकेंगे।
- फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के चरण समझ सकेंगे।
- अहम् वैलेशिक चिकित्सा समझ सकेंगे।
- अहम् वैलेशिक चिकित्सा के गुण तथा दोष को समझ सकेंगे।
- वस्तु-संबंधचिकित्सा समझ सकेंगे।
- वस्तु-संबंधचिकित्सा के गुण समझ सकेंगे।
- अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा को समझ सकेंगे।
- अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा के गुण एवं दोष समझ सकेंगे।

11.3 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के स्वरूप एवं लक्ष्य (Nature and Goals of Humanistic-Experiential)

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा एक सूझ-केन्द्रित चिकित्सा हैं जो इस बात की पूर्वकल्पना करता हैं कि किसी भी असामान्य व्यवहार का उपचार व्यक्ति की मनोचिकित्सा के परिघटनात्मक मॉडल के तहत रखा गया हैं। तथा इस तरह की चिकित्सा को कुछ विशेषज्ञों द्वारा मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा भी कहा जाता हैं। इस उपागम या मॉडल मानव व्यवहार का आधार चेतन अनुभूति(conscious experience) बतलाया गया हैं। इस चिकित्सा पद्धति में व्यक्ति को सर्जनात्मक तथा उत्तरोतर आगे बढ़ने वाला प्राणी माना जाता हैं। जो अन्य बाते सामान्य रहने पर, अपने भीतर छिपे अंत:शक्ति का अनुभव करके अपने व्यवहार का चेतन रूप से मार्ग दर्शन भी करते रहता हैं। जब उसके इस समझ में गडबडी उत्पन्न होती है या उसके अस्तित्व पर प्रतिबंध लगता हैं, तो व्यक्ति में असामान्य व्यवहार की उत्पति होती हैं।

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा का मुख्य सार एवं लक्ष्य को इस प्रकार उल्लेखित किया जा सकता हैं-

1- इस चिकित्सा में क्लायंट को एक व्यक्ति के रूप में वद्रिर्त करने पर पर्याप्त बल डाला जाता है। इसमें चिकित्सक क्लायंट या रोगी को अपने अनोखे अंत:शक्ति को पहचानने एवं उस तक पहुंचने में उसे मदद करते हैं।

2- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा में चिकित्सक तथा क्लायंट की भूमिका स्तरीय एवं परस्पर होता हैं। जहां मनोगत्यात्मक चिकित्सा एवं रोगी में डाक्टर-रोगी का संबंधहोता हैं तथा व्यहार चिकित्सा में इन दोनों में शिक्षक-छात्र का संबंधहोता हैं। वही मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा में चिकित्सक एवं रोगी में माली और फूल के समान संबंधहोता हैं। जिस तरह से माली अपने फूल को उन्नत बनाता हैं उसी तरह इस चिकित्सा में चिकित्सक क्लायंट के भीतर अंत:शक्ति का वर्द्धन करता हैं।

3- इस चिकित्सा में क्लायंट तथा चिकित्सक के बीच के संबंध को एक प्रधान कारक माना जाता हैं जिसके सहारे वर्द्धन होती हैं। यह एक वास्तविक अंर्तव्यैक्तिक संबंधहोता हैं जो क्लायंट में ऐसे मानवीय अनुभूतियों को उत्पन्न करता हैं जो अपने आप क्लायंट में वर्द्धन लाता हैं।

4- इस चिकित्सा में क्लायंट की बीती अनुभूतियों को परिवर्तित नहीं किया जाता हैं बल्कि तात्कालिक अनुभूतियों को महत्वपूर्ण माना जाता हैं।

5- इस तरह की चिकित्सा में अधिकतर क्लायंट सामान्य लोगों के समान होते हैं। क्लायंट वातावरण के प्रति अपने विशेष प्रत्यक्षण के अनुरूप ही व्यवहार करते है। अत: चिकित्सक वातावरण पर रोगी की नजरों से देखकर ही उनकी समस्याओं को समझने की कोशिश करते हैं।

उक्त तथ्यों के अनुरूप मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा में रोगियों का उपचार किया जाता हैं। इस प्रविधि के तहत निम्नांकित चिकित्सा को मुख्य रूप से रखा गया हैं-

1- क्लायंट-केद्रिन्त चिकित्सा
2- गेस्टाल्ट चिकित्सा
3- लोगो चिकित्सा
4- अस्तित्ववादी चिकित्सा

11.4 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा की प्रमुख चिकित्सा प्रविधि

मानवतावादी अनुभवात्मक चिकित्सा की प्रमुख प्रविधियों का वर्णन निम्नांकित हैं-

11.5 क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा (Client-Centered Therapy)

इस चिकित्सा का प्रतिपादन कार्ल रोजर्स द्वारा 1940 के दशक में किया गया। रोजर्स ने अपनी चिकित्सा प्रविधि में रोगी के लिए क्लायंट तथा चिकित्सक के लिए सलाहकार शब्द का प्रयोग किया हैं। रोजर्स का मत हैं कि चिकित्सा एक प्रक्रिया होती है न कि विभिन्न प्रविधियों का सेट। इनका मत हैं कि चिकित्सक क्लायंट की समस्या का समाधान मात्र उन्हें कुछ कहकर या कुछ पढ़ाकर नहीं कर सकते हैं। उनके अनुसार वास्तविक प्रक्रिया ''अगर.....तब'' ("If…..then) प्रतिज्ञाप्ति से प्रारंभ होता हैं। इसका मतलब यह हुआ कि यहां मान्यता यह होती है कि अगर

चिकित्सक द्वारा सही परिस्थिति उत्पन्न की जाती हैं, तब क्लायंट में अपने आप परिवर्तन आयेगा और उसमें वर्द्धन होगा।

11.6 गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt Therapy)

गेस्टाल्ट चिकित्सा का प्रतिपादन फ्रेडरिक एस.पर्ल्स(Frederich S.Perls,1967,1970) द्वारा दिया गया है। 'गेस्टाल्ट' पद का अर्थ होता हैं-सम्पूर्ण। यह चिकित्सा मन व शरीर की एकता पर बल डालती हैं जिसमें चिंतन, भाव तथा क्रिया के समन्वय की आवश्यकता पर सर्वाधिक बल डालता हैं।

गेस्टाल्ट चिकित्सा का मुख्य लक्ष्य रोगी के वर्द्धन की रूकी प्रक्रिया को फिर से चालू करना होता हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति निम्नांकित दो तरह से की जाती हैं-

1- रोगी को उन भावों से अवगत कराने जो उनके व्यक्तित्व के प्रमुख हिस्सा हैं, परंतु जिसे उसने ठीक से नहीं समझने के कारण अलग रखा था, की कोशिश की जाती हैं।
2- रोगी को उन भावों व मूल्यों से अवगत कराया जाता हैं जिसे वे यह समझते हैं कि उनके व्यक्तित्व का यथार्थ हिस्सा हैं जबकि सच्चाई यह हैं कि व्यक्ति उन्हें दूसरें लोगों से लिया से लिया हैं।

इस तरह से गेस्टाल्ट चिकित्सा में रोगी को आत्मन् के उन यथार्थ पहलुओं पुन: ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हैं जिसे अस्वीकृत का दिया गया हैं। इसमें वर्तमान अनुभूतियों पर बल डाला जाता हैं न कि दमित आवेगों की प्राप्ति पर तथा भविष्य के बारे में अनुमान लगाने की अनुभूतियों पर।

11.7 लोगो चिकित्सा (Logo therapy)

लेागो चिकित्सा की प्रविधि विकटर फ्रैक्ल (Victor Frankl,1963) द्वारा विकसित की गयी हैं। चिकित्सा की यह प्रविधि अस्तित्वात्मक सिद्धांतों पर आधारित हैं। इस तरह की चिकित्सा में व्यक्ति में व्यक्ति की जिंदगी में अर्थहीनता के भाव से उत्पन्न होने वाली समस्याओं एवं चिंताओं दूर करने की कोशिश की जाती हैं।

फ्रैक्ल के अनुसार जब व्यक्ति अपनी जिंदगी की आध्यात्मिक या दार्शनिक समस्याओं एवं स्नेह तथा जीवन-मृत्यु आदि से संबंधित अर्थ में दिशा -विहीनता उत्पन्न हो जाती हैं, तो इससे अस्तित्वात्मक कुंठा उत्पन्न हो जाती हैं जिसे व्यक्ति पहले अपने स्तर से दूर करने की कोशिश करता हैं। जब व्यक्ति में कुंठा की मात्रा अत्यधिक हो जाती हैं जिससे वह उसके नियंत्रण से बाहर हो जाता हैं जिसे फ्रैक्ल ने न्यूजेनिक स्नायुविकृति कहा हैं। इस तरह की स्नायुविकृति में सचमुच में अर्न्तनोद अभिप्रेरक के बीच किसी तरह का संघर्ष नहीं पाया जाता हैं बल्कि व्यक्ति व्यक्ति नैतिक सिद्धांतों का एक टकराव पाया जाता हैं। ऐसे टकराव से उत्पन्न संघर्षो को दूर करना लोगो चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य हैं।

11.8 अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existental psychotherapy)

विन्सवैन्गर(Bisnwanger,1942) के अनुसार मनोविक्षिप्त विघटन का महत्वपूर्ण कारण विकृतिजन्य सामाजिक संबंध हैं। यह संबंधव्यक्ति पर अनेक हानिकारक प्रभाव डालते है। आपके अनुसार प्रत्येक

व्यक्ति अपनी संस्कृति और अपने समूह का अभिन्न अंग हैं। लैंग का विचार हैं कि व्यक्ति के आंतरिक आत्म और बाह्य आत्म के मध्य दरार का कारण जीवन की द्वन्द्वात्मक परिस्थितियां और सामाजिक मांगें हैं। मानसिक विकार व्यक्ति में उस समय उत्पन्न होते हैं। जब आंतरिक आत्म और बाह्य आत्म के मध्य दरार बढ़ जाती हैं। उनका विचार हैं कि मानसिक रोगों से ग्रस्त व्यक्ति की प्रतिक्रियाएं समग्रता की पुन:प्राप्ति का प्रयास मात्र हैं। इस प्रकार कि उपचार पद्धति में सर्वप्रथम इस बात पर बल दिया जाता हैं कि अपने अस्तित्व का अनुभव किस प्रकार करना हैं, और प्रत्येक व्यक्ति में अपने साथियों के प्रति भी उतरदायित्व का अनुभव करता हैं। वह अपने जीवन के प्रति क्या योगदान रखना चाहता हैं। अस्तित्ववादी मनोवैज्ञानिक मानव की निम्न चीजों पर भी बल देते हैं- संकटपूर्ण स्थिति, समकालीन संस्कृति से व्यक्ति तथा अवैयक्तीकरण।

इस उपचार पद्धति को अपनाने वाले चिकित्सक यह मानकर चलता हैं कि मनुष्य में निम्न विशेष ताएं होती हैं- जागरूकता, मननशक्ति, संकटपूर्ण स्थिति में कुछ कर सकने की योग्यता तथा उच्च मात्रा में स्वतंत्रता आदि। रोगी के लिए यह निर्णय लेना हैं कि वह निम्नांकित संप्रत्ययों को किस प्रकार करेगा- आत्म परिभाषा, आत्म वास्तवीकरण, जीवनमूल्यों की स्थापना आदि। मनोचिकित्सक इस बात पर बल देता हैं कि रोगी अपने अस्तित्व का अर्थ ढूंढने योग्य हो जाये और अपने अस्तित्व से संबंधितसमस्याओं के समाधान के हल ढूंढ ले।

11.9 मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा का मूल्यांकन

इस प्रकार स्पष्ट हुआ कि मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा में चिकित्सक कई तरह की प्रविधियों का उपयोग करके रोगी का उपचार करते हैं। इस प्रविधि प्रमुख लाभ व दोष निम्नांकित हैं जो मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के मूल्यांकन से पता चलता हैं।

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के लाभ (advantages)-

1- इस चिकित्सा में क्लायंट के किसी खास तरह के व्यवहार पर बल न डालकर उसे एक समग्र प्राणी के रूप में अध्ययन किया जाता हैं।
2- इस चिकित्सा में क्लायंट के आंतरिक बलों एवं अंत:शक्ति यों को समझने पर चूंकि बल डाला जाता हैं, अत: इसके द्वारा क्लांयट की समस्या को जड़ से उखाड़ फेंकने में काफी मदद मिलती हैं।
3- अस्तित्ववादी चिकित्सा रोगी में सच्चा आत्मज्ञान उत्पन्न करने में सक्षम होता हैं।
4- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा में क्लायंट या रोगी के अपने विचार या इच्छा को सर्वाधिक आदर किया जाता हैं।

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा के दोष (disadvantages)-

1- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा अस्पष्ट होने के साथ ही साथ अवास्तविक होता हैं। इसमें चिकित्सक अनिदेशात्मक तथा अनिर्णयात्मक हो सकता हैं?
2- इस चिकित्सा में नैदानिक परीक्षणों जिनके माध्यम से रोगी के पृष्ठभूमिय कारकों की पहचान की जाती हैं, परन्तु अधिक बल नहीं डाला जाता हैं।
3- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा की भाषा में काफी अस्पष्टता होती हैं।

4- आलोचकों का मत हैं कि इस चिकित्सा के परिणाम का मूल्यांकन सिर्फ क्लायंट तथा चिकित्सक ही और वह भी आत्मनिष्ठ ढ़ंग से ही कर सकते हैं।

5- मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा द्वारा केवल बुद्धिमान व्यक्तियों का ही उपचार किया जा सकता हैं।

इन दोषों के बावजूद मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा का अपना महत्व हैं। इस तरह की चिकित्सा में विभिन्न चिकित्सीय उपायों का एक उतम सेट मिलता हैं। रोजर्स की चिकित्सा पद्धति तथा गेस्टाल्ट चिकित्सा का योगदान इस दृष्टिकोण से विशेष रूप् से उल्लेखनीय हैं।

11.10 फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा (Freudian psychoanalytic therapy)

फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा को फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा कहा जाता हैं। इस चिकित्सा में व्यक्ति दमित इच्छाओं, चिंतन, संघर्ष एवं डर आदि पर मनोविश्लैशिक दृष्टिकोण से प्रकाष डाला जाता हैं। ऐसे संघर्ष, इच्छाओं, डर आदि को अचेतन से बाहर निकाल कर उसमें पर्याप्त सूझ विकसित करने की कोशिश की पाती हैं। ताकि उससे उत्पन्न होने वाले संवेगात्मक एवं समायोजन संबंधी कठिनाइयों को रोगी ठीक ढ़ंग से सुलझा सके। इस प्रविधि में चिकित्सक को मनोविश्लेषक या मनोविश्लेषक भी कहा जाता हैं। इस विधि को निर्देशात्मक चिकित्सा भी कहा जाता हैं।

11.11 फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के चरण

फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा कुछ खास चरणों(stages) में संपन्न की जाती हैं जो निम्नांकित हैं-

1- स्वतंत्र साहचार्य की अवस्था
2- प्रतिरोध का अवस्था
3- स्वप्न विश्लेषण की अवस्था
4- दिन प्रतिदिन के व्यवहारों की व्याख्या की अवस्था
5- स्थानान्तरण की अवस्था
6- समापन की अवस्था

इन अवस्थाओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1. **स्वतंत्र साहचार्य की अवस्था** (stage of free association)-

फ्रॉयड की चिकित्सा प्रणाली की सबसे पहली अवस्था स्वतंत्र साहचर्य की होती हैं। रोगी को एक मन्दप्रकाष कक्ष में आरामदेह कुर्सी या गद्दीदार कोच पर लेटा दिया जाता हैं और चिकित्सक रोगी की दृश्टि से ओझल होकर पीछे की और बैठ जाता हैं। चिकित्सक रोगी से कुछ देर सामान्य बातचीत का सौहार्द पूर्ण वातावरण स्थापित कर लेता हैं और रोगी से यह अनुरोध करता हैं कि मन में जो कुछ भी आता हैं। उसे बिना संकोच कहता जाए, चाहे वे विचार साथर्क हो या निरर्थक। रोगी की बातों को चिकित्सक ध्यानपूर्वक सुनता हैं यदि रोगी

को हिचकिचाहट होती हैं तो चिकित्सक उसकी मदद करता हैं। इस प्रविधि को स्वतंत्र साहचर्य कहा जाता हैं। जिसका उद्देश्य रोगी के अचेतन में छिपे अनुभवों, मनोलैंगिक इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों को कुदेरकर चेतन स्तर पर लाना हैं।

2. **प्रतिरोध की अवस्था** (stage of resistance)

प्रतिरोध की अवस्था स्वतंत्र साहचर्य के बाद की अवस्था होती हैं। जिसमें रोगी अपने मन में आने वाले किसी भी तरह के विचारों को विश्लेषक को सुनाता हैं, तो इसी प्रक्रिया में एक ऐसी अवस्था आ जाती हैं जहां वह अपने विचारों को चिकित्सक से व्यक्त नहीं करना चाहता हैं और वह अचानक चुप हो जाता हैं या बनावटी बातें करने लगता हैं। यह अवस्था ही प्रतिरोध की अवस्था कहलाती हैं। चिकित्सक प्रतिरोध की अवस्था खत्म करने की कोशिश करता हैं ताकि चिकित्सा में प्रगति हो सके। इसके लिए वह सुझाव, सम्मोहन, लिखकर विचार व्यक्त करने, पेंटिग, चित्रांकन आदि का सहारा लेता हैं। वह रोगी से घनिष्ठ संवेगात्मक संबंधस्थापित करता हैं ताकि रोगी प्रतिरोध इच्छाओं की अभिव्यक्ति आसानी से का सके।

3. **स्वप्न विश्लेषण की अवस्था**(stage of dream-analysis) -

रोगी के अचेतन में दमित प्रेरणाओं, बाल्यावस्था की मनोलैंगिक इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों को कुदेरकर चेतन स्तर पर लाने के लिए विश्लेषक रोगी के स्वप्न का अध्ययन एवं उसका विश्लेषण करता हैं। फ्रॉयड के अनुसार स्वप्न में व्यक्ति अचेतन की दमित इच्छाओं की पूर्ति करता हैं। अत: रोगियों के स्वप्नों का विश्लेषण करके चिकित्सक उनके अचेतन संघर्षों को जान पाते हैं। रोगी के स्वप्नों के अव्यक्त विषयों के अर्थ को विश्लेषक उन्हें समझाता हैं जिससे रोगी को अपने मानसिक संघर्षो के वास्तविक कारण को समझने में मदद मिलती हैं।

4. **दिन-प्रतिदिन के व्यवहारों की व्याख्या**(stage of interpretation of everyday behaviour) -

इस प्रक्रिया में चिकित्सक रोगी के दिनप्रतिदिन के सभी तरह के व्यवहारों चाहे वे तुच्छ से तुच्छ ही क्यों न हो, पर ध्यान देने की कोशिश करते हैं तथा उनका भी विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं। बोलने की भूलें, नामों को भूलना, लिखने की भूले, वस्तुओं को गलत स्थान पर रखना आदि दिनप्रतिदिन के कुछ ऐसे व्यवहार हैं जिनकी व्याख्या से व्यक्ति के अचेतन द्वन्द्वों का अंदाज होता हैं।

जैसे- यदि रोगी स्वप्न के स्पष्ट विषय को भूल जाता हैं तो विश्लेषक को यह शक हाक जाता हैं कि रोगी स्वप्न में सांकेतिक तथ्यों को छिपा रहा हैं और उसका संबंधरोगी के अचेतन मन से निश्चित हैं।

5. **स्थानान्तर की अवस्था** (stage of transference)-

चिकित्सीय सत्र के दौरान जैसे-जैसे रोगी एवं चिकित्सक के बीच अन्त:क्रिया होते जाती हैं, दोनों के बीच जटिल एवं सांवेगिक नये संबंधभी उभर कर सामने आ जाते हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि रोगी अक्सर अपने गत जिंदगी के अनुभव में जैसी मनोवृति शिक्षक, माता-पिता या दोनों के प्रति बना रखी होती हैं वैसी ही मनोवृति वह चिकित्सक के प्रति भी विकसित का लेता हैं। इसे ही स्थानान्तरण की संज्ञा दी जाती हैं। स्थानान्तरण

विकसित होने से रोगी शांत मन से एवं पूर्ण विश्वास के साथ अपने विचारों की अभिव्यक्ति करता हैं। उसे यह विश्वास हो जाता हैं कि चिकित्सक ऐसे व्यक्ति हैं जिनके सामने वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों के बारे में खुलकर अभिव्यक्त कर सकता हैं।

स्थानान्तरण के तीन प्रकार होते हैं-

1. **धनात्मक स्थानान्तरण** - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपने स्नेह एवं प्रेम की प्रतिक्रियाओं को दिखलाता हैं।
2. **ऋणात्मक स्थानान्तरण** - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपनी घृणा एवं अलगाव की प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करता हैं।
3. **प्रति स्थानान्तरण** - इसमें विश्लेषक ही रोगी के प्रति स्नेह, प्रेम एवं संवेगात्मक लगाव दिखता हैं।

   धनात्मक स्थानान्तरण से चिकित्सा का वातावरण और भी सोहार्द पूर्ण बन जाता हैं। और रोगी स्वयं का सुरक्षित अनुभव करता हैं तथा वह अचेतन की दमित इच्छाओं को खुलकर अभिव्यक्त करता हैं।

   ऋणात्मक स्थानान्तरण में चिकित्सक रोगी की घृणा एवं आक्रामक व्यवहारों का केन्द्र होता हैं यहां उन्हें काफी सूझ-बुझ से काम लेना पड़ता हैं ताकि चिकित्सा में प्रगति आगे की और बनी रहे।

   प्रतिस्थानान्तरण की स्थिति से विश्लेषक की अक्षमता का पता चलता हैं। ऐसे चिकित्सक या विश्लेषक को आदर्श नहीं माना जाता हैं।

6. **समापन की अवस्था** (stage of termination)-

   चिकित्सा के अन्त में चिकित्सक के सफल प्रयास से रोगी को अपने संवेगात्मक कठिनाईयों एवं मानसिक संघर्षों के अचेतन कारणों का अहसास होता हैं जिससे रोगी में अंर्तदृष्टि या सूझ का विकास होता हैं। रोगी में सूझ का विकास हो जाने से उसके आत्म-प्रत्यक्षण तथा सामाजिक प्रत्यक्षण में परिवर्तन आ जाता हैं। रोगी की मनोवृति, विश्वास एवं मूल्यों में धनात्मक परिवर्तन आता हैं तथा वह अपने व्यक्तिगत प्रेरणाओं को सही ढ़ंग से समझने लगता हैं। रोगी में सूझ का विकास हो जाने से चिकित्सक रोगी को धीरे-धीरे संबंधविच्छेद करने का प्रयास करता हैं। यहां चिकित्सक को एक महत्वपूर्ण सावधानी बरतनी पड़ती हैं, वह यह हैं कि संबंधविच्छेद वह अचानक न करे क्योंकि ऐसा करने से कभी-कभी रोगी में नये लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

11.12 अहम् वैलेशिक चिकित्सा (Ego analytic therapy)

मनोवैज्ञानिक का एक ऐसा समूह हैं जो फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित नियमों एवं संप्रत्ययों का एडलर के समान पूर्णत: अस्वीकृत न करके उसमें कुछ परिमार्जन किया हैं और अपनी चिकित्सा पद्धति में उपयोग किया हैं। इस समूह को अहं विश्लेषक कहा गया। इनमें हार्टमान(Hartmann) 1939, अन्ना फ्रॉयड(Anna Freud), क्रिस(Kris) 1950, इरिक्सन(Erikson) 1956 तथा रैपापोर्ट(Rapaport) मुख्य रूप से मशहूर हैं।

अहं विश्लेषकों द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा से कुछ मात्रा में ही भिन्न हैं जो इस प्रकार हैं-

1- अहं विश्लेषकों के चिकित्सा का लक्ष्य पुर्नशिक्षणीय होता हैं कि जबकि फ्रॉयडियन मनोविश्लेषिक चिकित्सा का लक्ष्य पुर्नसरचनात्मक होता हैं।
2- अहं विश्लेषकों की चिकित्सा में "शैशावास्था की अनुभूतियों तथा स्थानांतरण स्नायुविकृति पर फ्रॉयडियन मनोविश्लेषिक चिकित्सा की तुलना में कम बल डाला जाता हैं।
3- अहं-विश्लेषिक चिकित्सा में व्यक्ति में वर्तमान समस्याओं पर अधिक जबकि फ्रॉयडियन व्यक्ति के पूर्व अनुभवों को महत्व देते हैं।

अहं-विश्लेषिक चिकित्सा में निम्नांकित चरण (stages) सम्मिलित होते हैं-

1- क्लायंट के साथ सौहादर्पूर्ण संबंधस्थापित करके उनकी वर्तमान समस्याओं के बारे में उन्हैं बतलाने के लिए कहा जाता हैं।
2- चिकित्सक क्लायंट को इन समस्याओं के बारे में निर्मित ढ़ंग से तथा एक ऐसे सोच-समझ के साथ बतलाने के लिए कहते हैं कि उन्हें मनोविश्लेषण की पुरानी विधियों जैसे स्वप्न विश्लेषण तथा स्वतंत्र साहचर्य का उपयोग न करना पड़े तो उतम होगा।
3- चिकित्सक क्लायंट को विशेष सुझाव पुर्नशिक्षा देकर उनकी वर्तमान समस्याओं को सुलझाने तथा उसमें नयी दिशा तथा सूझ उत्पन्न करता हैं।
4- अन्त में जब क्लायंट समस्याओं से निबटने में अपने आप सक्षम हो जाता हैं, तो चिकित्सक धीरे-धीरे क्लायंट से मिलना कम करता है।

11.13 अहम् वैलेशिक चिकित्सा के गुण (Merits) तथा दोष (Demerits)

अहं-विश्लेषिक चिकित्सा के कुछ गुण एवं दोष हैं। इसके प्रमुख गुण या लाभ निम्नांकित हैं-

1- चिकित्सा में चूंकि क्लायंट के वर्तमान के बीच के संबंध को समझने पर बल डाला जाता हैं। अत: चिकित्सा का परिणाम स्थायी एवं प्रभावी होता हैं।
2- फोर्ड एवं अर्बन का मत हैं कि इसमें रोगी के चिकित्सीय संबंधमें पुर्नशिक्षा के माध्यम से विश्वास उत्पन्न किया जाता हैं। इसलिए इस चिकित्सा विधि द्वारा रोगी के कुसमायोजी व्यवहारों के लक्षण तेजी से दूर होते हैं।
3- इस चिकित्सा में चिकित्सक रोगी के व्यक्तित्व के भावात्मक पहलुओं तथा उनकी आपस की अंत:क्रियाओं को भी समझाता हैं, इसलिए इसके द्वारा की गयी चिकित्सा में समग्रता तथा गहनता का विशेष गुण होता हैं।

इन गुणों के बावजूद अहं-विश्लेषिक चिकित्सा के कुछ अवगुण भी हैं जो इस प्रकार हैं-

1- इस चिकित्सा प्रविधि में अंतरण तथा स्वतंत्र साहचर्य जैसी प्रविधि को महत्व नहीं दिया गया हैं।

2- इस चिकित्सा पद्धति में स्वप्न विश्लेषण जैसे महत्वपूर्ण प्रविधि का उपयोग न के बराबर किया गया हैं जिससे भी मनोवैज्ञानिकों ने इस पद्धति की वैद्यता पर आशका जताई हैं।

इन अवगुणों बावजूद भी अहं-विश्लेषिक चिकित्सा आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के बीच काफी लोकप्रिय हैं।

11.14 वस्तु-संबंधचिकित्सा (Object-relation therapy)

आधुनिक समय में मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा में एक महत्वपूर्ण विकल्प वस्तु-संबंधसिद्धान्त हैं। इस सिद्धांत का प्रतिपादन कई ब्रिटिश विश्लेषकों जिसमें फेयरबरन(Fairbairn) 1952, विनकोट(Winicott)1965, मार्गरेट मेहलर(Margaret Mahler) 1952 आदि प्रमुख हैं, द्वारा किया गया। वस्तु-संबंधसिद्धान्त मां-शिशु अंत:क्रिया से उत्पन्न होने वाले अंतवैयक्तिक संबंधतथा अहं(Ego) की शक्ति एवं संरचना पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाता हैं। जब इस संबंध का स्वरूप कुछ ऐसा होता हैं कि शिशु महत्वपूर्ण आरंभिक आवश्यकताओं की पहचान नहीं कर पाता हैं, तो उसमें संगठित सम्पूर्ण आत्मन् का विकास नहीं हो पाता हैं और आत्मन् दोषपूर्ण हो जाता हैं, जो शिशु में आगे चलकर व्यक्तित्व विकृति के रूप में अभिव्यक्त होता हैं।

चिकित्सा सत्र के दौरान विश्लेषक का मुख्य कार्य एक क्रियाशील, हार्दिक एवं परानुभूतिपूर्ण, आत्म-वस्तु के रूप में अपने आप को पेश करना होता हैं ताकि रोगी अपने शिशुकाल के प्रारंभिक आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति करने में प्रोत्साहित हो सके। इससे रोगी का आत्मन् पूरित होती हैं, और इस प्रक्रिया को आत्मपूरण कहा जाता हैं।

कोहट (Kohut) ने आत्मपूरण के लिए तीन तरह के आत्म-वस्तु हस्तांतरण को महत्वपूर्ण बतलाया हैं जो निम्नांकित हैं-

दर्पण हस्तातंरण- इस तरह के हस्तातंरण में आत्मवस्तु द्वारा आत्मप्रदर्शन की आवश्यकता तथा भव्य या प्रतापी आवश्यकता की पहचान की जाती हैं एवं उसकी प्रशंसा की जाती हैं।

आदर्शात्मक हस्तातंरण- इस तरह के हस्तांतरण में आत्मवस्तु द्वारा संरक्षण तथा शामक आवश्यकताओं की पहचान की जाती है एवं उसकी प्रशंसा की जाती हैं।

सर्वसम हस्तातंरण- इस तरह के हस्तांतरण में आत्मवस्तु द्वारा दूसरे व्यक्ति के साथ घनिष्ठता दिखाने की आवश्यकता की पहचान की जाती हैं तथा उसकी प्रशंसा की जाती हैं।

वस्तु-संबंधचिकित्सा में सम्मिलित प्रमुख चरण निम्नांकित हैं-

1- प्रथम चरण में रोगी के साथ विश्लेषक हार्दिक संबंधस्थापित करके एक उतम आत्म-वस्तु की भूमिका प्रदान करता हैं।
2- रोगी के शैशवाकाल के उन आरंभिक आवश्यकताओं की पहचान की जाती हैं जिसकी अपर्याप्त अभिव्यक्ति से वह संगठित आत्मन् विकसित करने में सफल नहीं हो सका। ऐसी आवश्यकताएं तीन प्रकार होती हैं- दर्पणात्मक, आदर्शात्मक और सर्वसमात्मक।
3- तीसरे चरण में एक ऐसा चिकित्सीय संबंध कायम करने की कोशिश की जाती हैं जिसे आवश्यकता तुष्टि संबंधकहा जा सके।

4- चौथे चरण में रोगी में यह ज्ञान विकसित होता हैं कि उसका वर्तमान व्यक्तित्व उलझन किस तरह आरंभिक सांवेगिक वचनों से उत्पन्न हुआ हैं।
5- पांचवे चरण और अंतिम चरण में विश्लेषक रोगी से अपना संबंध धीरे-धीरे विच्छेद कर लेते हैं।

11.15 वस्तु-संबंधचिकित्सा के गुण एवं दोष

वस्तु-विषय चिकित्सा के प्रमुख गुण(advantage) निम्नांकित हैं-

1- इसमें एक आवश्यकता तुष्टि संबंध विकसित होने पर बल डाला गया हैं। इससे रोगी में आरंभिक सांवेगिक वचनों की क्षतिपूर्ति तेजी से होती हैं।
2- इस चिकित्सा में अहं समर्थन तथा स्वीकृति पर अधिक बल डाला गया हैं। फलत: रोगी में मनोवैज्ञानिक आघात तेजी से दूर होते हैं।

इन गुणों के बावजूद इस चिकित्सा के कुछ परिसीमाएं हैं, जो इस प्रकार हैं-

1- वस्तु संबंध चिकिसा यद्यपि मनोगत्यात्मक विकल्पी चिकित्सा हैं, फिर भी इसका झुकाव मानवतावादी चिकित्सा की और अधिक हैं।
2- लेभाईन(Levine,1985) का मत हैं कि क्लासिकी मनोविश्लेशको ने वस्तुसंबंध चिकित्सा के परिणाम पर शक जाहिर करते हुए हैं कि रोगी की वर्तमान समस्याओं का कहां तक निदान हो पायेगा, क्योंकि इस चिकित्सा में केवल स्नेह एवं अनुराग पर बल डाला जाता हैं।

इन परिसीमाओं के बावजूद वस्तुसंबंध चिकित्सा अभी कुछ विश्लेषकों के बीच काफी लोकप्रिय हैं।

11.16 अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा (Interpersonal Psychodynamic therapy)

इस चिकित्सा पद्धति का प्रतिपादन हैरी स्टैक सुलिभान(Harry Stack Sullivan) द्वारा किया गया इस चिकित्सा में रोगी तथा उसके वातावरण के बीच अंत:क्रिया पर बल दिया जाता हैं। सुलिभान के अनुसार चिकित्सक अंत:वैयक्तिक संबंधों का विशेष ज्ञ प्रेक्षक होता हैं जो रोगी को यह स्पष्ट करता हैं कि किस तरह से उसका विशेष संज्ञान तथा संबंधित दोषपूर्ण व्यवहार शैली उसे अपनी जिन्दगी उत्तम ढ़ंग से जीने में कठिनाई उत्पन्न कर रहा है। जब रोगी इस पहलू को समझ लेता है तो वह अधिक समायोजनशील तरीकों से व्यवहार करने के लिये प्रेरित हो उठता है।

सुलिभान द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा में फोर्ड एवं अर्बन(Ford&Urban,1963) के अनुसार निम्नांकित चरण सम्मिलित होते है-

1- पहले चरण में चिकित्सक रोगी की प्रमुख समस्याओं की समीक्षा करता है।
2- दूसरे चरण में उन व्यवहारों का पता लगाया जाता है जो उसकी समस्या के आलोक में संगत होते हैं।
3- तीसरे चरण में समस्या के सामान्य रूप-रेखा या प्रकार के बारे में एक निर्णय लिया जाता है।
4- चौथे चरण में रोगी की सम्पूर्ण अनुक्रियाओं का सावधानीपूर्वक एवं विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

5- पांचवे चरण में रोगी की सम्पूर्ण अनुक्रियाओं का सावधानीपूर्वक एवं विस्तृत अध्ययन किया जाता है।
6- छठे चरण में रोगी को इन विभिन्न पैटर्नों के बारे में विस्तार रूप से बतलाया जाता है।
7- सातवें चरण में रोगी को इन दुश्चिताओं के मुख्य तथ्यों से अवगत कराया जाता है।
8- आठवें चरण में रोगी को उन दुश्चिंताओं का व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों से अवगत कराया जाता है।
9- नौवें चरण में यह देखा जाता है कि रोगी में चिन्ता की तीव्रता धीरे-धीरे कम हो जाती है क्योकि उसे अपनी चिन्ता का कारण समझ में आ जाता है।

स्पष्ट हुआ कि सुलीभान द्वारा प्रतिपादित चिकित्सा में रोगी के विभिन्न व्यवहारों पर क्रमबद्ध ध्यान देकर उनकी समस्याओं को दूर करने की कोशिश की जाती है। मनोगत्यात्मक अन्तरवैयक्तिक चिकित्सा का समकालीन उदाहरण क्लरमैन तथा विसमैन(Klerman&Weissman,1984) द्वारा प्रतिपादित अंर्तव्यक्तिक चिकित्सा है। इसमें सम्मिलित चरण लगभग वहीं है जो सुलिभान के चिकित्सा पद्धति में है तथा विषाद के रोगियों के लिये इसे अधिक लाभकारी बतलाया गया है।

11.17 अन्त:वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा के गुण एवं दोष

अन्तरवैयक्तिक चिकित्सा के निम्नांकित लाभ या गुण (advantages) बतलाये गये है -

1- इस तरह की चिकित्सा विषाद ,मनोदशा तथा व्यक्तित्व विकृतियों के रोगियों के उपचार के लिये काफी लाभदायक सिद्ध हुआ।
2- कौष तथा वुचर(Koss&Butcher,1996) के अनुसार चूंकि इसमें रोगी तथा चिकित्सक दोनों ही एक साथ कड़ी मेहनत करते है और विशिष्ट एवं नियन्त्रणीय लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित करते है, अत: इस चिकित्सा का परिणाम फ्रॉयडियन मनोश्चिकित्सा के परिणाम से कम प्रभावी नहीं होता पाया गया है।

इन गुणों के बावजूद इस चिकित्सा के कुछ अवगुण (Demerits) भी है जो इस प्रकार है-

1- इस तरह की चिकित्सा द्वारा दुर्भीति तथा मनोग्रस्ति-बाध्यता के रोगीयों का उपचार उत्तम परिणाम के साथ नहीं किये जाते है। विषमैन (Weissman,1989) ने अपने शोधों के आधार पर इस तथ्य की संपुश्टि किया है।
2- अन्तरवैयक्तिक चिकित्सा में चिकित्सक बहुत ध्यान देकर रोगी के कई व्यवहारों में से कुछ सीमित व्यवहारों को चुन लेता है। इसका परिणाम यह होता है कि ऐसे चिकित्सा में एक समय में रोगी के व्यवहारों, मनोवृतियों एवं भावों के सीमित प्रसार पर ही ध्यान दिया जा सकता है। इसमे अनावश्यक रूप से चिकित्सा के सम्पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति में बाधा पहुंचती है।
3- इन अवगुणों के बावजूद सुलिभान द्वारा प्रतिपादित अन्तरवैयक्तिक चिकित्सा कुछ विशेषज्ञों जैसे डिमासकियों, होरोविज, ग्रीनवर्ग आदि के बीच काफी लोकप्रिय रहा है।

सामान्य निश्कर्श(General Conclusion) : स्पष्ट हुआ कि फ्रॉयडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के मौलिक स्वरूप से कुछ लोगों ने बिलकुल ही हटकर तथा कुछ लोगों ने उनकी

चिकित्सा में कुछ परिमार्जन करके कई तरह के चिकित्सा पद्धतियों मनोविश्लेषण के विकल्प के तहत वर्णन किया गया हैं एडलर का वैयक्तिक चिकित्सा, युंग का वैश्लेशणात्मक चिकित्सा, अहं विश्लेशिक चिकित्सा, संक्षिप्त मनोश्चिकित्सा तथा अन्तरवैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा आदि प्रमुख है। इसमें अलावा ओटो रैक द्वारा प्रतिपादित इच्छा चिकित्सा को भी मनोविश्लेषण के विकल्प में रखा जाता है परन्तु उसकी लोकप्रियता सीमित होने के कारण उसकी चर्चा नहीं की गयी है। ओटो रैक फ्रॉयड से सम्बन्ध विच्छेद करने के बाद इच्छा चिकित्सा का प्रतिपादन किया। संक्षेप में इस चिकित्सा में अचेतन एवं रोगी के गत जिदगी के अन्वेषण को तुलनात्मक रूप से कम महत्व दिया जाता है। रैंक के अनुसार रोगी में उत्तम स्वास्थ बनाये रखने की जन्मजात इच्छा होती है और यही इच्छा से उसमें परिपक्व स्वतंत्रता का भाव उत्पन्न होता है। चिकित्सक रोगी के भीतर वर्द्धन के लिये छिपे अन्त: शक्ति का एक मददगार के रूप् में न कि अचेतन को खोजनबीन करने वाला मात्र के रूप में कार्य करता है। रैंक के इस विचार से आगे चलकर कार्ल रोजर्स नें प्रेरणा लेकर क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का प्रतिपादन किया।

11.18 सारांश

1- मनोगत्यात्मक चिकित्सा से तात्पर्य एक ऐसे मनोवैज्ञानिक उपचार दृष्टिकोण से होता है जिसमें क्लायंट या रोगी के व्यक्तित्व गतिकी पर मनोविश्लेषिक परिप्रेक्ष्य में बल डाला जाता है। फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित मनोगत्यात्मक चिकित्सा को मनोविश्लेषिक चिकित्सा कहा जाता है।

2- मनोविश्लेषिक चिकित्सा के मुख्य तीन उद्देश्य हैं जिसमें रोगी को अपनी समस्या में सूझ विकसित करना प्रमुख है। यही कारण है कि उसे सूझ-उन्मुखी चिकित्सा भी कहा जाता है।

3- मनोविश्लेषिक चिकित्सा प्रविधि के बहुत सारे विकल्प हैं जिनमें पांच प्रमुख विकल्पों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया है। वे पांच प्रमुख विकल्प है - युंग की विश्लेषणात्मक चिकित्सा, एडलर का वैयक्तिक चिकित्सा, अहं विश्लेषिक चिकित्सा, संक्षिप्त मनोश्चिकित्सा तथा अंर्तव्यैक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा।

4- प्रत्येक पांच वैकल्पिक चिकित्सा प्रविधियों की आलोचनात्मक व्याख्या अलग-अलग की गयी है।

11.19 प्रश्नोत्तर

1- चिकित्सा का मानवतावादी अनुभवात्मक उपागम से आप क्या समझते हैं?

2- मानवतावादी अनुभवात्मक चिकित्सा के लाभ तथा अलाभों का वर्णन कीजियें?

3- क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा क्या हैं? इसके लाभ तथा अलाभों का वर्णन कीजियें?

4- गेस्टाल्ट चिकित्सा के प्रमुख संप्रत्यय क्या हैं?

5- लोगो चिकित्सा क्या हैं?

6- अस्तित्ववादी चिकित्सा क्या हैं? इसकी परिसीमाएं बताइये।

7- निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट लिखिए-

   1- शर्तहीन धनात्मक सम्मान

   2- लोगो चिकित्सा

3- स्थानान्तरण की अवस्था

8- फ्रॉयडियन मनोविश्लेषिक चिकित्सा के गुण एवं दोष का वर्णन करे?

9- फ्रॉयडियन मनोविश्लेषिक चिकित्सा को चरणों का वर्णन कीजियें?

10-निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट लिखें-

1. अहं मनोविश्लेषिक चिकित्सा
2. वस्तु संबंधचिकित्सा
3. अंतवैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा

11. 20 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press

इकाई - 12

सामूहिक चिकित्सा तथा पारिवारिक चिकित्सा

Group therapy or family therapy

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 सामूहिक चिकित्सा

12.4 सामूहिक चिकित्सा के कारक

12.5 सामूहिक चिकित्सा के मॉडल

12.6 सामूहिक चिकित्सा का मूल्यांकन

12.7 पारिवारिक चिकित्सा का अर्थ

12.8 पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य

12.9 पारिवारिक चिकित्सा के प्रकार

12.10 पारिवारिक चिकित्सा की समस्याओं

12.11 पारिवारिक चिकित्सा का मूल्यांकन

12.12 सारांश

12.13 प्रश्नोत्तर

12.14 संदर्भसूची

12.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक चिकित्सा तथा पारिवारिक चिकित्सा पर प्रकाश डाला गया हैं। सामूहिक चिकित्सा में रोगियों का उपचार एक समूह में किया जाता हैं।रोगियों का यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का भी ही सकता हैं या फिर संबंधित व्यक्तियों का भी हो सकता हैं जब यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का होता हैं, तो सामूहिक तथा संबंधित व्यक्तियों का होता हैं तो पारिवारिक तथा वैवाहिक चिकित्सा की संज्ञा दी जाती हैं।

पारिवारिक चिकित्सा एक तरह की समूह चिकित्सा हैं जिसमें समूह के सदस्य अपरिचित्त न होकर एक ही परिवार के होते हैं। पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक पूरे परिवार की सामान्य समस्याओं जो अधिकतर सदस्यों में चिन्ता उत्पन्न कर रही होती हैं, की पहचान करता हैं तथा अन्य पारिवारिक नियमों का पता लगाता हैं तथा उस पर विचार विमर्श करता हैं। इसके बाद वह परिवार के सदस्यों को नये ढ़ंग से आपस में अन्त:क्रिया करने तथा संघर्षों को दूर करने के उपायों पर बल डाला जाता हैं।

इससे परिवार के सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति तथा परानुभूति बढ़ती हैं तथा समायोजन शक्ति में भी वृद्धि हो जाती हैं।

इन दोनों प्रकार की चिकित्सा का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत इकाई में आगे प्रस्तुत किया गया हैं।

12.2 उद्देश्य

- सामूहिक चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- सामूहिक चिकित्सा के मॉडल पर प्रकाश डाला गया हैं।
- सामूहिक चिकित्सा के मूल्यांकन के बारे में ज्ञान प्राप्त होगा।
- पारिवारिक चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य को जान सकेंगे।
- पारिवारिक चिकित्सा के प्रकारों को समझ सकेगे।
- पारिवारिक चिकित्सा की समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- पारिवारिक चिकित्सा का मूल्यांकन कर पायेंगे।

12.3 सामूहिक चिकित्सा (Group therapy)

सामूहिक चिकित्सा का अर्थ -

प्राय: देखा गया हैं कि अधिकतर मानसिक समस्याओं की उत्पति एवं संपोषण विशेष सामाजिक संदर्भ द्वारा होता हैं। इन सब भावनाओं के कारण नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा एक विशेष चिकित्सा पद्धति का प्रतिपादन किया गया जिससे सामूहिक चिकित्सा कहा गया हैं सामूहिक चिकित्सा, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हैं, वैसी चिकित्सा पद्धति को कहा जाता हैं जिसमें एक साथ कई रोगियों का उपचार किया जाता हैं दूसरे शब्दों में, इस तरह की चिकित्सा में रोगियों का उपचार एक समूह में किया जाता हैं।रोगियों का यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का भी ही सकता हैं या फिर संबंधित व्यक्तियों का भी हो सकता हैं जब यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का होता हैं, तो सामूहिक तथा संबंधितव्यक्तियों का होता हैं तो पारिवारिक तथा वैवाहिक चिकित्सा की संज्ञा दी जाती हैं।

सामूहिक चिकित्सा का शुभारंभ जोसेफ एच. प्राट (Joseph H.Pratt) द्वारा 1905 में क्षय रोग से ग्रस्त रोगियों को मेडिकल डाक्टरों के उपचार संबंधीसुझावों के साथ सहयोग दिखाने तथा उनके दबे मनोबल को उंचा करने के लिए किया गया था।

12.4 सामूहिक चिकित्सा के कारक (curative factors in group therapy) -

सामूहिक चिकित्सा के विभिन्न उपागम है। जिन पर सामूहिक चिकित्सा की उपयोगिता निर्भर करती हैं। यालोम ने ऐसे ग्यारह उपागमों का वर्णन किया हैं जो निम्नांकित हैं-

1- प्रत्याक्षा -

अन्य दूसरे तरह की मनोश्चिकित्सा के समान सामूहिक चिकित्सा भी क्लायंट में यह उम्मीद या प्रत्याक्षा उत्पन्न करता हैं कि उनकी सांवेगिक समस्याओं में परिवर्तन होगा और यह प्रत्याक्षा का सचमुच में चिकित्सीय मूल्य अधिक होता पाया गया हैं।

2- सूचना प्रदान करना -

सामूहिक चिकित्सा में क्लायंट चिकित्सा से मनोवैज्ञानिक क्षुब्धता, मनोगत्यातमकता, पुर्नबलन प्रसंभाव्यता आदि के बारे में सूचना प्राप्त करते हैं।

3- **सार्विकता** -

सामूहिक चिकित्सा में जब क्लायंट अन्य क्लायंट की समस्याओं के बारे में सुनता हैं, तो उसे पहली बार यह महसूस होता हैं कि उसकी समस्या, चिंता, आशंका का के सामने दूसरों की भी चिंता, आशंका , या समस्या हैं। जब क्लायंट यह अनुभव करता हैं कि वह अकेले नहीं इस तरह की समस्या से जुझ रहा हैं, तो इसका आधार उस पर चिकित्सीय दृष्टिकोण से उतम प्रभाव होता हैं।

4- परोपकारिता -

सामूहिक चिकित्सा में चिकित्सा समूह के सदस्यगण एक-दूसरे को राय देते हैं, तरह-तरह के प्रोत्साहन देते हैं तथा एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति दिखाते है। इस प्रक्रिया में राय, प्रोत्साहन तथा सहानुभूति दिखाने वालों मे यह भाव उत्पन्न होता हैं कि वे लोग अपने साथियों के कुछ दे सकते हैं जबकि राय, प्रोत्साहन एवं सहानुभूति प्राप्त करने वालों में यह भाव उत्पन्न होता हैं कि वह अकेला नहीं हैं। सामाजिक समर्थन के इस आदान-प्रदान से चिकित्सा काफी गुणकारी हो जाती हैं।

5- सामाजिक कौशल का विकास -

इस तरह की चिकित्सा में जब क्लायंट को समूह के अन्य सदस्यों से सुधारात्मक पुनर्निवेशन प्राप्त होता हैं, तो इससे वह अपने अंर्तव्यक्तिक व्यवहार के त्रुटियों को सुधार लेता हैं। इस तरह के सामाजिक कौशल के विकास से चिकित्सा के परिणाम को धनात्मक होने की संभावना तीव्र हो जाती हैं।

6- अनुकरणशील व्यवहार -

समूह चिकित्सक तथा समूह के अन्य सदस्य नये तरह के व्यवहार को सीखने के लिए एक उतम मॉडल के रूप में होते हैं।

7- प्राथमिक पारिवारिक समूह के सुधारात्मक सार -

सामूहिक चिकित्सा में समूह एक परिवार के समान होता हैं जिसमें चिकित्सक माता-पिता के जगह पर तथा अन्य सदस्य भाई-बहन के जगह पर होते हैं। इस तरह के समूह एक नये परिवार का रूप अपनाकर क्लायंट का मौलिक परिवार द्वारा उत्पन्न घाव एवं अवरोधों को दूर करते में सक्षम होता हैं।

8- अंर्तव्यक्तिता सीखना -

सामूहिक चिकित्सा में क्लायंट समूह के अन्य सदस्यों के साथ अंत:क्रिया करके अपने बारे में सूझ विकसित करते हैं तथा वे जिस तरह का संबंधविकसित करना चाहते हैं, उसके बारे में पहले से रहे विचार की समीक्षा करते हैं।

9- समूह समग्रता -

सामूहिक चिकित्सा में समूह में घनिष्ठता तथा 'होने' का भाव एक समग्र रूप से विकसित करता है जिससे क्लायंट को आराम एवं प्रोत्साहन प्राप्त होता हैं।

10-विरेचन -

समूह के सुराक्षात्मक वातावरण में सदस्यगण उन संवेगों एवं इच्छाओं को स्वतंत्र व्यक्त करते हैं जो वर्षो से उन्हें परेशान करते आये हैं।

11-अस्तित्ववादी कारक -

सामूहिक चिकित्सा में क्लायंट अन्य लोगों के साथ अन्त:क्रिया करने के बाद यह सीखते हैं कि व्यक्ति की जिंदगी भीतर से बहुत ठीक एवं साफ-सुथरा नहीं होता हैं यद्यपि अन्य लोगों का समर्थन बहुत ही मददगार साबित होता हैं, फिर भी वे मौलिक रूप से अकेले हैं। और उन्हें अपने से ही एक निर्णय होगा।

उक्त कारकों के होने से सामूहिक चिकित्सा की प्रभावशीलता में वृद्धि हो जाती हैं।

12.5 सामूहिक चिकित्सा के मॉडल या उपागम (Models or approaches of Group Therapy)

समूहिक चिकित्सा के कई मॉडल या उपागमो का वर्णन नैदानिक चिकित्सकों द्वारा किया गया हैं। इन मॉडल को निम्नांकित चार भागों में बांटा गया हैं-

1- मनोगतिकी सामूहिक मॉडल
2- व्यवहारपरक सामूहिक मॉडल
3- मानवतावादी सामूहिक मॉडल
4- समकक्षी आत्म-मदद समूह मॉडल

इन चारों प्रकार के मॉडल का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- मनोगतिकी सामूहिक मॉडल -

इस मॉडल में बाल्यावस्था में उत्पन्न मानसिक संघर्ष को ही मानसिक रोग का कारण माना जाता हैं तथा इस संघर्ष में रोगी में सूझ उत्पन्न करके उसका उपचार किया जाता हैं। वैयक्तिक चिकित्सा के समान मनोगतिकी चिकित्सा में भी व्यक्ति के प्राथमिक पारिवारिक समूह के सुधारात्मक स्तर तथा अंर्तव्यक्तिक सीखना पर अधिक बल डाला जाता हैं। इस चिकित्सा में भी प्रतिरोध, स्थानान्तरण तथा स्वप्न का विश्लेषण आदि प्रमुख हैं। चिकित्सक इस बात का ध्यान रखते हैं कि समूह के सदस्यगण क्या कहते हैं या क्या करते हैं तथा कुछ ऐसी व्याख्याएं दी जाती हैं जिनसे क्लायंट के वर्तमान समस्या का स्पश्टीकरण हो सके।

वोल्फ के सामूहिक चिकित्सा में 8 से 10 जिसमें महिला तथा पुरूष क्लायंट की संख्या बराबर बराबर होती हैं, का निर्माण किया जाता हैं। यह समूह सप्ताह में तीन बार मिलता हैं और प्रत्येक सत्र लगभग 90 मिनट का होता हैं। रोगी अपने भावों तथा दूसरों के प्रति अपनी भावनाओं को खुलकर अभिव्यक्त करता हैं। अपने-अपने स्वप्न को बताते हैं, प्रतिरोध तथा

स्थानान्तरण का विश्लेषण करते हैं। चिकित्सक आवश्यकतानुसार इन सबों की व्याख्या करके रोगी में सूझ उत्पन्न करते की भरपूर कोशिश करते हैं।

मनोनाटक (Psychodrama)

मनोनाटक एक प्रकार की सामूहिक चिकित्सा हैं जिसे मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के अंतर्गत रखा गया हैं। मनोनाटक का प्रतिपादन मोरेनो द्वारा किया गया। इस विधि में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता हैं ताकि उससे संबंधितसमायोजन की कठिनाइयों से वह अवगत हो सके। इसके लिए एक नाटकीय परिस्थिति तैयार की जाती हैं जिसमें रोगी के अलावा अन्य कई लोग होते है तथा जिनकी मदद से रोगी किसी भूमिका का अभिनय करता हैं। जैसे- किसी रोगी को पति के रूप में यदि कुछ समायोजन संबंधीकठिनाई हैं तो उससे पति की भूमिका करवायी जाएगी। परिस्थिति को नाटकीय बनाने के ख्याल से कोई नर्स पत्नी की भूमिका तथा चिकित्सक माता-पिता की भूमिका कर सकते हैं। मोरेनो ने मनोनाटक में भाग लेने वाले पात्रों का विशेष नामकरण किया हैं। जो इस प्रकार है-

1- नाटक का प्रधान अभिनेता
2- निर्देशक
3- सहायक अहम्
4- श्रोता या दर्शक

इन सब किरदारों की भूमिकाओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- नाटक का प्रधान अभिनेता -

मनोनाटक का प्रधान अभिनेता या पात्र स्वयं रोगी ही होता हैं। इस रोगी को अपने वास्तविक जीवन की समस्याएँ एवं कठिनाइयां जो उनमें चिंता उत्पन्न कर रही हैं, को प्रदर्शन करने हेतु भूमिका करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हैं।

2- निर्देशक-

मारेनो ने मुख्य चिकित्सक को निर्देशक कहा हैं। निर्देशक की देख-रेख में ही मनोनाटक का संचालन एवं क्रियान्वन होता हैं।

3- सहायक अहम् -

सहायक चिकित्सा कर्मचारीगण जैसे- नर्स, सहायक चिकित्सक तथा रोगी मिलकर सहायक अहम् की भूमिका निर्वाह करते हैं। सहायक अहम् का मुख्य कार्यप्रधान अभिनेता अर्थात् रोगी को अपनी भूमिका निर्वाह करने में पूर्ण सहायता प्रदान करता हैं। जैसे- किसी प्रधान अभिनेता को यदि भाई की भूमिका करना होता हैं तो सहायक अहम् में से कुछ बहन, माता-पिता आदि की भूमिका करके उसे अर्थात् रोगी को भाई की भूमिका का ठीक से निर्वाह करने में मदद करेंगे।

4- श्रोता या दर्शक -

श्रोता या दर्शक की भूमिका में अन्य व्यक्तियों या रोगियों को रखा जाता हैं।

मनोनाटक के रंगमंच पर प्रधान या मुख्य अभिनेता अर्थात् रोगी स्वाभाविक ढ़ंग से अपनी सांवेगिक कठिनाईयों की अभिव्यक्ति कर सके, इसके लिए पर्याप्त माहौल तैयार किया जाता हैं। मंच पर पात्रों को कब और किस तरह का संवाद बोलना होता हैं। इसके लिए किसी

प्रकार का अनुबोधन निर्देशक द्वारा नहीं किया गया हैं। इस तरह से रंगमंच पर जो अभिनय होता हैं वह स्वतंत्र एवं पूर्वाभ्यासरहित होता हैं और फ्रॉयड के मुक्त साहचर्य के समान ही होता हैं। इस तरह के अभिनय से रोगी की दमित एवं सांवेगिक कठिनाइयों प्रस्फुटित होती हैं।

मनोनाटक प्रविधि उपयोग (ues of psychodrama)

मनोनाटक का उपयोग वहां अधिक लाभकारी होती हैं जब रोगी चिकित्सा की अन्य विधियों में भाग लेने से इन्कार करने देता हैं या किसी कारणवश ले सकने में असमर्थ रहता हैं ऐसे रोगियों को मनोनाटक में दर्शक या श्रोता के रूप में पहले पहले रखा जाता हैं, और स्वयं ही वह मुख्य अभिनेता या रोगी की भूमिका करने हेतु तैयार हो जाते हैं मनोनाटक का यह एक प्रमुख लाभ माना गया हैं। इस लाभ के बावजूद इस विधि की कुछ परिसीमाएं हैं जैसे कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मानना हैं कि चिकित्सा की इस विधि को स्वतंत्र चिकित्सा विधि के रूप में न प्रयोग का सहायक चिकित्सा विधि के रूप में ही किया जाना चाहिए क्योंकि इस विधि के द्वारा केवल सतही चिकित्सा संभव हैं गहन चिकित्सा नहीं की जा सकती हैं। इसकी दूसरी परिसीमा यह हैं कि इसमें रोगी को उसकी इच्छा एवं अभिरूचि के अनुरूप भूमिका नहीं होने पर इस तरह की चिकित्सा व्यर्थ साबित होती हैं।

संव्यवहार विश्लेषण (transactional analysis)

संव्यवहार चिकित्सा एक ऐसी प्रक्रिया हैं जिसमें समूह में व्यक्तियों के विभिन्न पहलूओं के बीच होने वाले अंत:क्रियाओं का विश्लेषण किया जाता हैं। इस विश्लेषण का केन्द्र बिन्दू व्यक्ति के अहम् अवस्था के तीन पहलू होते हैं। बर्नी के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में तीन अहम् अवस्थाएं होती हैं- चाइल्ड अह्म अवस्था, परेन्ट अह्म अवस्था तथा एडल्ट अवस्था।

चाइल्ड अवस्था-

व्यक्तित्व के ऐसे भाग में होता हैं जिसमें बाल्यावस्था की भावनाओं की प्रधानता होती हैं। जैसा कि उपाहं आवेगों में होता हैं।

एडल्ट अवस्था-

व्यक्तित्व के वैसे हिस्से से होता हैं जो सूचना का संसाधन करता हैं वास्तविक संदर्भ के आलोक में करता है। जैसा कि अहम् करता हैं।

पेरेन्ट अवस्था-

व्यक्तित्व के उस भाग से होता हैं जो माता-पिता एवं अन्य समान मॉडल के साथ अंत:क्रिया करने से उत्पन्न नैतिक विचारों पर आधारित होता हैं जैसा पराहं की स्थिति में होता हैं।

संव्यवहार चिकित्सा में चिकित्सक समूह के सदस्यों की अंतक्रियाओं का विश्लेषण करते हैं तथा सदस्यों को उन अहम् अवस्थाओं को समझने में मदद करते हैं जिनके सहारे वे एक-दूसरे के साथ बातचीत करके अपनी इच्छाओं और भावनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। अत: इस चिकित्सा में कुसमायोजित व्यवहारों के समूह के सदस्यों को इस ढ़ंग से अंत:क्रिया करने के लिए प्रेरित किया जाता हैं कि वे ठीक ढ़ंग से संचार कर सके।

2- **व्यवहार सामूहिक चिकित्सा मॉडल-**

इस मॉडल में व्यवहार चिकित्सा प्रविधियों का उपयोग रोगियों के एक समूह में किया जाता हैं। इसमें सामूहिक असंवेदीकरण सत्र चलाया जाता हैं। तथा रोगियों को एक समूह में आराम प्रशिक्षण दिया

जाता हैं तथा सामान्य चिंताओं पदानुक्रम तैयार किया जाता हैं। और उसे दोहराया जाता हैं । जैसा कि व्यवहार चिकित्सा के अंतर्गत होता हैं।

इस तरह के मॉडल के तहत निम्नांकित दो तरह की चिकित्सा पर सर्वाधिक बल डाला जाता हैं।

1- सामूहिक कौशल प्रशिक्षण -

सामूहिक कौशल प्रशिक्षण की मान्यता हैं कि व्यवहार से संबंद्ध कई समस्याओं का कारण सांवेगिक संघर्ष नहीं होता हैं बल्कि विशेष अंतवर्यक्तिक परिस्थिति जैसे किसी बिंदु पर आलोचना करना तथा विपरित लिंग के व्यक्तियों के प्रति अनुक्रिया करना आदि में सुविज्ञता में कमी के कारण उत्पन्न होता हैं।

सामूहिक कौशल प्रशिक्षण में ऐसी परिस्थितियों के प्रति चिकित्सक क्लायंट को व्यवहार रिहर्सल के माध्यम से यह सीखलाता हैं कि लक्षित व्यवहार को कैसे करना चाहिए तथा उस व्यवहार को करके क्लायंट को बतलाता हैं तथा उन परिस्थितियों में उनका अभ्यास करने के लिए करता हैं जिसमें उन्हें कइिनाई का ससमना करना पड़ता हैं।

सामूहिक कौशल प्रशिक्षण को वैयक्तिक या सामूहिक किसी भी परिस्थिति में संपन्न किया जा सकता हैं। जब इसे एक समूह में किया जाता है, तो यह सामूहिक चिकित्सा का प्रारूप लेता हैं।

2- निश्चयात्मकता प्रशिक्षण -

सामूहिक निश्चयात्मकता प्रशिक्षण में क्लायंट अपनी समस्याओं पर विचार-विमर्श निश्चयात्मकता के साथ चिकित्सक के निर्देशन में करते हैं तथा उन परिस्थितियों में निश्चयात्मकता अनुक्रियाओं का भूमिका निर्वाह होता हैं। इस तरह से क्लायंट उस व्यवहार को बार-बार तब तक करता हैं जब तक क्लायंट उस व्यवहार को ठीक ढ़ंग से न कर लेता हैं। इसके अतिरिक्त चिकित्सक कभी-कभी क्लायंट को कुछ गृह कार्य भी देते हैं ताकि वे उसका घर पर अभ्यास करके जल्दी उस व्यवहार को करना सीख लेता हैं।

3- मानवतावादी सामूहिक चिकित्सा मॉडल-

मानवतावादी सामूहिक चिकित्सा मॉडल सामूहिक चिकित्सा का एक प्रमुख मॉडल हैं। इस तरह की चिकित्सा में परोपकारिता तथा अन्तरवैयक्तिक सीखना पर अधिक बल डाला जाता हैं।

मानवतावादी समूह में निम्नांकित तीन तरह के मॉडल पर प्रकाश डाला जाता हैं-

1- भिड़ंत समूह मॉडल
2- टी-समूह मॉडल
3- गेस्टाल्ट समूह मॉडल

इनका वर्णन इस प्रकार हैं-

1- भिड़ंत समूह मॉडल-

इस तरह के समूह का मुख्य उद्देश्य लोगों में व्यक्तिगत वर्द्धन को बढ़ाना हैं। इस समूह में क्लायंट केंद्रित चिकित्सा का अधिक से अधिक पालन किया जाता है। समूह का नेता एक ऐसा परानुभूतिक सामूहिक वातावरण तैयार करता हैं। जिसमें सदस्यों को सम्मानित करता हैं तथा साथ-ही-साथ उन्हें

अपने किसी भी तरह के निर्णय से मुक्त रखता हैं। इसकी परिस्थिति काफी असंरचित्त होती हैं तथा सदस्यों स्वायतता अधिक होती हैं तथा पारस्परिक विश्वास विकसित होने लगता हैं। इस विश्वास से व्यक्ति अपने वास्तविक भाव अभिव्यक्त करता है। जिससे बाद में आत्म स्वीकृति उत्पन्न होती हैं तथा आंतरिक अंत:शक्ति भी मजबूत होती है।

2- टी समूह मॉडल-

टी समूह में सदस्यों को एक-दूसरे के प्रति उभरते वर्तमान संबंधों पर ध्यान देने के लिए चिकित्सक कहता हैं। इसमें सदस्यों की संख्या 10 से 20 तक होती हैं। सदस्य के रूप में उन व्यक्तियो को सम्मिलित किया जाता हैं जिन्हें समस्याओं तो नहीं हैं पंरतु कुछ की कमी अवश्य महसूस होती हैं तथा उन्हें यह भी अनुभव होता हैं कि जितनी घनिष्ठता तथा उतेजनशीलता के साथ उसे जीना चाहिए था, वह नहीं जी रहा हैं। इस सामूहिक चिकित्सा मॉडल में सदस्यों को शारीरिक सम्पर्क न करके शाब्दिक प्रविधियों द्वारा उन्हें प्रशिक्षित किया जाता हैं।

3- गेस्टाल्ट मॉडल-

इस तरह की चिकित्सा में समूह की क्रियाविधि में समूह का प्रत्येक सदस्य एक विशेष स्थान पर बैठता हैं तथा समूह का नेता उससे तरह तरह के प्रश्न पुछता हैं। जिनका उतर उन्हें देना होता हैं। समूह के अन्य सभी सदस्य चिकित्सक तथा सदस्य की अन्त:क्रिया का प्रेक्षण करते हैं। इस तरह बारी बारी से प्रत्येक सदस्य को उस विशेष जगह बिठाकर चिकित्सक द्वारा प्रश्न पुछे जाते हैं। सदस्य को उस समय अपने भीतर उत्पन्न अनुभूतियों एवं संवेदनों पर विशेष ध्यान देने के लिए कहा जाता हैं।

इस तरह भिड़ंत समूह चिकित्सा में कभी-कभी चिकित्सा तथा सदस्य विशेष तरह की भूमिका करके अन्त:क्रिया करते हैं।

4- समकक्षी आत्म -मदद समूह चिकित्सा मॉडल -

इस मॉडल के अंर्तगत जिन व्यक्तियों में एक समान समस्याओं होती हैं, वे एक साथ मिलकर एक समूह का निर्माण करते हैं जो आपस में बिना किसी चिकित्सा की मदद से उसपर विचार-विमर्श करते हैं और उसका एक समाधान ढूंढते हैं। आजकल कई तरह की समस्याओं के निदान के लिए आत्म मदद समूह का निर्माण किया जा रहा हैं। जैसे- कैंसर के रोगियों का समूह, विधवाओं का समूह, अल्कोहल पीने वाले पति-पत्नी का समूह आदि द्वारा आत्म समूह का निर्माण करके अपनी-अपनी समस्याओं को कम करने की कोशिश की गयी हैं।

स्पष्ट हुआ हैं कि सामूहिक चिकित्सा के कई मॉडल या उपागम हैं। इनमें से कौनसा मॉडल का चिकित्सक उपयोग करता हैं। यह बहुत कुछ क्लायंट की समस्या पर निर्भर करता हैं।

12.6 सामूहिक चिकित्सा का मूल्यांकन

सामूहिक चिकित्सा का मूल्यांकन करने से ज्ञात होता हैं कि इस चिकित्सा के कुछ लाभ तथा दोष हैं। इसके प्रमुख लाभ (advantage) निम्नांकित हैं-

1- सामूहिक चिकित्सा विभिन्न श्रेणियों के रोगियों के लिए गुणकारी पायी गयी हैं। इसका परिणाम लम्बे समय तक बना रहता हैं।

2- सामूहिक चिकित्सा में रोगियों को सामान्य कौशल तथा अनुभूतियों को बताना काफी आसान होती हैं ताकि उनमें उनके प्रति धनात्मक मनोवृति उत्पन्न हो सके।

3- सामूहिक चिकित्सा दूसरों पर आधारित व्यक्ति तथा आत्मनिर्भर दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए लाभकारी होती हैं।

4- सामूहिक चिकित्सा में कम समय में अधिक लोगों का उपचार संभव हैं। अत: इसमें श्रम एवं समय दोनों की बचत होती हैं।

5- समूह के सदस्य एक-दूसरे के साथ सांवेगिक अभिव्यक्ति खुलकर करते हैं जिनसे उनका संवेगात्मक तनाव कम हो जाता हैं। इससे कुसमायोजित व्यवहार के लक्षण तेजी से दूर हो जाते हैं।

सामूहिक चिकित्सा के दोष (disadvantage) -

1- सामूहिक चिकित्सा से गंभीर रूप से ग्रसित मानसिक व्यक्तियों का उपचार करना असंभव होता हैं।

2- सामूहिक चिकित्सा में चिकित्सक एक साथ कई रोगियों का उपचार करता हैं इसलिए वह सभी पर ध्यान नहीं दे पाता हैं इससे सामूहिक चिकित्सा की प्रभावशीलता अपने आप कम हो जाती हैं।

इन दोषों के बावजूद भी सामूहिक चिकित्सा का उपयोग आजकल काफी बढ़ गया हैं और इसकी लोकप्रियता भी काफी बढ़ी हैं।

12.7 पारिवारिक चिकित्सा का अर्थ (Meaning and process of family Therapy)

पारिवारिक चिकित्सा एक तरह की समूह चिकित्सा हैं जिसमें समूह के सदस्य अपरिचित न होकर एक ही परिवार के होते हैं। पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक पूरे परिवार की सामान्य समस्याओं जो अधिकतर सदस्यों में चिन्ता उत्पन्न कर रही होती हैं, की पहचान करता हैं तथा अन्य पारिवारिक नियमों का पता लगाता हैं तथा उसपर विचार विमर्श करता हैं। इसके बाद वह परिवार के सदस्यों को नये ढ़ंग से आपस में अन्त:क्रिया करने तथा संघर्षों को दूर करने के उपायों पर बल डाला जाता हैं। इससे परिवार के सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति तथा परानुभूति बढ़ती हैं तथा समायोजन शक्ति में भी वृद्धि हो जाती हैं।

पारिवारिक चिकित्सा का प्रारंभ परिवार के ऐसे सदस्य की पहचान करके होता हैं जो समस्या से सर्वाधिक ग्रस्त हैं और फिर परिवार के अन्य सदस्यों को बुलाया जाता हैं। यह सत्र माता पिता से प्रारंभ होकर एक एक कर अन्य सदस्यों को बुलाया जाता हैं। अन्त में सामूहिक रूप से विचार विमर्श किया जाता हैं।

12.8 पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य (Goals of family Therapy)

पारिवारिक चिकित्सा के कुछ निश्चित लक्ष्य हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने निम्नांकित प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन किया हैं-

1- समस्याग्रस्त पहलुओं की पहचान-

पारिवारिक चिकित्सा का पहला लक्ष्य उस पहलू की पहचान करना होता हैं जो समस्या उत्पन्न कर रहा है और जो परिवार के विभिन्न व्यक्तियों के संबंध के साथ जुड़ा हुआ हैं।

इसमें चिकित्सक यह तय करते हैं कि परिवार का कौन सदस्य समस्या उत्पन्न कर रहा है और वह किन-किन सदस्यों को अधिक प्रभावित कर रहा हैं।

2- उन्नत संचार-

पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य क्लायंट तथा उनके परिवार के सदस्यों के बीच संचार को उन्नत बनाना होता हैं ताकि वे लोग आपस में बिना किसी अवरोध के बातचीत कर सके तथा किसी भी समस्या का समाधान आसानी से कर सके।

3- उन्नत स्वायतत्ता एवं वैयक्तिता-

पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य क्लायंट में स्वायतत्ता की भावना को उत्पन्न करना होता हैं ताकि वह अधिक से अधिक आत्मनिर्भर होकर कोई निर्णय कर सके। यह गुण विकसित होने से उसमें आत्म सम्मान का भाव विकसित होता हैं जिससे उसमें उतम वैयक्तिता की अवस्था उत्पन्न हो जाती हैं।

4- उन्नत परानुभूति-

पारिवारिक चिकित्सक का उद्देश्य यह भी होता हैं कि वह न केवल क्लायंट की बल्कि परिवार के अन्य संबंधों में परानुभूति की क्षमता को विकसित कर सके ताकि पारिवारिक संबंधमें काफी सुधार हो सके और क्लायंट का व्यक्तिगत प्रतिरोध आदि दूर हो सके।

5- लचीला नेतृत्व-

पारिवारिक चिकित्सा सत्र के दौरान चिकित्सक एक इस तरह की कार्यशैली अपनाता हैं जो सत्र के समायोजी हो। इससे पारिवारिक चिकित्सा के परिणाम को अनुकूल होने की संभावना अधिक हो जाती हैं।

6- उन्नत भूमिका सहमति-

पारिवारिक चिकित्सा में देखा गया हैं कि क्लायंट की समस्या का कारण उसके परिवार के सदस्यों की भूमिकाओं में अस्पष्टता होती हैं। सदस्यों को यह मालूम नहीं रहता हैं कि उनके परिवार के सदस्यों की क्या अपेक्षाएं है। पारिवारिक चिकित्सा में सदस्यों की भूमिकाओं को परिभाषित करके उनके बीच के मानसिक संघर्ष को दूर करता हैं।

7- संघर्ष को कम करना-

पारिवारिक चिकित्सा का एक उद्देश्य क्लायंट का परिवार के अन्य सदस्यों के बीच होने वाला वाद-विवाद तथा संघर्ष को कम करना होता हैं। इसके लिए चिकित्सक सत्र के दौरान एक शिक्षक की भूमिका निभाता हैं।

8- वैयक्तिक रोग सूचक उन्नति-

पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक यह भरपूर कोशिश करता हैं कि क्लायंट के सभी तरह के मनोवैज्ञानिक लक्षणों की पहचान करके उन्हें यथा संभव दूर कर दिया जाये।

9- उन्नत वैयक्तिक कार्य निष्पादन-

पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य न केवल क्लायंट बल्कि उसके परिवार के अन्य सदस्यों के कार्य के कार्य निष्पादन को उन्नत बनाना होता हैं। चिकित्सक यह कोशिश करते हैं कि चिकित्सा सत्र तथा वास्तविक कार्य परिस्थिति में भी इनका निष्पादन उन्नत हो तथा उनमें पर्याप्त समायोजनशीलता हो।

इस प्रकार स्पष्ट हुआ हैं पारिवारिक चिकित्सा के कई लक्ष्य हैं। एक सफल चिकित्सक इन लक्ष्यों की पूर्ति का सर्वाधिक प्रयास करता हैं।

12.9 पारिवारिक चिकित्सा के प्रकार (Types or Forms of family Therapy)

पारिवारिक चिकित्सा के कई प्रारूप या प्रकार हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार पारिवारिक चिकित्सा के निम्नांकित 10 प्रकारों का वर्णन किया गया हैं-

1- संयुक्तपारिवारिक चिकित्सा -

इस चिकित्सा में एक ही चिकित्सक द्वारा परिवार के सभी सदस्यों का एक साथ प्रेक्षण किया जाता हैं। संयुक्त पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य दोषपूर्ण संचार, अंत:क्रियाओं तथा परिवार के सदस्यों के संबंधोंको उन्नत बनाना होता हैं तथा एक ऐसा पारिवारिक तंत्र को जन्म देना होता हैं जो प्रत्येक सदस्य की आवश्यकताओं को ठीक ढ़ंग से पूर्ति कर सके। संयुक्त पारिवारिक चिकित्सा के कुछ प्रारूप में चिकित्सक एक निष्क्रिय एवं अनिर्देशात्मक भूमिका निभाता हैं परंतु कुछ विशेष कार्य करता हैं, सत्र के वार्तालाप को निर्देशित करता हैं, परिवार के सदस्यों को कुछ कार्य करने के लिए देता हैं, तथा उत्तम मानवीय संबंधोंके लिए सीधे निर्देश भी जारी करता हैं।

2- समवर्ती पारिवारिक चिकित्सा -

इस तरह की पारिवारिक चिकित्सा में एक ही चिकित्सक परिवार के सभी सदस्यों से विचार - विमर्श करता हैं परंतु सबसे अलग - अलग वैयक्तिक सत्र में। इस तरह के चिकित्सा का लक्ष्य वही होता हैं जो संयुक्त पारिवारिक चिकित्सा का होता हैं। चिकित्सक मुख्य क्लायंट के साथ परम्परागत मनोश्चिकित्सा करता हैं परन्तु यदा कदा परिवार के अन्य सदस्यों को भी बातचीत के लिए सत्र में बुला लेता हैं। इस तरह की चिकित्सा से चिकित्सीय प्रक्रिया में विशेष मदद मिलती हैं।

3- सहयोगी पारिवारिक चिकित्सा -

इस पारिवारिक चिकित्सा की मुख्य विशेषता यह हैं कि यहाँ परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये एक अलग चिकित्सक कार्यरत होते हैं। इसके बाद चिकित्सक आपस में मिलकर क्लायंट व उसके परिवार के बारे में संयुक्त रूप से विचार - विमर्श करके कोई निश्चित सुझाव व राय देते हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि पारिवारिक इकाई के साथ दो या दो से अधिक चिकित्सकों द्वारा भी प्रेक्षण किया जाता हैं।

4- वैवाहिक या युग्म चिकित्सा -

वैवाहिक चिकित्सा में पति तथा पत्नी को चिकित्सक एक साथ चिकित्सा सत्र में बुलाता हैं तथा इस चिकित्सा का केन्द्र बिन्दू इन दोनों के क्षुब्ध वैवाहिक संबंधहोता हैं न कि किसी प्रकार की कोई स्नायुविकृत समस्या। चिकित्सक का उद्देश्य पति-पत्नी के बीच टूटे हुए संबंधोंको फिर से कायम करता होता हैं।

5- मनोगतिकी पारिवारिक चिकित्सा -

निकोल्स एवं स्वाज ने मनोगतिकी पारिवारिक चिकित्सा के उद्देश्य को इस प्रकार से अंकित किया हैं, 'मनोविश्लेषणात्मक पारिवारिक चिकित्सा का लक्ष्य परिवार के सदस्यों

को अचेतन के प्रतिबंधों से मुक्त करना होता हैं ताकि वे समग्र रूप से एक -दूसरे के साथ वर्तमान वास्तविकताओं न कि गत अचेतन प्रतिमाओं के आधार पर स्वस्थ रूप से अंत:क्रिया कर सके।' चिकित्सा सत्र में चिकित्सक के साथ स्थापित स्थानांतरित ईष्या करते हैं जो सांवेगिक कठिनाई पैदा करता हैं।

6- व्यवहारपरक पारिवारिक चिकित्सा -

इस तरह की पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक पारिवारिक समस्याओं का व्यवहारपरक विश्लेषण करता हैं। इससे चिकित्सक को उन व्यवहारों के बारे में पता चल जाता हैं जिनकी बारंबारता को बढ़ाने या घटाने की जरूरत हैं। इस तरह के विश्लेषण से यह पता चलता हैं कि अवांछित व्यवहार के पीछे छिपे पुनबर्लन क्या हैं या किस तरह के पुनर्बलन से वांछित व्यवहार में वृद्धि या मजबूती हो सकती हैं। इसके बाद चिकित्सक चिकित्सीय प्रक्रिया प्रारंभ करता हैं जिसमें परिवार के सदस्यों को एक-दूसरे के लिए उचित्त पुर्नबलन प्रदान करने के लिए कहा जाता हैं। ताकि वे लोग वांछित व्यवहार कर सके।

7- नेटवर्क पारिवारिक चिकित्सा -

इस तरह की पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक क्लायंट के जिंदगी के सभी महत्वपूर्ण सदस्यों के पूरे नेटवर्क का प्रेक्षण करता हैं तथा उनकी अंत:क्रियाओं का विश्लेषण करके समस्या का समाधान करता हैं इसमें क्लायंट के परिवार के सदस्य ही नहीं बल्कि उनके दोस्त, पास-पडोस के लोग एवं उनके नियोक्ता आदि को सम्मिलित किया जाता हैं और उनसे विचार लिये जाते हैं।

8- बहुप्रभाव पारिवारिक चिकित्सा -

इस तरह की पारिवारिक चिकित्सा में चिकित्सक का एक दल पूरे परिवार के सदस्यों के साथ आपस में हुई अंत:क्रियाओं का काफी गहराई में प्रेक्षण करता हैं। इसके बाद परिवार के प्रत्येक सदस्य के साथ वैयक्तिक सत्र में उनकी अंत:क्रियाओं का विश्लेषण करके उनकी समस्याओं की पहचान की जाती हैं। इसमें दल द्वारा मुख्यत: विवाह, प्राधिकार की भूमिका, बच्चों का परिवार के प्रति विचार तथा अन्य समान बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाता हैं और समस्या का समाधान ढूंढा जाता हैं।

9- बहु प्रभाव पारिवारिक चिकित्सा -

इस तरह की चिकित्सा में कई युगल जोडियों या परिवारों को मिलाकर एक समूह तैयार किया जाता हैं जिनकी एक चिकित्सक की देखरेख में उनकी उलझनों एवं समस्याओं की पहचान करके उनका समाधान ढूंढा जाता हैं। इस चिकित्सा में पारिवारिक व सामूहिक चिकित्सा के बीच एक तरह का क्रास होता दिखाई देता हैं।

10-संरचनात्मक पारिवारिक चिकित्सा -

इस चिकित्सा में चिकित्सक परिवार की इकाई को विभिन्न अंतबर्द्ध भूमिकाओं के एक सेट के रूप में विश्लेषित करता हैं। इसमें चिकित्सक सक्रिय तो अवश्य रहता हैं परंतु निर्देशात्मक भूमिका नहीं करता हैं। और परिवार के वर्तमान अंत:क्रियाओं पर अधिक ध्यान देता हैं।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि पारिवारिक चिकित्सा के कई प्रकार हैं। क्लायंट एवं परिवार की समस्या के अनुरूप पारिवारिक चिकित्सा का विशेष प्रकार का प्रारूप अपनाकर चिकित्सा समस्या को दूर करने की कोशिश करता हैं।

12.10 पारिवारिक चिकित्सा की समस्याएं (Problems of family Therapy)

पारिवारिक चिकित्सा में कुछ समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं जो निम्नांकित हैं -

1- पारिवारिक चिकित्सा सत्र में सदस्यों में तीव्र संवेग, नकारात्मक भाव तथा आक्रमकता आदि की खुली अभिव्यक्ति से परिवार की एकता पर आंच आने लगती हैं। जिससे पारिवारिक चिकित्सा चिकित्सक के लिए एक सिर दर्द बन जाती हैं।

2- पारिवारिक चिकित्सा में कभी-कभी चिकित्सक जिस व्यक्ति को रोगी समझता हैं और उसे पता चलता हैं कि अतिगंभीर रोगी कोई और दूसरा सदस्य हैं तो चिकित्सक के लिए यह समस्या उठ खड़ी होती हैं कि वास्तविक रोगी किसे माने।

3- इस चिकित्सा में कुछ विशेष प्रश्नों का स्वरूप स्पष्ट नहीं होता हैं। जैसे- क्लायंट द्वारा गुप्त समस्याओं को किस तरह से निपटाया जाएँ? क्या परिवार के प्रत्येक सदस्य के उपचार को अस्वीकृत करने का समान अधिकार हैं? आदि प्रश्नों का कोई सही उतर नहीं मिल पाता हैं।

12.11 पारिवारिक चिकित्सा का मूल्यांकन (Evaluation of family Therapy)

पारिवारिक चिकित्सा का मूल्यांकन करने के लिए कुछ शोध किये गये हैं। इन शोधों के परिणाम को बहुत उत्साह वर्द्धक नहीं कहा जा सकता हैं। हाजेलरिन, कूपर एवं वोरडुईन ने 20 अध्ययनों का मेटा-विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहूंचे कि पारिवारिक चिकित्सा का गुणकारी प्रभाव पारिवारिक समस्याओं के लिये होता पाया गया हैं। परंतु इन अध्ययनों में कार्य विधि संबंधीकई दोष पाये गये हैं।

इस समीक्षा से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पारिवारिक चिकित्सा वैयक्तिक चिकित्सा की तुलना में बहुत अधिक गुणकारी या लाभकारी साबित नहीं होती हैं।

12.12 सारांश

- सामूहिक चिकित्सा दूसरों पर आधारित व्यक्ति तथा आत्मनिर्भर दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए लाभकारी होती हैं।
- सामूहिक चिकित्सा में कम समय में अधिक लोगों का उपचार संभव हैं। अत: इसमें श्रम एवं समय दोनों की बचत होती हैं।
- पारिवारिक चिकित्सा सत्र में सदस्यों में तीव्र संवेग, नकारात्मक भाव तथा आक्रमकता आदि की खुली अभिव्यक्ति से परिवार की एकता पर आंच आने लगती हैं। जिससे पारिवारिक चिकित्सा चिकित्सक के लिए एक सिर दर्द बन जाती हैं।

- पारिवारिक चिकित्सा में कभी-कभी चिकित्सक जिस व्यक्ति को रोगी समझता हैं और उसे पता चलता हैं कि अतिगंभीर रोगी कोई और दूसरा सदस्य हैं तो चिकित्सक के लिए यह समस्या उठ खड़ी होती हैं कि वास्तविक रोगी किसे माने।

12.13 प्रश्नोत्तर

1- सामूहिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए?
2- सामूहिक चिकित्सा के कारकों को समझाइये?
3- सामूहिक चिकित्सा के मॉडल क्या हैं? इसके मॉडलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिये?
4- सामूहिक चिकित्सा का मूल्यांकन पर प्रकाश डालिये?
5- पारिवारिक चिकित्सा का अर्थ समझाइये?
6- पारिवारिक चिकित्सा का उद्देश्य क्या हैं?
7- पारिवारिक चिकित्सा के प्रकारों के बारे में आप क्या जानते हैं?
8- पारिवारिक चिकित्सा की समस्याओं को बताइये?
9- पारिवारिक चिकित्सा का मूल्यांकन करिये?

12.15 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press

इकाई - 13

नैदानिक हस्तक्षेप

Clinical intervention

अर्थ, लक्ष्य तथा प्रकार, नैदानिक चिकित्सक की भूमिका एवं योग्यताएं

Meaning, goals, type, the helping process:clinical psychologist as a person and professional

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 नैदानिक हस्तक्षेप का अर्थ

13.4 नैदानिक हस्तक्षेप का लक्ष्य

13.5 नैदानिक हस्तक्षेप का प्रकार

13.6 मनोगतिकी चिकित्सा

13.7 मनोगतिकी चिकित्सा

13.8 संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा

13.9 मानवतावादी अनुभवजन्य चिकित्सा

13.10 सामूहिक चिकित्सा

13.11 नैदानिक मनोविज्ञान की भूमिका व योग्यताएं

13.12 सारांश

13.13 प्रश्नोत्तर

13.14 संदर्भसूची

13.1 प्रस्तावना

मानसिक रूप से अस्वस्थ एवं सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्तियों का मनोवैज्ञानिक विधियों से उपचार करना, नैदानिक हस्तक्षेप (Clinical Intervention) कहा जाता है, क्योंकि इसमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने व्यवसायी या पेशेवर क्षमता का उपयोग करते हुए मानसिक रूप से या सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करने की कोशिश करता है। सामान्यत: नैदानिक हस्तक्षेप का उपयोग उन मानसिक रोगियों के लिए लाभकारी होता है जो मन:स्नायुविकृति (psychoneurosis) से पीड़ित होते हैं। इसका उपयोग दूसरे प्रकार के मानसिक रोगियों जैसे

मनोविक्षिप्ति या मनोविकृति के रोगियों के साथ भी किया जाता है परंतु ऐसे रोगियों को नैदानिक हस्तक्षेप के अलावा मेडिकल चिकित्सा भी देना अनिवार्य होता है।

13.2 उद्देश्य

- नैदानिक हस्तक्षेप के अर्थ को समझ सकेंगे।
- नैदानिक हस्तक्षेप के लक्ष्य को जान पायेंगे।
- नैदानिक हस्तक्षेप के प्रकार को जान सकेंगे।
- मनोगतिकी चिकित्सा का अर्थ जान पायेंगे।
- मनोगतिकी चिकित्सा को जान सकेंगे।
- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा को समझ सकेंगे।
- मानवतावादी अनुभवजन्य चिकित्सा के अर्थ को जान सकेगे।
- सामुहिक चिकित्सा का अर्थ समझ सकेंगे।
- नैदानिक मनोविज्ञान की भूमिका व योग्यताओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

13.3 नैदानिक हस्तक्षेप का अर्थ (Meaning of Clinical Intervention)

सामान्यत: किसी अस्वस्थ व्यक्ति को औषध, शल्य आदि प्रविधियों से पुन: स्वस्थ बनाने की प्रक्रिया को उपचार(treatment) या चिकित्सा(therapy) की संज्ञा दी जाती है। मानसिक रूप से अस्वस्थ एवं सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्तियों की मनोवैज्ञानिक विधियों से उपचार करना, नैदानिक हस्तक्षेप(clinical intervention) कहा जाता है, क्योंकि इसमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने व्यवसायी या पेशेवर क्षमता का उपयोग करते हुए मानसिक रूप से या सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करने की कोशिश करता है। सामान्यत: मनोश्चिकित्सा का उपयोग उन मानसिक रोगियों के लिए लाभकारी होता है जो मन:स्नायुविकृति से पीड़ित होते हैं। इसका उपयोग दूसरे प्रकार के मानसिक रोगियों जैसे मनोविक्षिप्ति या मनोविकृति के रोगियों के साथ भी किया जाता है परंतु ऐसे रोगियों को नैदानिक हस्तक्षेप के अलावा मेडिकल चिकित्सा भी देना अनिवार्य होता है। नैदानिक हस्तक्षेप की कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार दी गई है -

ओलवर्ग(Wolberg,1967) के अनुसार, नैदानिक हस्तक्षेप सांवेगिक प्रकृति की समस्याओं के लिए उपचार का एक प्रारूप है जिसमें एक प्रशिक्षित व्यक्ति जान बुझकर एक रोगी के साथ पेशेवर संबंध इस उद्देश्य से कायम करता है कि उसमें धनात्मक व्यक्तित्व वर्द्धन तथा विकास हो, व्यवहार के विक्षुब्ध पैटर्न के मंदित वर्तमान लक्षणों को दूर किया जा सकें या उसमें परिमार्जन किया जा सकें।

रौटर के अनुसार(Rotter,1976), नैदानिक हस्तक्षेप मनोवैज्ञानिक की एक सुनियोजित क्रिया होती है। जिसका उद्देश्य व्यक्ति की जिन्दगी में ऐसा परिवर्तन लाना होता है जो उसकी जिन्दगी को भीतर से अधिक खुश तथा संचनात्मक या दोनों ही बनाता है।

निटजील, वर्नस्टीन एवं मिलिक(Nietzel,Bernstein&Milich,1991) के अनुसार नैदानिक हस्तक्षेप में कम से कम दो सहभागी होते हैं जिसमें एक को मनोवैज्ञानिक समस्याओं से निबटने में विशेष प्रशिक्षण तथा सुविज्ञता प्राप्त होती है और उसमें से एक समायोजन में समस्या का अनुभव करता है और वे दोनों समस्या को कम करने के लिए एक विशेष संबंध कायम किये होते हैं। मनश्चिकित्सकीय संबंधएक पोषक परंतु उद्देश्यपूर्ण संबंधहोता है जिसमें मनोवैज्ञानिक स्वरूप की गई विधियों का उपयोग क्लायंट में बाधिक परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है।

इन परिभाषाओं का विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि नैदानिक हस्तक्षेप में रोगी तथा चिकित्सक के बीच वार्तालाप होता है जिसके माध्यम से रोगी अपनी सांवेगिक समस्याओं व मानसिक चिन्ताओं की अभिव्यक्ति करता है तथा चिकित्सक विशेष सहानुभूति सुझाव एवं सलाह देकर रोगी में आत्म विश्वास एवं आत्म सम्मान कायम करता है जिससे रोगी की समस्याओं धीरे धीरे समाप्त होते चली जाती है और उसमें ठीक ढंग से समायोजन करने की क्षमता पुन: विकसित हो जाती हैं। नैदानिक हस्तक्षेप के स्वरूप को अधिक स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि नैदानिक हस्तक्षेप में निहित निम्नांकित तीन मौलिक तथ्यों पर प्रकाश डाला जाए-

1. सहभागी
2. चिकित्सीय संबंध
3. मनोश्चिकित्सा की प्रविधि

इन तीनों तथ्यों का वर्णन निम्नांकित है-

1- सहभागी (participants) - नैदानिक हस्तक्षेप में दो सहभागी होती हैं- पहला सहभागी क्लायंट या रोगी होता है तथा दूसरा सहभागी चिकित्सक होता है क्लायंट वह व्यक्ति होता है जिसमें सांवेगिक या मानसिक क्षुब्धता इतनी अधिक उत्पन्न हो जाती है कि उसे किसी प्रशिक्षित चिकित्सक क मदद अपनी समस्याओं के समाधान के लिए लेना पड़ जाता है। रोगी में समस्या की क्षुब्धता की मात्रा अधिक भी हो सकती या फिर थोड़ी भी हो सकती है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि मनोश्चिकित्सा के लिए सबसे उत्तम क्लायंट या रोगी वह होता है जिसमें कुछ खास खास गुण होते हैं। जैसे - नैदानिक हस्तक्षेप से सबसे अधिक लाभ उन रोगियों को होता है जो बुद्धिमान, अभिप्रेरित , शाब्दिक, अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए साधारण मात्रा में चिन्ता दिखातें हों तथा चिकित्सक को अपनी समस्याओं के बारें में ठीक से जानकारी दे सकते हों। गुरमैन तथा राजीन ने अपने अध्ययन से इस तथ्य की संपुष्टि किया गया हैं।

नैदानिक हस्तक्षेप का दूसरा सहभागी चिकित्सक होता है। चिकित्सक वह व्यक्ति होता है जो अपने विशेष प्रशिक्षा तथा अनुभव के कारण क्लायंट या रोगी को अपने क्षुब्धताओं से निबटने में मदद करता हो। चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि उसमें विशेष कौशल हो और वह विशेष रूप से प्रशिक्षित हो ताकि वह क्लायंट की क्षुब्धताओं को समझ सके और तब उसके साथ इस ढंग से अन्त:क्रिया कर सके कि वह (क्लायंट) फिर अपनी समस्याओं या क्षुब्धताओं से ठीक ढंग से निबट सकें। एक उत्तम चिकित्सक में पर्याप्त कौशल तथा प्रशिक्षण के अलावा कुछ व्यक्तिगत गुण भी होना चाहिए। कार्ल रोजर्स के अनुसार एक उत्तम चिकित्सक में परानुभूति, प्रमाणिकता तथा शर्तहीन धनात्मक सम्मान देने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए।

इसके अलावा इसमें क्लायंट की समस्याओं को ठीक ढंग से सुनना, बिना निर्णायक दृष्टिकोण दिखलायें बोध तथा संवेदनशीलता का भाव दिखाने आदि की क्षमता होनी चाहिए।

2. चिकित्सीय संबंध (therapeutic relationship) - नैदानिक हस्तक्षेप का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू चिकित्सक तथा क्लायंट के बीच विकसित विशेष संबंध होता है जिसे चिकित्सीय संबंध कहा जाता है। चिकित्सीय संबंध वैसा संबंध होता है जिसमें चिकित्सा तथा रोगी दोनों ही यह जानते हैं कि वे लोग वहां क्यों एकत्रित हुए हैं तथा उनकी अन्त:क्रियाओं का नियम तथा लक्ष्य क्या है।

   नैदानिक हस्तक्षेप की शुरूआत चिकित्सीय अनुबन्ध से होता है जिसमें उपचार का लक्ष्य, चिकित्सा की प्रविधि जिसका उपयोग किया जाना है, संभावित जोखिम तथा चिकित्सा एवं रोगी के वैयक्तिक जवाबदेहियों का उल्लेख होता है। और लिन्स्की एवं होवार्ड के अनुसार चिकित्सीय अनुबन्ध एक तरह की रूपरेखा के रूप में कार्य करता है जो चिकित्सीय संबंध को इस तरह का बनने में मदद करता है जिसमें क्लायंट सक्रिय निर्णयकर्ता के रूप में न कि सहायता पाने वाले एक निष्क्रिय व्यक्ति के रूप में कार्य करता है। चिकित्सक की यह कोशिश रहती है कि वह रोगी के साथ एक ऐसा भद्र संबंध बना सके अर्थात रोगी अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए काफी उत्सुक रहे।

स्पष्ट हुआ है कि एक उत्तम चिकित्सीय संबंध में अन्य बातों के अलावा निम्नांकित अपेक्षित गुण होते है-

1. क्लायंट एवं चिकित्सक के बीच चिकित्सीय संबंध में नैतिक वचनबद्धता होती है जिसमें गोपनीयता प्रमुख है। चिकित्सक रोगी के गोपनीयता की रक्षा करता है तथा चिकित्सा के दौरान बतलाये गए बातों को किसी अन्य व्यक्ति से नहीं बतलाता है।
2. चिकित्सीय संबंध इस ढंग का होना चाहिए कि चिकित्सक रोगी के कल्याण को सर्वाधिक प्राथमिकता दे।
3. उस चिकित्सीय संबंध को उत्तम माना जाता है जिसमें भूमिका परानुभूतीय गूंज तथा परस्पर प्रतिज्ञापन जैसे तीन तत्व होते हैं। भूमिका निवेश से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सक तथा रोगी दोनों ही चिकित्सा को सफल बनाने में व्यक्तिगत प्रयास करते हैं। परानुभूतीय गूंज से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सा के दौरान किस हद तक चिकित्सक तथा रोगी दोनों ही समान दृष्टिकोण रखते हैं। परस्पर प्रतिज्ञापन से तात्पर्य इस बात से होता है कि किस सीमा तक चिकित्सक व रोगी एक दूसरे की भलाई के लिए ध्यान देते हैं।
4. स्ट्रप ने इस बात पर बल डाला है कि चिकित्सीय परिणाम उत्तम होने के लिए यह आवश्यक है कि चिकित्सीय संबंध को रोगी एक कृत्रिम या बनावटी संबंध के रूप में न लेकर उसे एक वास्तविक संबंध के रूप में प्रत्यक्षण करें।

3. नैदानिक हस्तक्षेप की प्रविधि(techniques of clinical intervention) - नैदानिक हस्तक्षेप की कई पद्यतियां हैं। नैदानिक हस्तक्षेप के प्रत्येक पद्धति की अपनी अपनी प्रविधियां हैं। मनोश्चिकित्सा की प्रविधियों में अन्तर होने का मुख्य कारण उनके पीछे छिपे व्यक्तित्व सिद्धान्त

तथा वे सारे परिवर्तन हैं जो चिकित्सक रोगी में उत्पन्न करना चाहता है। यद्यपि मनोश्चिकित्सा के कई प्रकार हैं, फिर भी कई प्रविधियां ऐसी हैं जो उन सभी प्रकारों में सामान्य है। इन प्रविधियों का स्वरूप मूलत: मनोवैज्ञानिक होता है न कि दैहिक या मेडिकल। नैदानिक हस्तक्षेप के कुछ ऐसी प्रमुख प्रविधियां इस प्रकार हैं -

1- सूझ उत्पन्न करना - नैदानिक हस्तक्षेप की एक प्रविधि रोगी के मनोवैज्ञानिक समस्याओं में सूझ उत्पन्न करना है। सूझ उत्पन्न करने के लिए रोगी में आत्म मूल्याकंन तथा आत्म ज्ञान विकसित करने की कोशिश की जाती है। सूझ उत्पन्न करने के लिए चिकित्सक रोगी के व्यवहार की व्याख्या भी करते हैं।

2. सांवेगिक अशांति को कम करना - नैदानिक हस्तक्षेप में रोगी के सांवेगिक अशांति की मात्रा को इतना कम कर दिया जाता है कि वह चिकित्सा में आगे ठीक ढंग से सहयोग कर सकें तथा अपने व्यवहार में स्थायी परिवर्तन लाने के लिए अभिप्रेरित रहे।

3- विरेचन को प्रोत्साहित करना - चिकित्सक की उपस्थिति में रोगी को अपने संवेगों, भावों आदि की खुली अभिव्यक्ति करने के लिए कहा जाता है। इस प्रक्रिया को विरेचन कहा जाता है। इस तरह से विरेचन की प्रक्रिया द्वारा कुछ वैसे दबे हुए संवेग की अभिव्यक्ति होती है जिसे स्वयं रोगी बहुत समय पहले से नहीं जानता था।

4. नयी सूचना देना - नैदानिक हस्तक्षेप का स्वरूप शैक्षिक होता है। चिकित्सक रोगी को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ नई नई सूचनाओं को देता है ताकि रोगी के वर्तमान ज्ञान में उत्पन्न खाई या विकृति को संशोधित किया जा सकें।

4- परिवर्तन के लिए उम्मीद एवं विश्वास विकसित करना - नैदानिक हस्तक्षेप में रोगी में उत्तम परिवर्तन के लिए विश्वास तथा प्रत्याशा उत्पन्न की जाती है। चिकित्सक हर तरह से परिस्थिति को इस ढंग से मोड़ते हैं कि रोगी में यह विश्वास उत्पन्न हो जाए कि उसे मदद की जा रही है तथा निश्चित रूप से उसके व्यवहार में धनात्मक परिवर्तन होंगे तथा उनकी सांवेगिक समस्याओं कम हो जाएगीं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चिकित्सक विरेचन, रोगी के भावों की व्याख्या तथा उत्तम चिकित्सीय संबंधका निर्माण आदि जैसी प्रविधियों का सहारा लेते हैं।

स्पष्ट हुआ कि नैदानिक हस्तक्षेप एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें चिकित्सक रोगी के साथ अन्त:क्रिया करके एक ऐसा उत्तम चिकित्सीय संबंधका निर्माण करते हैं कि रोगी की सांवेगिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का उत्तम निदान हो पाता है।

13.4 नैदानिक हस्तक्षेप का लक्ष्य (Goals of Clinical Intervention)

नैदानिक हस्तक्षेप का सामान्य लक्ष्य रोगी के संवेगात्मक समस्याओं एवं मानसिक तनाव को दूर करके उसमेंसामर्थ्य , आत्म बोध, पर्याप्त परिपक्वता आदि विकसित करना होता है। इन सामान्य लक्ष्यों के अलावा नैदानिक हस्तक्षेप के कुछ विशिष्ट लक्ष्य भी हैं जो निम्नांकित हैं-

1. रोगी के अपअनुपूलित व्यवहारों में परिवर्तन लाना।
2. रोगी के अन्तवैयक्तिक संबंधएवं अन्य दूसरे तरह केसामर्थ्य को विकसित करना।
3. रोगी के आन्तरिक संघर्षो को एवं व्यक्तिगत तनाव को कम करना।

4. रोगी में अपने इर्द गिर्द क वातावरण एवं स्वयं अपने बारे में बने यर्थार्थ पूर्वकल्पनाओं में परिवर्तन लाना।
5. रोगी में अपनुकूलित व्यवहार को सम्पोषित करने वाले कारकों या अवस्थाओं को दूर करना।
6. रोगी को अपने वातावरण की वास्तविकताओं के साथ अच्छी तरह समायोजन करने में सहयोग प्रदान करना।
7. आत्म बोध एवं आत्म सूझ को सुस्पष्ट करना।

सुन्डवर्ग एवं टाइलर (Sundberg & Tyler,1962) के अनुसार नैदानिक हस्तक्षेप के प्रमुख लक्ष्यों में निम्नांकित है-

1. उपयुक्त कामों को करने के लिए रोगी की प्रेरणा को मजबूत करना।
2. भावों की अभिव्यक्ति द्वारा सांवेगिक दबाव को कम करने में मदद करना।
3. वर्द्धन के लिएसामर्थ्य ता की अभिव्यक्ति करना।
4. अपनी आदतों को बदलने में मदद करना।
5. रोगी के संज्ञानात्मक रचनाओं को परिवर्तित करना।
6. आत्म ज्ञान प्राप्त करना।
7. अन्तवैयक्तिक संबंधोंएवं संचारों को प्रोत्साहित करना।
8. ज्ञान प्राप्त करने एवं निर्णय करने में प्रोत्साहन करना।
9. शारीरिक अवस्थाओं में परिवर्तन करना।
10. चेतन की वर्तमान अवस्था को परिवर्तित करना।
11. रोगी के सामाजिक वातावरण को परिवर्तित करना।

इन सबों का वर्णन निम्नांकित है-

1- **रोगी द्वारा सही कार्य करने की प्रेरणा को मजबूत करना** - नैदानिक हस्तक्षेप का चाहे जो प्रकार क्यों न हों, मनश्चिकित्सक हमेशा यह कोशिश करते हैं कि वे रोगी को सही कार्य करने की प्रेरणा को तीव्र करें।

2- **तीव्र भावों की अभिव्यक्ति करे सांवेगिक दबाव को कम करना** - नैदानिक हस्तक्षेप का एक उद्देश्य रोगी के भीतर छिपे भावों की अभिव्यक्ति कराना होता है। इसके पीछे तर्क यह छिपा होता है कि जब रोगी अपने भीतर छिपे क्षुब्धता उत्पन्न करने वाले भावों की अभिव्यक्ति करता है, तो इससे उसका सांवेगिक दबाव कम हो जाता है तथा रोगी की मानसिक बीमारी की गंभीरता बहुत ही कम हो जाती है। फ्रॉयड ने इस तरह के सांवेगिक मुक्ति को विरेचन कहा है।

3- **रोगी के अन्त:शक्ति को वर्धन एवं विकास के लिए मुक्त करना** - इस उद्देश्य के पीछे मनोचिकित्सकों की मान्यता यह होती है कि व्यक्ति की जिन्दगी एक निश्चित विकास रेखा के अनुरूप हमेशा बढ़ती है और जब उसके इस सामान्य वर्द्धन प्रवृति में किसी प्रकार की अवरूद्धता आदि है तो उससे मन:स्नायुविकृति तथा अन्य मानसिक रोगों की उत्पत्ति होती है।

अत: नैदानिक हस्तक्षेप का उद्देश्य इन अवराधों को दूर करना होता है ताकि रोगी के वर्द्धन तथा विकास की अन्त:शक्ति फल फूल सकें।

4. **अवांछित एवं अनुचित्त आदतों को परिवर्तित करना -** नैदानिक हस्तक्षेप का एक उद्देश्य एक ऐसी परिस्थिति का उत्पन्न करना होता है जिसमें रोगी के अवांछित, अनुचित्त एवं संकट उत्पन्न करने वाली आदतों का प्रतिस्थापन नयी वांछित आदतों से किया जा सकें। इसके लिए मनश्चिकित्सक अनुबंधन के बाद पुनर्बलन देकर उसको सीखलाने की कोशिश करते हैं।
5. **रोगी की संज्ञानात्मक संरचना में परिमार्जन करना -** नैदानिक हस्तक्षेप का एक उद्देश्य यह भी है कि रोगी अपने बारे में, दूसरे व्यक्तियों के बारे में तथा वातावरण के अन्य वस्तुओं एवं घटनाओं आदि के बारे में पूर्णत: अवगत हो तथा इस संज्ञानात्मक संरचना में व्याप्त असंगतता को पहचाने तथा उसे आवश्यकतानुसार परिवर्तित करें क्योंकि इस तरह की असंगतता से व्यक्ति की सामान्य अवधारणा विकृत हो जाती है और वह रोग का शिकार हो जाता है।
6. **रोगी के ज्ञान को तथा प्रभावी निर्णयों को लेने की क्षमता में वृद्धि करना -** नैदानिक हस्तक्षेप का उद्देश्य रोगी के वर्तमान ज्ञान को इस लायक बना देना होता है कि वह अपनी जिन्दगी में प्रभावी निर्णय ले सकें। उसे विभिन्न अवसरों के बारे में पर्याप्त ज्ञान दिया जाता है तथा प्रत्येक विकल्प के पक्ष विपक्ष में तथ्य उनके सामने रखा जाता है तथा फिर उन्हें ऐसी परिस्थितियों का सामना कराके ऐसी क्षमता धीरे धीरे विकसित की जाती है कि वे अपने जीवनके सभी महत्वपूर्ण निर्णय को लेने में सक्षम हो सकें।
7. **रोगी में आत्म ज्ञान या सूझ में वृद्धि करना -** नैदानिक हस्तक्षेप का उद्देश्य रोगी में पर्याप्त सूझ विकसित करना होता है ताकि वह यह समझ सके कि वह किस तरह व्यवहार करता है? तथा क्यों वैसा व्यवहार करता है? ऐसा करने के लिए मनश्चिकित्सक अचेतन के छिपे इच्छाओं को चेतन में लाते हैं। जब रोगी अपने अचेतन की अभिप्रेरणाओं एवं इच्छाओं को चेतन में लाकर उसे समझने की कोशिश करता है, तो उससे उसमें आत्म ज्ञान या सूझ उत्पन्न होता है और रोगी की कुसमायोजी व्यवहार की गंभीरता में कमी होने लगती है।
8. **अन्तवैयक्तिक संबंधोंपर बल दिया जाना -** नैदानिक हस्तक्षेप का एक उद्देश्य यह भी स्पष्ट करना होता है कि किस तरह से रोगी की व्यवहार उसके चिन्तन से प्रभावित होता है और उसका व्यवहार किस तरह से चिन्तन के विभिन्न पहलुओं पर निर्भर करता है। इसमें रोगी तथा अन्य लोगों के बीच हुए संचार पर पर्याप्त बल डाला जाता है जिससे अन्तवैयक्तिक संबंधको अधिक संतोषजनक बनाया जा सकता है।
9. **रोगी के सामाजिक वातावरण में परिवर्तन उत्पन्न करना -** नैदानिक हस्तक्षेप का चाहे जो भी प्रारूप क्यों न हो, इसका एक मुख्य उद्देश्य रोगी के सामाजिक वातावरण में परिवर्तन लाना होता है। किसी भी रोगी का वास्तविक भलाई तो तब होता है जब वह अपने दिन प्रतिदिन की जिंदगी में ठीक ढंग से समायोजन कर सकें।
10. **रोगी के शारीरिक प्रक्रियाओं में परिवर्तन लाना ताकि उसके दर्दनाक अनुभूतियों को कम किया जा कसें तथा शारीरिक चेतना में वृद्धि की जा सकें -** नैदानिक हस्तक्षेप में यह एक पूर्वकल्पना रहती है कि मन तथा शरीर दोनों ही एक दूसरें को प्रभावित करते हैं। स्वच्छ मन के लिए स्वच्छ शरीर का होना आवश्यक है। मनोचिकित्सकों का मत है कि रोगी के शारीरिक

दू:खों या दर्दनाक अनुभूतियों को कम करके तथा उनमें शारीरिक चेतना में वृद्धि करके मनोश्चिकित्सा की परिस्थिति के लिए उन्हें अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। यही कारण है कि कुछ मनोश्चिकित्सा जैसे व्यवहार चिकित्सा में विश्राम प्रशिक्षण देकर उनके तनाव एवं चिन्ता को दूर किया जाता है और इस प्रति अनुबंधन के लिए आवश्यक भी माना जाता है। उसी तरह से रोगी के शारीरिक चेतना में वृद्धि करने के लिए विभिन्न तरह के आयामों जो भारतीय योग के नियमों पर आधारित होते हैं, का सहारा लिया जा सकता है। इन सबों का परिणाम यह होता है कि रोगी अपने वास्तविक जिन्दगी में ठीक ढंग से समायोजन स्थापित करने में सफल हो जाता है।

11. **रोगी के चेतन अवस्थाओं में इस तरह का परिवर्तन करना ताकि उसमें आत्म बोध, नियंत्रण तथा सर्जनात्मकता की क्षमता में वृद्धि हो सकें -** नैदानिक हस्तक्षेप का एक उद्देश्य यह भी होता है कि रोगी के चेतन अवस्था में इस ढंग का परिमार्जन या परिवर्तन किया जाए कि उससे उसमें अपने व्यवहारों पर अधिक नियंत्रण की क्षमता बढ़ जाए, उसमें सर्जनात्मक क्षमता में वृद्धि हो जाए तथा आत्म बोध में वृद्धि हो जाए। इन सब क्षमताओं के विकास के लिए तरह-तरह की प्रविधि जिसमें मनन, अलगाव तथा चेतन विस्तार आदि प्रमुख है का सहारा लिया जाता है। इन सब विधियों से रोगियों में आत्म ज्ञान तथा आत्म निर्भरता, आत्मसामर्थ्य ता आदि जैसे गुणों का विकास होता है।

स्पष्ट होता है कि नैदानिक हस्तक्षेप के कई उद्देश्य हैं। इन लक्ष्यों में से अधिक से अधिक लक्ष्यों की पूर्ति होने से नैदानिक हस्तक्षेप की प्रभावशीलता काफी बढ़ जाती है।

13.5 नैदानिक हस्तक्षेप के प्रकार (Types of Clinical Intervention)

जैसा कि हम जानते हैं, नैदानिक हस्तक्षेप में मानसिक रोगों के उपचार की मनोवैज्ञानिक विधि होती है। इसमें सांवेगिक क्षुब्धताओं का उपचार दैहिक विधि से न करके मनोवैज्ञानिक विधियों से की जाती है। चूंकि सांवेगिक क्षुब्धताओं के उपचार करने की मनोवैज्ञानिक विधियां अनेक हैं, अत: नैदानिक हस्तक्षेप के भी कई प्रकार बतलाये गए हैं। नैदानिक हस्तक्षेप के पांच प्रमुख सामान्य प्रकार हैं और फिर प्रत्येक के कई उपप्रकार है जिनका वर्णन इस प्रकार है-

1. **मनोगतिकी चिकित्सा (Psychodynamic therapy) -** मनोगतिकी चिकित्सा से तात्पर्य एक ऐसे मनोवैज्ञानिक उपचार दृष्टिकोण से होता है जिसमें व्यक्ति या रोगी के व्यक्तित्व गतिकी पर मनोविश्लेषणात्मक परिपे्रक्ष्य में बल डाला जाता है। इस चिकित्सा के तहत पांच प्रमुख उपप्रकार है जो इस प्रकार है-
    1. फ्रॉयड का मनोविश्लेषिक चिकित्सा
    2. एडलर का वैयक्तिक चिकित्सा
    3. युंग का विश्लेष्णात्मक चिकित्सा
    4. अहं विश्लेषण
    5. संक्षिप्त मनोश्चिकित्सा
    6. वस्तु संबंधीचिकित्सा

7. अन्तवैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा

2. **व्यवहार चिकित्सा (Behaviour therapy) -** व्यवहार चिकित्सा में कुसमायोजी या अपअनुकूलित व्यवहार के जगह पर समायोजी या अनुकूलित व्यवहार पैवलव, स्कीनर तथा वैण्डुरा द्वारा बतलाये गए सिद्धान्तों पर आधारित प्रविधियों द्वारा सीखलाया जाता है।

3. **संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive behaviour therapy) -** इस तरह की चिकित्सा में चिकित्सक रोगी के संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं जैसे - चिन्तन, प्रत्यक्षण, मूल्याकंन तथा आत्म कथनों को ध्यान में रखते हुए चिकित्सा प्रदान करता है। इसके चार उपप्रकार हैं -

   1. रैशनल इमोटिव चिकित्सा
   2. संज्ञानात्मक चिकित्सा
   3. तनाव टीका चिकित्सा
   4. बहुआयामी चिकित्सा

4. **मानवतावादी अनुभवजन्य चिकित्सा (Humanistic-Experiental therapy) -** इस चिकित्सा में रोगी की समस्याओं का समाधान उनके भीतर छिपे अन्त:शक्तियों एवं अस्तित्वात्मक पहलुओं के आलोक में की जाती है। इसके अन्तर्गत निम्नांकित तरह के चिकित्सा प्रकारों को रखा गया है-

   1. क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा
   2. अस्तित्वात्मक चिकित्सा
   3. गेस्टाल्ट चिकित्सा
   4. लोगो चिकित्सा
   5. नियत भूमिका चिकित्सा

5. **सामूहिक चिकित्सा(Group therapy) -** सामूहिक चिकित्सा में रोगी का उपचार एक समूह में न कि वैयक्तिक रूप से की जाती है। इसके अन्तर्गत निम्नांकित पांच प्रकार के चिकित्सा पद्धति को रखा गया है-

   1. मनोनाटक
   2. पारिवारिक चिकित्सा
   3. वैवाहिक या युग्म चिकित्सा
   4. संव्यवहार विश्लेषण
   5. सामूहिक मुठभेड़ चिकित्सा

स्पष्ट हुआ है कि नैदानिक हस्तक्षेप के मुख्य पांच प्रकार हैं और इन पांचों प्रकार के कई उपप्रकार हैं। स्पष्ट हुआ है कि नैदानिक हस्तक्षेप के कई प्रारूप हैं जिनमें से कुछ व्यक्ति विशेष पर बल डालते हैं, कुछ व्यक्तियों के समूह पर बल डालते हैं तथा कुछ एक ही परिवार के सदस्यों पर बल डालते हैं।

इन प्रकारों का एक सरल वर्गीकरण या सामान्य वर्गीकरण प्रस्तुत करने के ख्याल से कारसन तथा बुचर(Carson&Butcher,1992) ने अति चर्चित वर्गीकरण पद्धति का वर्णन किया है जिसका वर्णन यहां अपेक्षित है। इस पद्धति का आधर चिकित्सीय ध्यान के लिए प्रमुख क्लायंट उपतंत्र है। इनके अनुसार सामान्यत: किसी भी मनोश्चिकित्सा में नियंत्रित चार पहलूओं पर ध्यान दिया जाता है - भाव, व्यवहार, संज्ञान, तथा पर्यावरण। इसे अंग्रेजी शब्द के प्रथम अक्षरों को मिलाकर ए बी सी ई ढांचा या पैमाना कहा जाता है। इसी के अनुसार कारसन एवं वुचर ने नैदानिक हस्तक्षेप के निम्नांकित चार प्रबल प्रकार बतलाये हैं जो इस प्रकार हैं -

1. **टाईप ए चिकित्सा(Type A therapy) -** इसे टाईप ए नैदानिक हस्तक्षेप इसलिए कहा जाता है क्योंकि इस तरह की पद्धति में क्लायंट के भाव या संवेग तथा चिंता में परिवर्तन लाकर उसका उपचार करने की कोशिश किया जाता है। इसके अन्तर्गत फ्रायडिन मनोश्चिकित्सा, फ्रॉयडियन मनोश्चिकित्सा के विभिन्न विकल्प क्लासिकी अनुबंधन पर आधारित व्यवहार चिकित्सा एवं फ्लडिंग, अत: स्फोटात्मक चिकित्सा आदि प्रमुख हैं। सभी तरह के जैविक चिकित्साओं को भी इसी के अन्तर्गत रखा जाता है।
2. **टाईप बी चिकित्सा(Type B therapy) -** इसके अन्तर्गत उन सभी चिकित्साओं को रखा जाता है जिसका स्पष्ट उद्देश्य रोगी के अपअनुकूली व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है। क्रियाप्रसूत अनुबंधन पर आधारित सभी तरह के व्यवहार चिकित्सा को इस श्रेणी में रखा जाता है क्योंकि इनका उद्देश्य पुनर्बलन संभाव्यता में जोड़ तोड़ करके रोगी के अपअनुकूली व्यवहार में स्पष्ट ढंग से परिवर्तन लाना होता है।
3. **टाईप सी चिकित्सा (type C therapy) -** इस तरह की चिकित्सा में रोगी के संज्ञान अर्थात सूझ बूझ, प्रत्यक्षण, विश्वास आदि में परिवर्तन लाकर उनका उपचार की कोशिश की जाती है। रैसनल इमोटिव चिकित्सा, बेक का संज्ञानात्मक चिकित्सा तथा तनाव टीका चिकित्सा को इस श्रेणी में रख गया है।
4. **टाईप ई चिकित्सा (Type E therapy) -** इस तरह की चिकित्सा में रोगी के माता पिता, शिक्षक, दोस्त, पड़ोसियों आदि के पर्यावरणी प्रतिक्रियाओं में परिवर्तन करके उसका उपचार करने की कोशिश की जाती है। अन्तवैयक्तिक चिकित्सा तथा सामुदायिक चिकित्सा को इस श्रेणी चिकित्सा में रखा गया है।

   यद्यपि चिकित्सा के उपयुक्त चार प्रकार काफी लोकप्रिय हैं, फिर भी इनका दोष यह है कि इन चार श्रेणियों में चिकित्सा के केवल प्रबल श्रेणियों को ही रखा जा सकता है, सभी तरह के चिकित्साओं को नहीं। इस परिसीमाओं को स्वयं कारसन एवं बुचर ने भी स्वीकार किया है।

13.6 नैदानिक मनोवैज्ञानिक की भूमिका व योग्यताएं (Role and Skills of Clinical Psychologists)

नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक ऐसी प्रयुक्त शाखा (applied branch) हैं जिसका विकास काफी तेजी से हुआ हैं। आधुनिक समय में नैदानिक मनोविज्ञान एक प्रमुख पेश के रूप में उभर कर सामने आया हैं। फेयर्स (Phares,1984) के अनुसार नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के निम्नांकित छ: प्रमुख कार्य क्षेत्र जिसमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपनी एक व्यक्ति एवं व्यावसायिक के रूप में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाते (Scope) हैं तथा अपनी योग्यताओं को भी एक साकार रूप प्रदान करते हैं। :

1. मनोचिकित्सा
2. निदान एवं मूल्यांकन
3. शिक्षण
4. शोध
5. परामर्श

प्रशासन एवं प्रबंधन

इन सबों का वर्णन निम्नांकित हैं :

1. **मनोचिकित्सा** (Psychotherapy) -

मनोश्चिकित्सा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का एक प्रमुख कार्य क्षेत्र हैं और करीब 88.3 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक इसी कार्य में गहन रूप से लगे हुए हैं। मनोश्चिकित्सा में नैदानिक मनोवैज्ञानिक मनोवैज्ञानिक विधियों से व्यक्ति के मानसिक रोगों का निदान एवं उपचार करते हैं। इसकी कई प्रकार व उद्देश्य हैं। मनोश्चिकित्सा के प्रमुख प्रकारों में मनोविश्लेशात्मक चिकित्सा (Psychoanalytic therapy), क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (client-centered tjerapy), व्यवहार चिकित्सा (behaviour therapy), रैसनल इमोटिव चिकित्सा (rational-emotive therapy) आदि प्रमुख हैं। हेंरिक (Herink,1980) के अनुसार चिकित्सा के करीब 250 प्रकार हैं जिनका उपयोग नैदानिक मनोविज्ञानी किसी न किसी रूप में करते हैं।

मनोश्चिकित्सा एक ही समय में एक व्यक्ति या व्यक्तियों के एक समूह में भी किया जाता हैं। कुछ मनोश्चिकित्सा मात्र दो तीन दिन तथा कुछ साल साल भर तक चलता है। क्लायंट को अस्पताल भर्ती करके या घर पर रहते हुए ही उपचार किया जाता हैं। कुछ मनोश्चिकित्सा का स्वरूप सुधारक होता हैं क्योंकि इसका उद्देश्य व्यक्ति की वर्तमान समस्या का समाधान करना होता हैं, जबकि कुछ मनोचिकित्सा का स्वरूप निरोधक होता हैं क्योंकि इसका उद्देश्य व्यक्ति में संवेगात्मक या अन्य इसी तरह कठिनाइयों को उत्पन्न होने से रोकना होता हैं।मनचिकित्सा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का प्रमुख कार्य क्षेत्र हैं।

2.**निदान एवं मूल्यांकन**(Diagnosis and Assessment)-

नैदानिक मनोविज्ञान का दूसरा प्रमुख कार्य क्षेत्र निदान एवं मूल्याकंन हैं। इसमें लगभग 73.8 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक कार्यरत हैं। निदान से तात्पर्य व्यक्ति के निरीक्षित गुणों के आधार पर उसकी असामान्यता के लक्षणों एवं वर्गीकरण की पहचान करने से होता हैं।

विलियमसन (Williamson) 1950 के अनुसार निदान व्यक्ति की समस्याओं, उसके कारणों एवं अन्य महत्वपूर्ण गुणों का एक संक्षिप्त सारांश होता हैं जिसमें समायोजन तथा कुसमायोजन करने की अन्त:शक्ति का आशय भी होता हैं।

मूल्यांकन एक ऐसा तरीका हैं जिसके सहारे व्यक्ति के बारे में विभिन्न तरह की सुचनाएं एकत्रित की जाती हैं ताकि समस्या का समाधान किया जा सके। मूल्यांकन की प्रक्रिया को नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रेक्षण (observation), परीक्षण (testing) या साक्षात्कार (interviewing)

किसी के रूप में भी सम्पन्न किया जाता हैं। अधिकतर नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए मूल्यांकन बहुत लम्बे समय तक एक महत्वपूर्ण कार्य रहा हैं। मूल्यांकन में विशेष कर परीक्षण कार्य को नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा अधिक महत्व दिया गया हैं।

3. शिक्षण (Teaching) **-** शिक्षण का कार्य भी नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का प्रमुख कार्य क्षेत्र हैं। 61.7 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपनी नियुक्ति के स्वरूप के अनुसार अंशकालीन (part-time) या पुर्णकालीन (full-time) शिक्षण करते हैं। वे प्राय: उच्चतर असामान्य मनोश्चिकित्सा, परीक्षण कार्य, नैदानिक साक्षात्कार, मनोचिकित्सा, व्यक्तित्व सिद्धांत, प्रयोगात्मक नैदानिक मनोविज्ञान आदि विषयों का शिक्षण करते हैं।

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा दिया जाने वाला शिक्षण अधिकतर भाषण विधि पर आधारित होता हैं परन्तु इन लोगों द्वारा एक एक करके पर्यवेक्षणात्मक आधार पर भी शिक्षण कार्य किए जाते हैं। कुछ रूपों में नैदानिक मनोवैज्ञानिक समुदाय में जाकर विभिन्न विषयों पर पुलिस पदाधिकारियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, प्रोवेसन पदाधिकारियों के लिए कार्यशाला भी चलाते हैं।

4 शोध (Research) –

नैदानिक मनोविज्ञान का एक प्रमुख कार्य क्षेत्र शोध भी हैं। करीब 52.8 प्रतिशत मनोवैज्ञानिकों द्वारा शोध कार्य किये जाते हैं। अन्य मानसिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से भिन्न नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को शोध करने का भी प्रशिक्षण दिया जाता हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिक भिन्न भिन्न क्षेत्रों में शोध कार्य करते हैं जिनमे प्रमुख हैं: व्यक्तित्व का सिद्धांत (Personality theory), मूल्यांकन प्रविधियों (assessment devices) का विकास एवं वैद्यीकरण (validation), चिकित्सा प्रविधियों का मूल्यांकन (evaluation of therapy techniques)। इनके शोधों को अन्य जरनल के अलावा ' जरनल ऑफ कन्सल्टिंग एण्ड क्लिनिकल साइकोलॉजी' , क्लिनिकल साइकोलॉजी, साइकोलॉजी एसेसमेन्ट तथा एवनौरमल साइकोलॉजी में मुख्य रूप से प्रकाशन किया जाता हैं। इस तरह कहा जा सकता हैं कि नैदानिक मनोविज्ञान के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दो पहलू हैं जो एक दूसरे के पूरक हैं।

2 परामर्श (Consultation)- नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का एक प्रमुख कार्य परामर्श हैं। करीब 67.4प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक इस कार्य को विशेष महत्व देते हैं। यह बहुत हद तक शिक्षण के कार्य से संबंधितहैं। परामर्श एक ऐसी प्रविधि हैं जिनमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने विशेष ज्ञान एवं योग्यता के आधार पर दूसरे व्यक्ति को कुछ विशेष तरह की सुचना देकर उसकी समस्याओं को दूर करते हैं। इसमें कई प्रकार हैं जिनमें नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को सक्रिय होना पडता हैं। जैसे- किसी व्यावसायिक या औधोगिक संस्था में नैदानिक परामर्श दाता को संस्था के कार्यपालकों को प्रेरित करने के उपायों पर राय देने के लिए कहा जाता हैं। औषधि व्यसनी की समस्याओं को दूर करने के लिए कहा जाता हैं या किसी संगठन की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए परामर्श देने को कहा जाता हैं।

परामर्श का स्वरूप कभी निरोधक होता हैं तो कभी सुधारक होता हैं। कुछ नैदानिक परामर्श दाता की सेवा अंशकालीन तथा कुछ की पूर्णकालीन आधार पर कभी-कभी उपयुक्त धन खर्च करके प्राप्त किया जाता हैं। फेयर्स (Phares),1983 के अनुसार, ''परामर्श चाहे जिस परिस्थिति में दी गयी हो या चाहे जो भी इसका विशेष उद्देश्य हो, आज यह नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक सार्थक कार्य बन गया हैं।''

1- प्रशासन एवं प्रबंधन (Administration and Management) –

नैदानिक मनोविज्ञानी प्रशासनिक एवं प्रबंधन से संबंधित कार्य भी करते हैं। इनसे यह कार्य इसलिए करने के लिए कहा जाता हैं क्योंकि उनमें संवेदनशीलता, अन्तरवैयक्तिक कौशल तथा शोध सुविज्ञता आदि अधिक होते हैं। प्रशासनिक पद पर रहते हुए नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्राय: प्रशासनिक एवं प्रबंधन संबंधीकार्य किया करते हैं। जो इस प्रकार हैं-

- विश्वविद्यालय मनोविज्ञान का अध्यक्ष
- प्रशिक्षण कार्यक्रम का निर्देशक
- छात्र परामर्श केन्द्र का निर्देशक
- स्कूल तंत्र का अधीक्षक
- किसी अस्पताल या उपचार केन्द्र का मुख्य मनोवैज्ञानिक
- सामुदायिक मानसिक स्वास्थ्य का निर्देशक इत्यादि

नोरकॉस एवं उनके सहयोगियों (Norcross et al.1989) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया हैं कि प्रशासनिक एवं प्रबंधन कार्य में नैदानिक मनोविज्ञानी अपने समय का लगभग 16 प्रतिशत समय व्यतीत करते हैं।

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के कार्य एवं कार्य-क्षेत्र के अध्ययन से स्पष्ट हैं कि नैदानिक मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र काफी विस्तृत हैं। शायद यही कारण हैं कि नैदानिक मनोवेज्ञानिक मानसिक रोगों की चिकित्सा के अलावा भी तरह-तरह के कार्यों के प्रति अपनी रूचि दिखाते हैं। तथा एक व्यक्ति एवं व्यावसासिक के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इन्हीं कार्य क्षेत्रों के अंतर्गत नेदानिक मनोवैज्ञानिक अपनी योगयताओं का उपयोग सामान्य व असामान्य व्यक्तियों की सहायता करते हैं तथा अपनी व्यावसायिक के रूप में भी अपना भविष्य उज्जवल करते है।

13.12 सारांश

- सामान्यत: किसी अस्वस्थ व्यक्ति को औषध, शल्य आदि प्रविधियों से पुन: स्वस्थ बनाने की प्रक्रिया को उपचार या चिकित्सा की संज्ञा दी जाती है। मानसिक रूप से अस्वस्थ एवं सांवेगिक रूप से विक्षुब्ध व्यक्तियों की मनोवैज्ञानिक विधियों से उपचार करना, नैदानिक हस्तक्षेप कहा जाता हैं तथा उपचार करने वाले व्यक्ति को नैदानिक मनोवैज्ञानिक कहा जाता हैं।
- आधुनिक समय में नैदानिक मनोविज्ञान एक प्रमुख पेशे के रूप में उभर कर सामने आया हैं। फेयर्स (Phares,1984) के अनुसार नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के निम्नांकित छ: प्रमुख कार्य क्षेत्र जिसमें नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपनी एक व्यक्ति एवं व्यावसायिक के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते (Scope) हैं।
- नैदानिक मनोवैज्ञानिक एक परामर्श कर्ता, शिक्षक और प्रबंधक के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

- नैदानिक मनोवैज्ञानिक एक अचछा व्यक्ति एवं कुशल व्यावयायिक के रूप में व्यक्तियों को अपनी सहायता प्रदान करता हैं।

13.13 प्रश्नोत्तर

1- नैदानिक हस्तक्षेप को समझाये?
2- नैदानिक हस्तक्षेप के लक्ष्यों को बताइये?
3- नैदानिक हस्तक्षेप के प्रकारों का वर्णन कीजिए?
4- नैदानिक मनोवैज्ञानिक प्रविधियों की व्याख्या करिये?
5- नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के कार्यक्षेत्रों का वर्णन कीजिये?
6- नैदानिक मनोवैज्ञानिको की भूमिकाओं की तुलनात्मक व्याख्या करिये?
7- आप कैसे बताएगें कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक एक अच्छे व्यक्ति व व्यासायिक हैं?

13.14 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press

इकाई - 14

मनोचिकित्सकों की समस्याएं, प्रशिक्षण सीमाएं, वास्तविक लक्ष्य तथा स्थानांतरण एवं भिड़ंत प्रतिस्थापन

Issues faced by therapist, learning the limits:transference and counter transference,establishing realistic goals,encounter

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मनोचिकित्सकों की समस्याओं

14.4 मनोचिकित्सक के प्रशिक्षण की सीमाएं

14.5 स्थानान्तरण की अवस्था

14.6 प्रतिस्थापन की अवस्था

14.7 मनोचिकित्सक के वास्तविक लक्ष्य

14.8 भिड़ंत समूह चिकित्सा

14.9 भिड़ंत समूह के प्रकार

14.10 भिड़ंत समूह की प्रभावशीलता

14.11 भिड़ंत समूह का मूल्यांकन

14.12 सारांश

14.13 प्रश्नोत्तर

14.14 संदर्भसूची

14.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में मनोचिकित्सकों की समस्याओं के बारे में बताया गया हैं। निदान एवं मूल्यांकन से संबंद्धसमस्याओं, नैदानिक परीक्षणों से संबंद्धसमस्याओं, उपचार से संबंद्धसमस्याओं, शोध एवं

शिक्षण से संबंद्धसमस्याओं, परामर्श एवं प्रशासनिक कार्यों से संबंद्धसमस्याओं आदि वे समस्याओं हैं जो मनोचिकित्सकों के व्यावसायिक जीवन में बाधाएं उत्पन्न करती हैं। इसके साथ उनकी कुछ प्रशिक्षण की सीमाएं हैं जो उनके कार्यक्षेत्र को काफी प्रभावित करती हैं। ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम, नैदानिक इंटरशिप, उतर डाक्टरीय प्रशिक्षण एवं सतत शिक्षा, उप डाक्टरीय प्रशिक्षण आदि वे सीमाएं हैं जिन्हें सीखने के बाद ही मनोचिकित्सक के रूप में अपने व्यवसाय का प्रारंभ कर सकते हैं।

इसी इकाई के अंर्तगत भिड़ंत समूह चिकित्सा पर भी प्रकाश डाला गया हैं।

14.2 उद्देश्य

- मनोचिकित्सकों की समस्याओं के बारे में ज्ञान प्राप्त होगा।
- मनोचिकित्सक के प्रशिक्षण की सीमाओं के बारे में जानकारी पायेंगे।
- स्थानान्तरण की अवस्था को समझ सकेंगे।
- प्रतिस्थापन की अवस्था को जान पायेंगे।
- वास्तविक लक्ष्यों के बारे में ज्ञान प्राप्त होगा।
- भिड़ंत समूह चिकित्सा का अर्थ एवं स्वरूप को समझ सकेंगे
- भिड़ंत समूह के प्रकारों के बारे में समझ सकेंगे।
- भिड़ंत समूह की प्रभावशीलता के बारे में जानकारी मिलेगी।
- भिड़ंत समूह का मूल्यांकन कर पायेंगे।

14.3 मनोचिकित्सकों की समस्याओं (Issues faced by Therapist)

नैदानिक मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक ऐसी प्रयुक्त शाखा हैं जिसमें मनोवैज्ञानिक या मनोचिकित्सक की कुल संख्या का उच्चतम प्रतिशत कार्यरत हैं। यद्यपि मनोविज्ञान की इस शाखा का कार्यक्षेत्र काफी विस्तृत हैं तथा इस क्षेत्र में काफी शोध भी हो रहे हैं, फिर भी इस शाखा में कुछ समस्याओं हैं जिसे नैदानिक मनोवैज्ञानिक अपने विभिन्न तरह की भूमिकाओं में अनुभव करते हैं। ऐसी कुछ प्रमुख समस्याओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- निदान एवं मूल्यांकन से संबंद्धसमस्याओं
2- नैदानिक परीक्षणों से संबंद्धसमस्याओं
3- उपचार से संबंद्धसमस्याओं
4- शोध एवं शिक्षण से संबंद्धसमस्याओं
5- परामर्श एवं प्रशासनिक कार्यों से संबंद्धसमस्याओं

इन समस्याओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- **निदान एवं मूल्यांकन से संबंद्ध समस्याओं** - नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का प्रमुख कार्य मानसिक रोगियों का मूल्यांकन कर उनके रोग के स्वरूप को निश्चित करना होता हैं। इस प्रक्रिया में उन्हें कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। जैसे- मूल्यांकन का प्रारूप क्या होगा? क्या मूल्यांकन प्रेक्षण के रूप में किया जाए या परीक्षण प्रक्रिया के रूप में या साक्षात्कार के रूप में

किया जाए? इसके अलावा मूल्यांकन करते समय नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को कभी कभी यह भी निश्चित करने में समस्या उठ खड़ी होती हैं कि क्या अमुक रोगी को अस्पताल में रखकर उपचार करना ठीक होगा या बाहर ही उपचार उपयुक्त होगा?

इन समस्या के अलावा दूसरी समस्या जो रोग के उचित्त निदान से होती हैं। ऐसी स्थिति में नैदानिक मनोवैज्ञानिक रोगी की समस्या को ठीक से नहीं समझ पाते हैं और उसका गलत निदान करके अनुचित्त चिकित्सीय प्रविधि अपना लेते हैं जिनसे रोगी की समस्या रोगी की समस्या सुलझने बजाएँ और भी अधिक उलझ जाती हैं।

2- **नैदानिक परीक्षणों से संबंद्धसमस्याओं** -

नैदानिक मनोवैज्ञानिक मानसिक रोगों के स्वरूप को सही सही पहचान करने के लिए कुछ विशेष मनोवैज्ञानिक परिक्षण का प्रयोग करते हैं। जिन्हें नैदानिक मनोवैज्ञानिक नैदानिक परीक्षण कहते हैं। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को इन परीक्षणों के संबंद्धभी कई समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। ऐसी समस्याओं मुख्यत: निम्न प्रकार की होती हैं-

1- किस तरह से एक विश्वसनीय तथा वैद्य परिक्षण का निर्माण किया जा सकता हैं?

2- उपलब्ध परीक्षणों की सार्थकता कैसे बढ़ायी जा सकती हैं?

3- इस बात की पहचान कैसे की जाए कि कौन सा परीक्षण किस तरह के रोगी के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं?

4- इन परीक्षणों के परिणाम पर रोग के उपचार करने में कहां तक भरोसा किया जा सकता हैं।

उपयुक्त कुछ समस्याओं ऐसी हैं जिनका समाधान अभी तक नहीं हो पाया हैं। फलस्वरूप नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को इन परीक्षणों के आधार पर रोग के निदान करने तथा उनका उपचार करने में काफी सर्तकता बरतनी पड़ती हैं।

3- **उपचार से संबंद्ध समस्याओं** -

नैदानिक मनोविज्ञान मानसिक रोगों के उपचार का विज्ञान हैं। उपचार में सफलता नैदानिक मनोवैज्ञानिकों अपनी व्यक्तिगत सफलता मानते हैं। लेवानडोस्की के अनुसार, उपचार कार्य में भी नैदानिक मनोवैज्ञानिकों की कुछ समस्याओं से जुझना पड़ता हैं।जैसे-

क्या रोगी को वैयक्तिक चिकित्सा दी जाएँ या सामूहिक चिकित्सा दी जाए?

क्या रोगी के लिए शाब्दिक मनोचिकित्सा असंवेदीकरण से अधिक श्रेष्ठ साबित होगी?

चिकित्सीय सत्र में रोगी के साथ किस तरह का संबंधऔर ऐसा संबंधकिस सीमा तक रखना चाहिए?

चिकित्सा सत्र का अन्त किस प्रकार किया जाना चाहिए? आदि आदि।

इन समस्याओं का समाधान इतना तकनीकी हैं कि आज भी नैदानिक मनोवैज्ञानिक इसका हल नहीं खेाज पाये हैं।

4- **शोध एवं शिक्षण से संबंद्धसमस्याओं**

मनोचिकित्सकों की कुछ समस्याओं शिक्षण तथा कुछ समस्याओं शोध कार्यों से संबंधित होती हैं। किसी भी विज्ञान की प्रगति का आधार उनका शोध कार्य होता हैं। यह युक्ति नैदानिक मनोविज्ञान के लिए अपवाद नहीं हैं। मनोचिकित्सकों को तरह-तरह के शोध करने पडते हैं। इन शोध कार्यों में उन्हें काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। मनोचिकित्सकों को जब मस्तिष्कीय विकृतियों के क्षेत्र में जब शोध करना पड़ता हैं तो यह उनके लिए एक चुनौती का कार्य होता हैं। खास

कर जब विकृति का कारण आंगिक होता हैं, तो ऐसी परिस्थितियों में मनोचिकित्सकों को मनोविज्ञानी का सहारा लेना पड़ता हैं। इस तरह की अनिवार्य निर्भरता में उन्हें इन लोगों का उतना सहयोग नहीं मिल पाता जितना की मिलना चाहिए। परिणामस्वरूप शोध कार्य में बाधा पड़ने लगती हैं। शिक्षण से संबंधित समस्या भी मनोचिकित्सकों के लिए चुनौतिपूर्ण साबित हुआ हैं। मनोचिकित्सकों को मनोविकृति, परीक्षण कार्य, साक्षात्कार कार्य, चिकित्सा, व्यक्तित्व सिद्धांत आदि विषयों में शिक्षण कार्य करने पडते हैं तो उनके सामने निम्न समस्याओं उत्पन्न होती हैं-

जैसे -सभी विषयों का शिक्षण क्या एक ही विधि जैसे भाषण विधि से करना उपयुक्त होगा?

इस मूल समस्या के सभी उतरों के बारे में आज भी मनोचिकित्सकों के बीच मतभेद हैं।

5- परामर्श एवं प्रशासनिक कार्यों से संबद्ध-

नैदानिक मनोविज्ञान की कुछ समस्याओं परामर्श एवं प्रशासन से संबंधित हैं क्योंकि मनोचिकित्सकों के सामने को ऐसे कार्यों में भी हाथ बटाना पड़ता होता हैं। मनोचिकित्सकों को इस संदर्भ में निम्नांकित समस्याओं उठानी पड़ती हैं-

परामर्श का प्रारूप क्या होना चाहिए?

क्या परामर्श प्रत्येक केस के लिए अलग-अलग दिया जाना चाहिए?

केस की समस्याओं को देखते हुए सामान्य परामर्श दिया जाना चाहिए?

किस तरह का परामर्श किस परिस्थिति में अधिक प्रभावी होगा आदि?

इसके अलावा मनोचिकित्सकों को प्रशासनिक कार्यों समसयाओं का भी सामना करना पड़ता हैं। जैसे-उन्हें समय समय पर यह निश्चित करना होता हैं कि रोगी का रिकार्ड ठीक ढ़ंग से संपोषित किया जा रहा हैं या नहीं?

इस तरह के रिकार्ड को किस प्रारूप से सुसज्जित किया जाए ताकि उससे अधिक से अधिक अर्थ निकल सके?

मानसिक अस्पताल के अन्य कर्मचारी रोगी के साथ सहयोग करते हैं या नहीं, तो उन्हें सहयोग दिखलाने के लिए किस तरह से प्रेरित किया जा सकता हैं?

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता हैं कि नैदानिक मनोविज्ञान की अपनी कुछ विशेष समस्याओं हैं जिनके कारण मनोचिकित्सकों को अपने कार्य में बाधाओं का सामना करना पड़ता हैं।

14.4 मनचिकित्सकों की प्रशिक्षण सीमाएं (Learning Limits of Therapist)

नैदानिक मनोविज्ञान मनोविज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण प्रयुक्त शाखा हैं और अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ के आकडों के आधार पर अकेले नैदानिक मनोविज्ञान का क्षेत्र 43 प्रतिशत हैं। तथा बाकी 57 प्रतिशत क्षेत्र में मनोविज्ञान की अन्य सभी शाखाएं हैं। अर्थात् कुल मनोवैज्ञानिकों का करीब 43 प्रतिशत सिर्फ नैदानिक मनोवैज्ञानिक हैं। परन्तु मनोचिकित्सकों को अपने व्यवसाय के लिए कुछ व्यावसायिक प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता हैं। अमेरिका ने नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का प्रशिक्षण एवं शिक्षा सामान्यत: निम्नांकित चार स्तरों पर सम्पन्न होती हैं-

1- ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम

2- नैदानिक इंटर्नशिप

3- उत्तर डाक्टरीय प्रशिक्षण एवं सतत शिक्षा

4- उप डाक्टरीय प्रशिक्षण

इन चारों स्तरों पर मनोचिकित्सकों को दी जाने वाली प्रशिक्षण एवं शिक्षा का वर्णन निम्नांकित हैं-

1- ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम- ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम में औपचारिक ढ़ंग से 'नैदानिक प्रशिक्षण कार्यक्रम' चलाये जाते हैं। इस प्रोग्राम या कार्यक्रम के सफलीभूत होने पर ऐसे प्रशिक्षित मनोचिकित्सक को डाक्टरीय उपाधि प्रदान की जाती हैं। सामान्यत: इस कार्यक्रम के लिए 5 साल की अवधि दी जाती हैं। इसके प्रथम कुछ सालों में मनोवैज्ञानिकों को सामान्य मनोविज्ञान, समाज मनोविज्ञान, विकासात्मक मनोविज्ञान, सांख्यिकी, शोध प्रणाली, व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, असामान्य मनोविज्ञान, मूल्यांकन एवं विधि, मनोश्चिकित्सा तथा सामुदायिक हस्तक्षेप के क्षेत्र में पाठयोजनाएं तथा सेमिनार में भाग लेना होता हैं। उसके बाद उन्हें विशिष्ट नैदानिक पाठयोजनाएं तथा कुछ व्यवहारिक अनुभवों प्राप्त करने के लिए रोगियों की समस्याओं को समझने एवं उससे निपटने का प्रशिक्षण दिया जाता हैं। इसके साथ ही साथ उसे कुछ शोध कार्य भी करना होता हैं अन्त में उसे एक साल का पूर्ण कालीन इंर्टनशीप किसी मान्यता प्राप्त नैदानिक एजेन्सी में पूरा करना पड़ता है। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का यह ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम की उन्मुखता तथा बल मे थोड़ा अन्तर होता हैं कुछ ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रम में वैयक्तिक मनोचिकित्सक व्यवहार परिमार्जन पर बल डालता हैं। जबकि की कुछ ऐसे प्रशिक्षणों में सामुदायिक मनोविज्ञान तथा शोध आदि पर तुलनात्मक रूप से अधिक बल डाला जाता हैं। इन विभिन्नता के बावजूद ऐसे कार्यक्रमों द्वारा प्रशिक्षण देने में नैदानिक संकायों द्वारा प्रशिक्षण पाने वाले ऐसे मनोवैज्ञानिकों में मनोश्चिकित्सा या संवेदनशीलता प्रशिक्षण के माध्यम से मानवीय-कौशलों एवं व्यक्तित्व सामर्थ्यता गुण विकसित करने की भरपूर कोशिश की जाती हैं।

2- नैदानिक इंर्टरनशीप- इस तरह के प्रशिक्षण में किसी नैदानिक पर्यवेक्षक के निर्देशन में प्रशिक्षण पाने वाले मनोचिकित्सकों द्वारा व्यक्तित्व के सिद्धांतों मनोरोग तथा मनोश्चिकित्सा के प्रमुख संप्रत्यय के बारे में प्राप्त विशेष ज्ञान को पहले से अधिक तीक्ष्ण किया जाता हैं क्योंकि वे यहां मानव समस्याओं के साथ निपटने के लिए आवश्यक कौशलों का व्यवहारिक प्रयोग देखते हैं एवं स्वयं करते भी हैं ऐसे नैदानिक पर्यवेक्षण प्राय: मनोरोग विज्ञानी या अन्य मेडिकल डॉक्टर होते हैं इस तरह का इंर्टरनशीप प्राय: स्वतंत्र नैदानिक प्रशिक्षण केन्द्रों या मानसिक अस्पतालों में चलाये जाते हैं।

3- उतर डॉक्टरीय प्रशिक्षण एवं सतत शिक्षा -ऐसा देखा गया हैं कि नैदानिक मनोविज्ञान में डॉक्टरीय प्रोग्राम के बाद अधिक मनोचिकित्सक एक पेशे के रूप में अपनी जिम्मेदारी निभाना प्रारंभ कर देते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जिन्हें और भी अधिक स्पष्ट एवं बेहतर प्रशिक्षण की जरूरत होती हैं और ऐसे लोग उतर डॉक्टरीय प्रशिक्षण लेते हैं। प्राय: एक या दो साल का होता हैं यह प्रशिक्षण कई स्वतंत्र नैदानिक केन्द्रों या फिर विश्वविद्यालय के मनोश्चिकित्सा विभागों में या मनोविज्ञान विभागों में दिये जाते हैं इस तरह से उतर डाक्टरीय प्रशिक्षण का उद्देश्य मनोचिकित्सकों को विशिष्ट प्रशिक्षण प्रदान कर उनकी अभिरूचि एवं अभिक्षमता को अधिक जागरूक करना होता हैं। अल्बी के अनुसार ऐसे उतर डाक्टरीय प्रशिक्षण प्राप्त मनोचिकित्सक की सामर्थ्य ता उन नैदानिक मनोवैज्ञानिको से कहीं अधिक होती हैं जिन्हें ऐसे प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होती हैं। सतत शिक्षा द्वारा मनोचिकित्सक एक तरह से अनौपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त होता हैं दिन प्रतिदिन के कामों के साथ-साथ मनोचिकित्सक नये

नये जनरल एवं किताबों को पढते हैं और अन्य विशिष्ट लोगों का भाषण सुनते हैं। नैदानिक सम्मेलनों में भाग लेते हैं तथा अन्य पेशागत सभाओं में भाग लेते हैं वे अपने इन क्रियाकलापों से काफी कुछ अनोपचारिक रूप से सीख लेते हैं जिनसे उनकी सामर्थ्यता में काफी कुछ वृद्धि हो जाती हैं। कोरचिन के अनुसार सतत शिक्षा का यह कार्यक्रम चिकित्सा तथा इन्जीरियींग के क्षेत्र में मनोविज्ञान की तुलना में अधिक सक्रिय हैं। अत: इस क्षेत्र में समान लाभ प्राप्त करने के लिए इसकी सक्रियता को बढाने की जरूरत हैं।

4- उप डाक्टरीय प्रशिक्षण - अमेरिका में कुछ ऐसे प्रशिक्षण संस्थान हैं जहां मास्टर स्तर पर ही मनोचिकित्सकों को नैदानिक हस्तक्षेप का प्रशिक्षण दे दिया जाता हैं। इस तरह के प्रशिक्षण को उप डाक्टरीय प्रशिक्षण कहा जाता हैं। आधुनिक समय में उप डाक्टरीय प्रशिक्षण आवश्यकता इसलिए भी अधिक महसूस की गयी हैं कि डाक्टरीय प्रोग्राम द्वारा मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में बढते हुए प्रशिक्षण की मांग को पुरा करना संभव नहीं हो पा रहा हैं। इस ढ़ंग का उप डाक्टरीय प्रशिक्षण से मास्टर स्तर पर ही मनोवैज्ञानिकों को इतना प्रशिक्षित कर दिया जाता हैं। वह मानसिक स्वास्थ्य एवं मानवीय सेवाओं में अधिक से अधिक जिम्मेदारी संभाल सके। अधिकतर नैदानिक मनोवैज्ञानिको को जैसे- वाईन्डमैन,वेडनर,जैन्किस ने यह आशा व्यक्त कि हैं की निकट भविष्य में उपडाक्टरीय प्रशिक्षण से मानसिक स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रमों को अधिक स्वास्थ्य सेवा का लाभ मिल सके।

आधुनिक समय में नैदानिक प्रशिक्षण के क्षेत्र में कुछ नयी-नयी दिशाएं एवं आयाम देखने को मिलते हैं यद्यपि आजकल नैदानिक प्रशिक्षण नैदानिक मनोविज्ञान में पीएच.डी. मिलने के बाद ही पूर्ण समझी जाती हैं। फिर भी इसके विकल्प में कुछ पेशेवर मॉडल विकसित किये गये हैं जिनसे नैदानिक प्रशिक्षण को नयी दिशा मिली हैं।

भारत में जहां तक मनोचिकित्सकों का प्रशिक्षण का प्रश्न हैं इसका आकार प्रकार काफी सीमित हैं भारत में तीन ऐसे महत्वपूर्ण नैदानिक केन्द्र है जहां नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का प्रशिक्षण इंटर्रनशीप के साथ दिया जाता हैं वे तीन केन्द्र हैं अखिल भारतीय मानसिक स्वास्थ्य, बैगंलोर संस्थान, सेन्ट्रल इंस्टयूट ऑफ साइकेटी, रांची तथा लुम्बिनी पार्क मानसिक अस्पताल, कलकता। भारतीय विश्वविद्यालय में अमेरिकन विश्वविद्यालय के समान अभी नैदानिक मनोविज्ञान में पीएच.डी. की उपाधि देने की परंपरा भी प्रारभ हो गयी हैं।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता हैं कि मनोचिकित्सकों का प्रशिक्षण एक जटिल कार्य हैं तथा इसके प्रति लोगों का दृष्टिकोण भिन्न भिन्न हैं फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि एक प्रशिक्षित मनोचिकित्सक की भूमिका एक अप्रशिक्षित मनोविज्ञान की तुलना में अधिक महत्व रखता हैं।

14.5 स्थानान्तर की अवस्था (Stage of Transference)

चिकित्सीय सत्र के दौरान जैसे-जैसे रोगी एवं चिकित्सक के बीच अन्त:क्रिया होते जाती हैं, दोनों के बीच जटिल एवं सांवेगिक नये संबंधभी उभर कर सामने आ जाते हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि रोगी अक्सर अपने गत जिंदगी के अनुभव में जैसी मनोवृति शिक्षक, माता-पिता या दोनों के प्रति बना रखी होती हैं वेसी ही मनोवृति वह चिकित्सक के प्रति भी विकसित का लेता हैं। इसे ही स्थानान्तरण की संज्ञा दी जाती हैं। स्थानान्तरण विकसित होने से रोगी शांत मन से एवं पूर्ण विश्वास के साथ अपने विचारों की अभिव्यक्ति करता हैं। उसे यह विश्वास हो जाता हैं कि चिकित्सक ऐसे

व्यक्ति हैं जिनके सामने वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं एवं मानसिक संघर्षों के बारे में खुलकर अभिव्यक्त कर सकता हैं।

स्थानान्तरण के तीन प्रकार होते हैं-

1. धनात्मक स्थानान्तरण - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपने स्नेह एवं प्रेम की प्रतिक्रियाओं को दिखलाता हैं।
2. ऋणात्मक स्थानान्तरण - इसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपनी घृणा एवं अलगाव की प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करता हैं।
3. प्रति स्थानान्तरण - इसमें विश्लेषक ही रोगी के प्रति स्नेह, प्रेम एवं संवेगात्मक लगाव दिखता हैं।

धनात्मक स्थानान्तरण से चिकित्सा का वातावरण और भी सोहार्दपूर्ण बन जाता हैं। और रोगी स्वयं का सुरक्षित अनुभव करता हैं तथा वह अचेतन की दमित इच्छाओं को खुलकर अभिव्यक्त करता हैं।

ऋणात्मक स्थानान्तरण में चिकित्सक रोगी की घृणा एवं आक्रामक व्यवहारों का केन्द्र होता हैं यहां उन्हें काफी सूझ-बुझ से काम लेना पड़ता हैं ताकि चिकित्सा में प्रगति आगे की और बनी रहे।

14.6 प्रतिस्थापन की अवस्था (Stage of Counter-Transference)

इस तरह के स्थानान्तरण में चिकित्सक ही रोगी के प्रति प्रेम, स्नेह एवं संवेगात्मक लगाव दिखाता हैं। हालांकि शोध सबूत परस्पर विरोधी हैं। परन्तु कुछ अध्ययनों में पाया गया हैं कि जब रोगियों को चिकित्सक द्वारा अधिक पसंद किया जाता हैं तथा जब चिकित्सक उनके प्रति अधिक धनात्मक संवेगात्मक लगाव दिखाते हैं, तो ऐसे रोगी का चिकित्सीय परिणाम अधिक अनुकूल होता हैं। इतना ही नहीं, कारसोना ने तो अपने अध्ययन में यह भी पाया कि ऐसे रोगी की चिकित्सा की अवधि भी लम्बी होती हैं। कुछ अध्ययनों में यह भी पाया गया कि चिकित्सक के नैतिक मूल्यों का भी प्रभाव चिकित्सा के परिणाम पर पड़ता हैं। जैसे - रोजेन्थल ने अपने अध्ययन में पाया कि जो रोगी चिकित्सक द्वारा दिए गए चिकित्सा से अधिक लाभान्वित हुए थे, वे अपने नैतिक मूल्यों में चिकित्सक के नैतिक मूल्यों में चिकित्सक के नैतिक मूल्यों के अनुरूप परिवर्तन कर लिए थे।

स्पष्ट हुआ कि चिकित्सक के कुछ गुण होते हैं जिनसे चिकित्सा के परिणाम स्पष्ट रूप से प्रभावित होते हैं।

14.7 मनोचिकित्सक के वास्तविक उद्देश्य

मनोचिकित्सक मनोचिकित्सा प्रारंभ से पहले कुछ वास्तविक उद्देश्य स्थापित करते हैं। तथा उनके आधार पर चिकित्सा कार्य को संपन्न करने हैं। और मनचिकित्सक उनका अनुसरण करते हुए चिकित्सा की प्रक्रिया जारी रखते है। होकानसन (Hokanson,1983) ने इन्हें पांचक्रमों में क्रमबद्ध किया हैं-

1- आरंभिक सम्पर्क
2- मूल्यांकन

3- उपचार का लक्ष्य
4- उपचार को क्रियान्वयन करना
5- समायन, मूल्यांकन तथा अनुवर्तन

इन पांचों क्रमों का वर्णन निम्नांकित हैं -

1- **आरंभिक सम्पर्क** - मनोचिकित्सक का पहला उद्देश्य आरंभिक संपर्क हैं जिसमें क्लायंट उपचार गृह में प्रवेश करता हैं, तथा चिकित्सक से पहला संपर्क करता हैं। इसमें रोगी के मन में तरह-तरह की आंशकाएं, शक, चिन्ता आदि होती हैं। इस अवस्था में रोगी को यह बताया जाता हैं कि उपचार गृह में क्या होता हैं तथा रोगियों को दी जाने वाली सेवाओं से अवगत कराया जाता हैं। इसका क्लायंट की मनोवृति पर तथा चिकित्सा में सहयोग देने की इच्छा पर अनुकूल प्रभाव पड़ता हैं।

2- **मूल्यांकन** - मनोचिकित्सक यह निश्चित कर लेता हैं कि क्लायंट से आगे सम्पर्क रखा जा सकता हैं, तो उसकी समस्याओं के मूल्यांकन के लिए उसे फिर कुछ दिनों तक उपचार गृह में बुलाया जाता हैं। क्लायंट की समस्या के वास्तविक स्वरूप को ध्यान में रखते हुए कई तरह की मूल्यांकन प्रविधियों का उपयोग किया जाता हैं। विभिन्न तरह के मनोवैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा रोगी के बारे में कई तरह की सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं। कभी-कभी क्लायंट के परिवार के सदस्यों एवं उसके मित्रों से भी सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं। तथा कई बार क्लायंट को ही विभिन्न परिस्थितियों में अपने व्यवहारों, चितंनों एवं भावों का आत्म-निरीक्षण करके उसके बारे में बतलाने के लिय कहा जाता हैं कई कुछ क्लायंट की समस्याओं से निबटने के लिये मेडिकल डॉक्टर से भी सम्पर्क करना आवश्यक होता हैं।

3- **उपचार का लक्ष्य** - मूल्यांकन आंकडों को समन्वित करने के बाद चिकित्सक तथा क्लायंट एक साथ बैठकर समस्या के बारे में विचार विमर्श करते हैं। इसमें क्लायंट और चिकित्सक के बीच एक तरह का अनुबंध तैयार किया जाता हैं जिसमें चिकित्सक क्लायंट की समस्याओं को दूर करने का वादा करता हैं। और रोगी अपनी इच्छाओं एवं उद्देश्यों का उल्लेख करता हैं।
इस अनुबन्ध में चिकित्सा का लक्ष्य, चिकित्सा की अवधि, चिकित्सा का सामान्य प्रारूप, चिकित्सीय सत्र की आवृति, खर्च, क्लायंट की जवाबदेहियों आदि का भी उल्लेख होता हैं।

4- **उपचार का क्रियान्वयन** - मनचिकित्सक इस अवस्था में चिकित्सा का विशिष्ट प्रारूप तैयार किया जाता हैं। जब आरंभिक लक्ष्य निर्धारित कर लिये जाते हैं, तो यह निश्चित किया जाता हैं कि मनचिकित्सा का कौनसा प्रारूप रोगी या क्लायंट के लिए अधिक उपयुक्त होगा। क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा, व्यवहार चिकित्सा, मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा आदि में से कोई भी चिकित्सा द्वारा रोगी का उपचार किया जाता हैं। क्लायंट की समस्याओं के संदर्भ में चिकित्सा के प्रारूप के बारे में विचार विमर्श किया जाता हैं।

5- समापन, मूल्यांकन तथा अनुवर्तन - जब चिकित्सक को विश्वास हो जाता हैं कि क्लायंट अपनी समस्याओं को स्वयं ही निबटा लेता हैं, समापन की प्रक्रिया प्रारंभ की जाती हैं। चिकित्सा सत्र की बारंबारता को धीरे-धीरे घटाया जाता हैं। समापन की अवस्था में चिकित्सक रोगी के मन में उत्पन्न होने वाले भावनाओं का भी ख्याल करता हैं।
चिकित्सा के दौरान रोगी में हुई प्रगति का भी मूल्यांकन किया जाता हैं। संबंधित आकडों को एकत्रित करके इसलिए रखा जाता हैं कि रोगी अपने द्वारा किये गये प्रयासों का तथा उपचारगृह

द्वारा किये गये प्रयासों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन स्वयं करे। इससें मनोचिकित्सक की प्रतिभा एवं कौशल का उचित्त जानकारी लोगों को होती हैं।

अनुवर्तन द्वारा चिकित्सा परिणाम की प्रभावशीलता का अनुमान लगाया जाता हैं।

इस प्रकार स्पष्ट हे कि मनोचिकित्सक कुछ वास्तविक निर्धारित लक्ष्यों के साथ मनो चिकित्सा की प्रक्रिया को संपन्न करते हैं और उन्हें ही अपने व्यवसाय के वास्तविक लक्ष्यों के रूप में स्वीकार करते हैं और उन्हें पूरा करने का हर संभव प्रयास करते हैं।

14.8 भिड़ंत समूह चिकित्सा (Encounter Group Therapy)

भिड़त समूह चिकित्सा एक अन्य प्रकार एक अन्य समूह चिकित्सा हैं जिसकी नेशनल ट्रेनिंग लेबोरेट्री में किये गये शोध एवं कार्यशालाओं से उत्पन्न अनुभूतियों हैं। इसका उद्देश्य सामूहिक प्रक्रियाओं जिसमें समूह के सदस्यों को प्रेक्षक तथा सहभागी दोनों के रूप में कार्य करना होता हैं, द्वारा पुनशिक्षित किया जाता हैं। भिडंत समूह से तात्पर्य व्यक्तियों के वैसे समूह से होता हैं जो अपने भाव, व्यवहार एवं अंत:क्रिया के बारे में पहले से अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये एक विशेष स्थान पर मिलते हैं। भिड़त समूह चिकित्सा कर उद्देश्य व्यक्तियों को आत्म सिद्ध तथा उत्तम अन्तरवैयक्तिक संबंध विकसित करने में मदद करना होता हैं। इस चिकित्सा की निम्नांकित विशेषताएं महत्वपूर्ण बतायी गयी हैं-

1- भिड़त समूह चिकित्सा में सदस्यों की संख्या सामान्यत: 6 से 20 तक होती हैं जो आमने-सामने की परिस्थिति में एक दूसरे से शारीरिक संपर्क करते हुए अंत:क्रिया करते हैं।
2- ऐसे समूह में वर्तमान अनुभूतियों पर अधिक तथा गत एवं बाहरी अनुभूतियों पर अधिक तथा गत एवं बाहरी अनुभूतियों पर कम से कम बल डाला जाता हैं।
3- भिड़त समूह चिकित्सा में सदस्यों में अशाब्दिक क्रियाओं तथा शारीरिक संपर्क करने पर बल डाला जाता हैं।
4- भिड़त समूह चिकित्सा में चिकित्सक तथा अन्य सदस्यों का स्तर लगभग एक समान होता हैं।
5- ऐसे चिकित्सा समूह में चिकित्सक एक प्रेक्षक तथा सहभागी दोनों की भूमिका निभाते हैं।
6- ऐसे चिकित्सा समूह में भाग लेने से सदस्यों में आत्म-प्रकटीकरण, ईमानदारी, अंतवर्यक्ति पुनर्निवेशन, खुलेपन, दूसरों का सामना करने की क्षमता, भावात्मक अभिव्यक्ति आदि के गुण का विकास मुख्य रूप से होता हैं।
7- भिड़त समूह चिकित्सा का सत्र की अवधि छोटी एवं कम संरचित होता हैं।

स्पष्ट हुआ हैं कि भिड़त समूह चिकित्सा में व्यवहत समूह की कुछ अपनी विशेषताएं होती हैं। जिसके कारण भिड़त समूह चिकित्सा सामूहिक चिकित्सा के अन्य चिकित्सा ये भिन्न हैं।

14.9 भिड़ंत समूह के प्रकार (Types of Encounter Therapy)

भिंड़त समूह चिकित्सा के कई प्रकार हैं जो निम्नांकित छ: हैं-

1- मौलिक भिड़ंत समूह
2- अतिलंबित भिड़ंत समूह
3- नंगा अतिलंबित भिड़ंत समूह

4- गेस्टाल्ट भिड़ंत समूह
5- संव्यवहार भिड़ंत समूह
6- साइग्नेनोन गेम्स

इन सबका वर्णन निम्नांकित हैं-

1- **मौलिक भिड़त समूह चिकित्सा** -मौलिक चिकित्सा समूह का प्रतिपादन का श्रेय रोजर्स को जाता हैं। इस तरह के समूह का मुख्य उद्देश्य लोगों में व्यक्तिगत वर्द्धन को बढ़ाना हैं। इस समूह में क्लायंट केंद्रित चिकित्सा का अधिक से अधिक पालन किया जाता है। समूह का नेता एक ऐसा परानुभूतिक सामूहिक वातावरण तैयार करता हैं। जिसमें सदस्यों को सम्मानित करता हैं तथा साथ-ही-साथ उन्हें अपने किसी भी तरह के निर्णय से मुक्त रखता हैं। इसकी परिस्थिति काफी असंरचित्त होती हैं तथा सदस्यों स्वायतता अधिक होती हैं तथा पारस्परिक विश्वास विकसित होने लगता हैं। इस विश्वास से व्यक्ति अपने वास्तविक भाव अभिव्यक्त करता है। जिससे बाद में आत्म स्वीकृति उत्पन्न होती हैं तथा आंतरिक अंत:शक्ति भी मजबूत होती है।
2- **अतिलम्बित भिड़ंत समूह**- इस समूह में सदस्यों में सतत तथा तीव्र अंत:क्रियाएं 24 घंटा से 36 घंटा तक लगातार होते रहता हैं। इस अवधि में सदस्यगण जिनकी संख्या सामान्यत: 10 से 15 तक होती हैं, खाने, पीने, साने आदि क्रियाओं में कम से कम समय व्यतीत करते हैं। इस दौरान उन्हें सारी क्रियाएं वही रह कर करनी होती हैं। समूह से अलग रहकर अर्थात् उपसमूह बनाना आदि क्रियाएं वर्जित होती हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि सदस्यों में एक तरह का दबाव उत्पन्न होता हैं। जिससे सदस्यों को कुछ चिकित्सीय लाभ भी होता हैं।

   समूह की प्रारंभिक अवस्था में सदस्यगण एक दूसरे के साथ मात्र औपचारिक ढंग से बातचीत करते हैं। परन्तु धीरे-धीरे औपचारिक बातचीत में कमी आते जाती हैं। और लोग अनौपचारिक ढ़ंग से बातचीत करता प्रारंभ कर देते हैं।

   इस समय के अंतिम अवस्था में सदस्यों में विश्रांति की उत्पति होती हैं, समूह के साथ अपनापन का भाव उत्पन्न होता हैं तथा समूह में और अधिक रहते की इच्छा तीव्र हो जाती है। कहने का तात्पर्य यह हैं कि जैसे ही सत्र की समाप्ति के करीब आता हैं। सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति धनात्मक भाव तथा स्नेह एवं घनिष्ठता की अनुभूति होती हैं। इसी कारण इस अवस्था को प्यार का उत्सव की अवस्था कहा जाता हैं।
3- **नंगा अतिलम्बित भिड़ंत समूह** - इस तरह के भिड़त समूह का प्रतिपादन विनडीय द्वारा किया गया। यह समूह लगभग अतिलम्बित समूह के समान ही होता हैं तथा इसकी प्रविधि की अवधि भी लगभग समान होती हैं। इसमें भाग लेने वाले सभी सदस्य अपने कपड़े उतार कर एक-दूसरे से संपर्क करते हैं परन्तु लैंगिक क्रिया वर्जित होती हैं। इस समूह की मान्यता यह होती हैं कि दैहिक अनावरण होने से व्यक्तियों में सांवेगिक प्रकटीकरण होती हैं। और सांवेगिक प्रकटीकरण से व्यक्ति को एक तरह का मानसिक सुख प्राप्त होता हैं तथा उसके व्यक्तित्व का विकास होता हैं। विनडीय का मत हैं कि नंगा भिड़त समूह चिकित्सा उन व्यक्तियों के लिये अधिक लाभकारी या गुणकारी सिद्ध होता हैं जिनमें लैंगिक समस्याओं होती हैं या जिनका अपने शरीर के बारे में विशेष कारणों से विकृत विकसित हो जाती हैं।
4- **गेस्टाल्ट भिड़ंत समूह** - जब भिड़ंत समूह में फ्रिज पल्स द्वारा प्रतिपादित गेस्टाल्ट चिकित्सा का उपयोग किया जाता हैं। इस तरह की चिकित्सा पद्धति को गेस्टाल्ट भिड़ंत समूह चिकित्सा

कहा जाता हैं। समूह की क्रियाविधि में समूह का प्रत्येक सदस्य एक विशेष स्थान पर बैठता हैं तथा समूह का नेता उससे तरह तरह के प्रश्न पुछता हैं। जिनका उतर उन्हें देना होता हैं। समूह के अन्य सभी सदस्य चिकित्सक तथा सदस्य की अन्त:क्रिया का प्रेक्षण करते हैं। इस तरह बारी बारी से प्रत्येक सदस्य को उस विशेष जगह बिठाकर चिकित्सक द्वारा प्रश्न पुछे जाते हैं। सदस्य को उस समय अपने भीतर उत्पन्न अनुभूतियों एवं संवेदनों पर विशेष ध्यान देने के लिए कहा जाता हैं।

इस तरह भिड़ंत समूह चिकित्सा में कभी-कभी चिकित्सा तथा सदस्य विशेष तरह की भूमिका करके अन्त:क्रिया करते हैं।

5- **संव्यवहार विश्लेषण भिड़ंत समूह** - जब वर्मी द्वारा प्रतिपादित की गयी थी। संव्यवहार विश्लेषण में एक ही व्यक्ति के भीतर तीन तरह की भूमिका अर्थात् चाइल्ड, एडल्ट तथा पेरन्ट का विश्लेषण होता हैं न कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ हुए अंत:क्रियाओं का। इस तरह के समूह में समूह का नेता सदस्यों को विभिन्न गेम्स खेलते समय उनके व्यवहारों का अर्थ समझता हैं तथा उसकी एक विशेष व्याख्या करता हैं।

गेम्स से तात्पर्य एक ऐसे संगठित कर्मकाण्ड से होता हैं जिसके पीछे उनके विशेष उद्देश्य छिपे रहते हैं। इस तरह के समूह में नेता एक शिक्षक की भूमिका में होता हैं ताकि वह सदस्यों को गेम्स का अर्थ समझाकर उन्हें उससे मुक्ति दिला सके।

6- **साइनेनोन गेम्स** - साइनेनोन औषध व्यसनियों का एक आत्म मदद संगठन हैं। इसी के नाम पर इस तरह के गेम्स को साइनेनोन गेम्स कहा जाता हैं। यह गेम्स एक ऐसा भिड़ंत समूह होता हैं जिसमें सदस्यों को क्रोध तथा इर्ष्या का खुला, प्रत्यक्ष एवं बिना किसी तरह के अवरोध की अभिव्यक्ति शाब्दिक रूप से करने के लिए कहा जाता हैं। यह गेम 3 घंटे तक चलता हैं जिसमें उन व्यक्तियों की पहचान कर ली जाती हैं जो सबसे अधिक आक्रामकता दिखलाता हैं। गेम के सत्र में के बाद यह देखा जाता हैं कि सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति भावुक समर्थन एवं प्रोत्साहन का वातावरण कायम हो जाता हैं। इसमें सदस्यों द्वारा दिखलाये गये ईष्या, आलोचना एवं उपहास का उद्देश्य सदस्यों के सामान्य सुरक्षात्मक उपायों एवं मनगढंत कथाओं जिनके पीछे वह अपने भावों को छिपाता हैं, को ध्वस्त करना होता हैं। एक गेम के बाद दूसरे गेम में सदस्यों को सामान्यत: बदल कर भिड़ंत करवाया जाता हैं। गेम में जितना ही तीव्र आक्रमकता होती हैं, सदस्यों में सांवेगिक आवेग की मात्रा तथा पारम्परिक भलाई या कल्याण की चिंता उतनी ही अधिक हो जाती हैं।

14.10 भिड़ंत समूह की प्रभावशीलता (Effectivness of Encounter Group Therapy)

लाईबरमैन तथा उसके सहयोगियों ने यह बतलाया हैं कि भिड़ंत समूह में भाग लेने वाले सदस्यों में से करीब 75 प्रतिशत ने अपने धनात्मक परिवर्तन महसूस किया तथा इस तरह के परिवर्तन का होना इस बात पर निर्भर करता हैं कि समूह का नेता द्वारा किस तरह की प्रविधि को अपनाया गया हैं। ओगन तथा उनके सहयोगियों ने भी अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया हैं कि समूह के नेता के व्यवहार द्वारा समूह के बातचीत का विषय तो निर्धारित होता ही हैं साथ ही साथ सदस्यों में यह अनुभूति भी उत्पन्न होती हैं कि वे कहां तक समूह से प्रभावित हुए हैं।

उक्त तथ्यों के अलोक में कहा जा सकता हैं कि भिडंत समूह कि प्रभावशीलता हैं और इसमें भाग लेने वाले सदस्यों के भाव एवं चिंतन में पर्याप्त परिवर्तन होते हैं।

14.11 भिड़ंत समूह का मूल्यांकन (Evaluation of Group Therapy)

भिडंत समूह की चिकित्सा का मूल्यांकन करने से ज्ञात होता हैं कि इस समूह से कुछ लोग तो काफी आशान्वित हैं तो वहीं कुछ लोगों का दावा हैं कि इससे समस्या का समाधान न होकर उसकी उग्रता कुछ बढ़ ही जाती हैं। भिडंत समूह में निम्नांकित दोष की आशंका प्राय: होती हैं।

1- भिडंत समूह के सदस्यों में जो तात्कालिक घनिष्ठता पैदा होती हैं, वह स्थायी नहीं होती हैं और न ही उसका स्थानांतरण दिन प्रतिदिन की जिदंगी में हो पाता हैं।
2- भिडंत समूह का नेतृत्व अप्रशिक्षित तथा गैर पेशेवर लोग करते हैं जिसके कारण इस तरह के समूह का चिकित्सीय प्रभाव धीरे धीरे कम होता जाता हैं।
3- भिडंत समूह चिकित्सा के सदस्यों में विवेक की कमी पायी जाती हैं तथा क्षणिक शारीरिक सुख की और उन्मुखता अधिक हो सकती हैं इससे इसका चिकित्सीय मूल्यों में कमी आती हैं।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी यह उम्मीद की जाती हैं कि एक उतरदायी नेता के नेतृत्व में एवं व्यक्तियों में बढती सचेतता के कारण इस तरह की चिकित्सा पद्धति का गुणकारी प्रभाव की संभावना अधिक हैं।

14.12 सारांश

- मनोचिकित्सकों को अपने पेशे में निदान एवं मूल्यांकन से संबंद्ध समस्याओं, नैदानिक परीक्षणों से संबंद्ध समस्याओं, उपचार से संबंद्ध समस्याओं, शोध एवं शिक्षण से संबंद्ध समस्याओं, परामर्श एवं प्रशासनिक कार्यों से संबंद्ध समस्याओं आदि समस्याओं का सामना करता पड़ता हैं।
- ग्रेजुएट प्रशिक्षण कार्यक्रम, नैदानिक इंटर्नशिप , उतर डाक्टरीय प्रशिक्षण एवं सतत शिक्षा, उपडाक्टरीय प्रशिक्षण आदि वे सीमाएं हैं जिन्हें सीखने के बाद ही मनोचिकित्सक के रूप में अपने व्यवसाय का प्रारंभ कर सकते हैं।
- रोगी अक्सर अपने गत जिंदगी के अनुभव में जैसी मनोवृति शिक्षक, माता-पिता या दोनों के प्रति बना रखी होती हैं वेसी ही मनोवृति वह चिकित्सक के प्रति भी विकसित का लेता हैं। इसे ही स्थानान्तरण की संज्ञा दी जाती हैं।
- भिड़ंत समूह चिकित्सा में एक उतरदायी नेता के नेतृत्व में एवं व्यक्तियों में बढती सचेतता के कारण इस तरह की चिकित्सा पद्धति का गुणकारी प्रभाव की संभावना अधिक हैं।

14.13 प्रश्नोत्तर

1- मनोचिकित्सकों की समस्याओं पर प्रकाश डालिये?
2- मनोचिकित्सक के प्रशिक्षण की सीमाएं का वर्णन कीजिये?
3- स्थानान्तरण की अवस्था पर प्रकाश डालिये?
4- प्रतिस्थापन की अवस्था को समझाइये?

5- मनोचिकित्सक के वास्तविक लक्ष्यों को समझाइये?
6- भिड़ंत समूह चिकित्सा का अर्थ एवं स्वरूप को समझाइये?
7- भिड़ंत समूह के प्रकार का वर्णन करिये?
8- भिड़ंत समूह की प्रभावशीलता को बताइये?
9- भिड़ंत समूह का मूल्यांकन करिये?

14.13 संदर्भ सूची

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 15

हस्तक्षेप

Intervention

मनोनाटक, योग पद्धति, परिध्यान चिकित्सा, प्लेसिबो प्रभाव, बीयोफिड बेक पद्धति, दृढ़ग्राही प्रशिक्षण तथा आत्म निर्देशन प्रशिक्षण

Psychodrama,yoga and meditation,placebo effect, Biofeed back,assertion training,self instructional training

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 मनोनाटक प्रविधि

15.4 मनोनाटक प्रविधि में किरदार

15.5 मनोनाटक प्रविधि का उपयोग

15.6 बायोफीडबैक पद्धति

15.7 बायोफीडबैक पद्धति के चरण

15.8 बायोफीडबैक पद्धति का मूल्यांकन

15.9 योग पद्धति

15.10 परिध्यान चिकित्सा

15.11 परिध्यान चिकित्सा के चरण

15.12 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण

15.13 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

15.14 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की क्रियाविधि

15.15 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण का मूल्यांकन

15.16 प्लेसिबो प्रभाव

15.17 आत्म निर्देशन प्रशिक्षण

15.18 आत्म निर्देशन प्रशिक्षण के चरण

15.19 सारांश

15.20 प्रश्नोत्तर

15.21 संदर्भसूची

15.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत कई प्रकार की मनोचिकित्सीय हस्तक्षेप प्रविधियों का वर्णन किया गया हैं जिनका उपयोग मनोचिकित्सा में किया जाता हैं। मनोनाटक, योग पद्धति, परिध्यान चिकित्सा, प्लेसिबो प्रभाव, बीयोफिड बेक पद्धति, दृढ़ग्राही प्रशिक्षण तथा आत्म निर्देशन प्रशिक्षण प्रविधियों का संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं-

- मनोनाटक का प्रतिपादन मोरेनो द्वारा किया गया। इस विधि में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता हैं ताकि उससे संबंधितसमायोजन की कठिनाइयों से वह अवगत हो सके।
- बायोफीडबैक एक ऐसी व्यवहार चिकित्सा हैं जिसे निटजिल तथा उनके सहयोगियों ने संभाव्यता प्रबंधन की ही एक अनोखा प्रारूप माना हैं। व्यक्ति जब अपने आंतरिक एवं स्वायत अनुक्रियाओं का नियंत्रण व्यवहारपरक विधियों से करता हैं, तो इसे बायोफीडबैक कहा जाता हैं। इस प्रविधि में विशेष विद्युत उपकरण के सहारे रोगी को अपनी शारीरिक क्रियाओं के बारे में सूचना प्रदान की जाती हैं। इन अनैच्छिक क्रियाओं में परिवर्तन लाने का प्रशिक्षण देकर रोगी को कुसमायोजित व्यवहार को दूर करके उसकी जगह पर समायोजित व्यवहार को सीखलाया जाता हैं।
- महर्षि पतंजलि ने योग प्रणाली का विकास किया। पतंजलि द्वारा रचित्त योग सुत्रों के आठ अंग हैं इसीलिए इसे अष्टांग योग कहते हैं|
- परिध्यान द्वारा अनिद्रा, ब्लड प्रेशर में लाभ बताया गया हैं। परिध्यान चेतना की तीन ज्ञात अवस्थाओं - जागृति, स्वप्न और गहन निद्रा से भी आगे की चौथी अवस्था विश्राम युक्त सजगता की अवस्था होती हैं।
- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण या चिकित्सा व्यवहार चिकित्सा की प्रमुख प्रविधि हैं। इसका उपयोग उन व्यक्तियों के उपचार करने के लिये किया जाता है जिन्हें अनुबंधित चिंता अनुक्रियाओं के कारण अन्य लोगों के साथ अन्तर्वेयक्तिक संबंधकायम करने में असर्मथता महसूस होती हैं, जिससे उनमें हीनता, तुच्छता एवं चिंता का भाव उत्पन्न हो जाता हैं।
- आत्म निर्देशन प्रशिक्षण विधि में यह निश्चित किया जाता है कि रोगी किन किन तरह के तनावों से ग्रस्त रहता है तथा उसके बाद फिर उसके संज्ञान में किस तरह से परिवर्तन लाया जा सकता है ताकि वह इन तनावों के साथ ठीक ढंग से समायोजन करके चिन्तामुक्त हो सके।

  इन सबका विस्तृत वर्णन इकाई में आगे प्रस्तुत किया गया हैं।

15.2 उद्देश्य

- मनोनाटक प्रविधि का अर्थ समझ सकेंगे।
- मनोनाटक प्रविधि का उपयोग का महत्व को समझ सकेंगे।

- बायोफीडबैक पद्धति का अर्थ समझ सकेगे।
- बायोफीडबैक पद्धति का मूल्यांकन कर पायेंगे।
- योग पद्धति के बारे में ज्ञान प्राप्त होगा।
- परिध्यान चिकित्सा को समझेगें।
- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण के स्वरूप को जान सकेगे।
- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की क्रियाविधि को अध्ययन कर पायेंगे।
- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- प्लेसिबो प्रभाव को समझ सकेंगे।
- आत्म निर्देशन प्रशिक्षण को समझ सकेंगे।

15.3 मनोनाटक प्रविधि (Psychodram therapy)

मनोनाटक एक प्रकार की सामूहिक चिकित्सा हैं जिसे मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा के अंतर्गत रखा गया हैं। मनोनाटक का प्रतिपादन मोरेनो द्वारा किया गया। इस विधि में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता हैं ताकि उससे संबंधित समायोजन की कठिनाइयों से वह अवगत हो सके। इसके लिए एक नाटकीय परिस्थिति तैयार की जाती हैं जिसमें रोगी के अलावा अन्य कई लोग होते है तथा जिनकी मदद से रोगी किसी भूमिका का अभिनय करता हैं। जैसे- किसी रोगी को पति के रूप में यदि कुछ समायोजन संबंधी कठिनाई हैं तो उससे पति की भूमिका करवायी जाएगी। परिस्थिति को नाटकीय बनाने के ख्याल से कोई नर्स पत्नी की भूमिका तथा चिकित्सक माता-पिता की भूमिका कर सकते हैं। मोरेनो ने मनोनाटक में भाग लेने वाले पात्रों का विशेष नामकरण किया हैं। जो इस प्रकार है-

1-नाटक का प्रधान अभिनेता
2-निर्देशक
3-सहायक अहम्
4-श्रोता या दर्शक

15.4 मनोनाटक प्रविधि में किरदार

इन सब किरदारों की भूमिकाओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1-नाटक का प्रधान अभिनेता - मनोनाटक का प्रधान अभिनेता या पात्र स्वयं रोगी ही होता हैं। इस रोगी को अपने वास्तविक जीवन की समस्याएं एवं कठिनाइयां जो उनमें चिंता उत्पन्न कर रही हैं, को प्रदर्शन करने हेतु भूमिका करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हैं।

2-निर्देशक - मारेनो ने मुख्य चिकित्सक को निर्देशक कहा हैं। निर्देशक की देख-रेख में ही मनोनाटक का संचालन एवं क्रियान्वन होता हैं।

3-सहायक अहम् - सहायक चिकित्सा कर्मचारीगण जैसे- नर्स, सहायक चिकित्सक तथा रोगी मिलकर सहायक अहम् की भूमिका निर्वाह करते हैं। सहायक अहम् का मुख्य कार्यप्रधान अभिनेता अर्थात् रोगी को अपनी भूमिका निर्वाह करने में पूर्ण सहायता प्रदान करता हैं। जैसे- किसी प्रधान

अभिनेता को यदि भाई की भूमिका करना होता हैं तो सहायक अहम् में से कुछ बहन, माता-पिता आदि की भूमिका करके उसे अर्थात् रोगी को भाई की भूमिका का ठीक से निर्वाह करने में मदद करेंगे।

4-श्रोता या दर्शक - श्रोता या दर्शक की भूमिका में अन्य व्यक्तियों या रोगियों को रखा जाता हैं। मनोनाटक के रंगमंच पर प्रधान या मुख्य अभिनेता अर्थात् रोगी स्वाभाविक ढ़ंग से अपनी सांवेगिक कठिनाईयों की अभिव्यक्ति कर सके, इसके लिए पर्याप्त माहौल तैयार किया जाता हैं। मंच पर पात्रों को कब और किस तरह का संवाद बोलना होता हैं। इसके लिए किसी प्रकार का अनुबोधन निर्देशक द्वारा नहीं किया गया हैं। इस तरह से रंगमंच पर जो अभिनय होता हैं वह स्वतंत्र एवं पूर्वाभ्यास रहित होता हैं और फ्रॉयड के मुक्त साहचर्य के समान ही होता हैं। इस तरह के अभिनय से रोगी की दमित एवं सांवेगिक कठिनाइयों प्रस्फुटित होती हैं।

15.5 मनोनाटक प्रविधि उपयोग (U ses of Psychodrama)

मनोनाटक का उपयोग वहां अधिक लाभकारी होती हैं जब रोगी चिकित्सा की अन्य विधियों में भाग लेने से इन्कार करने देता हैं या किसी कारणवश ले सकने में असमर्थ रहता हैं ऐसे रोगियों को मनोनाटक में दर्शक या श्रोता के रूप में पहले पहले रखा जाता हैं, और स्वयं ही वह मुख्य अभिनेता या रोगी की भूमिका करने हेतु तैयार हो जाते हैं मनोनाटक का यह एक प्रमुख लाभ माना गया हैं। इस लाभ के बावजूद इस विधि की कुछ परिसीमाएं हैं जैसे कुछ नैदानिक मनोचवैज्ञानिकों का मानना हैं कि चिकित्सा की इस विधि की स्वतंत्र चिकित्सा विधि के रूप में न प्रयोग का सहायक चिकित्सा विधि के रूप में ही किया जाना चाहिए क्योंकि इस विधि के द्वारा केवल सतही चिकित्सा संभव हैं गहन चिकित्सा नहीं की जा सकती हैं। इसकी दूसरी परिसीमा यह हैं कि इसमें रोगी को उसकी इच्छा एवं अभिरूचि के अनुरूप भूमिका नहीं होने पर इस तरह की चिकित्सा व्यर्थ साबित होती हैं।

15.6 बायोफीडबैक पद्धति (Biofeed Back Therapy)

बीयोफिड बैक एक ऐसी व्यवहार चिकित्सा हैं जिसे निटजिल तथा उनके सहयोगियों ने संभाव्यता प्रबंधन का ही एक अनोखा प्रारूप माना हैं। व्यक्ति जब अपने आंतरिक एवं स्वायत अनुक्रियाओं का नियंत्रण व्यवहारपरक विधियों से करता हैं, तो इसे बायोफीड बैक कहा जाता हैं। इस प्रविधि में विशेष वैघुत उपकरण के सहारे रोगी को अपनी शारीरिक क्रियाओं के बारे में सूचना प्रदान की जाती हैं। ऐसी शारीरिक क्रियाओं में मूलत: अनैच्छिक क्रियाओं जैसे हृदय गति, रक्त चाप, त्वचा का तापक्रम, मस्तिष्कीय तरंग तथा अन्य संबंधितकार्य जिनका संचालन मूलत: स्वायत तंत्रिका तंत्र से होता है, प्रधान होते हैं। इन अनैच्छिक क्रियाओं में परिवर्तन लाने का प्रशिक्षण देकर रोगी को कुसमायोजित व्यवहार को दूर करके उसकी जगह पर समायोजित व्यवहार को सीखलाया जाता हैं।

15.7 बायोफीडबैक पद्धति के चरण (Stage of Biofeed Back)

1- रोगी को उस शारीरिक अनुक्रिया जिसमें परिवर्तन लाना हैं, को मानीटर विशेष वैघुत उपकरण द्वारा किया जाता हैं।

2- उपकरण द्वारा सूचनाओं को श्रवण या दृश्य संकेतों के रूप में परिवर्तित कर उसे रोगी के सामने रखा जाता हैं।

3- रोगी उस संकेत में परिवर्तन अपनी शारीरिक क्रियाओं में परिवर्तन करके करता हैं।

जैसे मान लिया जाए कि यदि कोई व्यक्ति सिर दर्द से प्रभावित हैं तो उसके सिर पर एक विशेष इलेक्ट्रोड लगा दिया जाएगा जो सिर के क्षेत्र से छोटे-छोटे पेशीय क्रियाओं को ग्रहण कर उसे एक विशेष आवाज में बदल देगा। पेशीय क्रियाओं में परिवर्तन होने से आवाज में भी परिवर्तन होगा। रोगी का कार्य उस आवाज में कमी लाना या उसे समाप्त करना होगा जिससे यह पता चलेगा कि पेशीय तनाव समाप्त हो गया अर्थात् कम हो गया अर्थात् सिर दर्द कम हो गया या समाप्त हो गया। ऐसा बार-बार करने से अन्त में रोगी अपने सिर दर्द को कम करने में सफल हो पाता हैं।

बायोफीड बैक प्रविधि का उपयोग कई तरह के रोगों जैसे - उच्च रक्त चाप, सिर दर्द, अनियमित हृदय गति तथा रेनाउड रोग जिसमें निम्न रक्त बहाव बनने के कारण हाथ या पैर में कोथ हो जाता हैं, के उपचार में सफलता पूर्वक उपयोग रात्रिक ब्रक्सीज्म के उपचार में किया जाता हैं। इस रोग में रोगी नींद में दांत कटकटाता एवं पीसता हैं जिससे सिर दर्द, आनन दर्द तथा दंत समस्याओं आदि उत्पन्न हो जाती हैं। इसमें एक विशेष वैघुतीय उपकरण द्वारा रोगी के नींद में होने पर उसके चहरे की मासपेशीय तनाव को मानीटर किया जाता हैं। जब एक क्रांतिक स्तर पर पहुंच जाता है। तो घंटी की आवाज होती हैं तथा रोगी नींद से उठ जाता हैं और ब्रक्सीज्म का व्यवहार समाप्त हो जाता हैं। इसे बार-बार करके ब्रक्सीज्म को काफी हद तक नियंत्रित का दिया जाता हैं।

बायोफीड बैक प्रविधि द्वारा चाहे जिस तरह के रोग का उपचार क्यों न किया जा रहा हो, एक मानीटर तथा पुर्ननिवेशन उपकरण रोगी के शरीर से लगा दिया जाता है जो बाद में कुछ शारीरिक या मानसिक उपाय करके वांछित दिशा में अपनी आंतरिक अनुक्रिया में परिवर्तन करता हैं। अधिकतर कैसेज में इस परिवर्तन के लिये परिणाम ज्ञान ही पुर्नबलन के रूप में उपयोग किया जाता हैं परंतु कभी - कभी प्रशंसा या मौद्रिक पुरस्कार को भी पुर्नबलन के रूप में उपयोग किया जाता हैं।

15.8 बायोफीड बैक पद्धति का मूल्यांकन (Evaluation of Biofeed Back Method)

बायोफीड बैक पद्धति का मूल्यांकन करने पर इसके कुछ लाभ तथा हानि के बारे में जानकारी प्राप्त होती हैं। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं-

1- बायोफीड बैक द्वारा ऐसे रोगों के उपचार में अधिक मदद मिलती हैं जिनका एक स्पष्ट दैहिक आधार होता हैं। मिलर ने ऐसे रोगों के उपचार में बायोफीड बैक को नैदानिक रूप से एक काफी संपन्न विधि माना हैं।

2- बायोफीड बैक प्रविधि द्वारा उपचार में तुलनात्मक रूप से अधिक वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता तथा वैद्यता हैं।

इन लाभों के बावजूद बायोफीड बैक विधि के कुछ हानि हैं जो निम्नांकित हैं-

1- बायोफीड बैक में मॉनीटर करने लिए जो वैघुतीय उपकरण का उपयोग किया जाता हैं, वह काफी कीमती होता हैं। फलस्वरूप, इसका उपयोग सभी तरह के चिकित्सक नहीं कर पाते हैं।

2- बायोफीड बैक प्रविधि द्वारा उपचार गृह या मानसिक अस्पताल के परिसर में किये गए परिवर्तनों को व्यक्ति अपनी वास्तविक जिदंगी में बनाकर सामान्यत: नहीं रख पाता हैं।

3- रीड,कैटकीन तथा गोल्डवैंड ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया हैं कि बायोफीड बैक जैसे जटिल एवं कीमती प्रविधि द्वारा जो व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन आते हैं, उतना परिवर्तन या उससे अधिक परिवर्तन आसानी से उससे आसान प्रविधि जैसे- विश्रांति प्रशिक्षण द्वारा उत्पन्न किया जा सकता हैं। ऐसी परिस्थिति में तब बायोफीड बैक जैसी प्रविधि का कोई सार्थक महत्व नहीं रह जाता हैं।

इन अलाभों या परिसीमाओं के बावजूद धीरे-धीरे आजकल अधिकतर मानसिक अस्पतालों में बायोफीड बैक प्रविधि की लोकप्रियता बढ़ते जा रही हैं।

15.9 योग पद्धति (Yoga therapy)

योग पद्धति के तत्वों का समुचित्त मूल्यांकन करने के लिए वैदिक दर्शन में निहित इसके आधारों का परिचय प्राप्त किया जाना उपयोगी होगा। वैदिक साहित्य के चार मूल ग्रंथ हैं - ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। इन वेदों का संबंधक्रमश: ज्ञान, कर्तव्य, आदर्श की पूजा और आत्मज्ञान से हैं। अथर्ववेद में आत्मज्ञान एवं सांसारिक उपलब्धियों की प्रविधि का वर्णन किया गया हैं। अथर्ववेद का ही एक उपवेद आयुर्वेद हैं जो व्याधियों का वर्गीकरण एवं उपचार साधन का वर्णन प्रस्तुत करता हैं। वेदों के अतिरिक्त उपनिषद्, ब्राम्हण, आरण्यक प्रमुख वैदिक साहित्य हैं। इनके द्वारा धर्म दर्शन , जीवन दर्शन, स्वस्थ जीवन की पद्धति, व्याधियों के परिहार, निरोधन एवं उपचार की प्रविधियां का परिचय प्राप्त होता हैं। स्वास्थ्य व्याधि निरोधन एवं उपचार में आत्मज्ञान का महत्व हैं।

आत्मज्ञान के दो प्रकार होते हैं – निर्गुण एवं सदगुण। वेदान्तियों के अनुसार निर्गुण एवं सदगुण दोनों ही रूप में होता हैं। तार्किक आत्मा को सदगुण मानते हैं तथा सांख्य दर्शन के अनुयायी इसे निर्गुण मानते हैं। परम् ऋषि कपिल ने निर्गुण आत्मज्ञान को प्रकाशित किया हैं। वेद की अपेक्षा में यह ज्ञान उपनिषद् में अधिक स्पष्ट रूप में देखा जाता हैं। महाभारत के टीकाकारों के अनुसार ''जो महान ज्ञान महान व्यक्तियों में, वेदों के भीतर तथा योगशास्त्रों में देखा जाता हैं और पुराण में भी विविध रूपों में पाया जाता हैं वह सांख्य से आया हैं।'' स्वामी हरिहरानन्द लिखते हैं कि पहले कर्मकाण्ड का उद्भव हुआ, बाद में सदगुण आत्मज्ञान और उसके सांख्यीय निर्गुण पुरुष ज्ञान प्रकट हुआ। महर्षि चषक ने कपिल के उपदेशों का अवलम्बन करने के लिए सांख्य सूत्र का प्रणयन किया हैं वह अब अंश मात्र ही उपलब्ध हैं। कपिल ने निर्गुण पुरुष विद्या तथा केवल प्राचक योग का प्रर्वतन किया हैं।

भारत में धर्म के दो भेद हैं - प्रवृति धर्म तथा निवृति धर्म । जिस धर्म से इसलोक एवं परलोक में सर्वाधिक सुख लाभ होता हैं। उसे प्रवृति धर्म कहते हैं। निवृति धर्म द्वारा निर्वाण और शांति लाभ होता हैं। निवृति धर्म के दो संप्रदाय हैं - आर्य और अनार्य। आर्य संप्रदाय में सांख्य और वेदान्त तथा अनार्य संप्रदाय में बौद्ध और जैन आदि की गणना की जाती हैं। प्रवृति धर्म में 1. ईश्वर या महापुरुष की अर्चना तथा 2. दान, परोपकार, मैत्री आदि सम्मिलित हैं। निवृति धर्म का मत हैं कि सम्यक दर्शन द्वारा जन्म परम्परा या संसार की निवृति होती हैं, और सम्यक योग, सम्यक वैराग्य, सम्यक दर्शन या प्रज्ञा के कारण हैं। सांख्य का साधन रूप योग हैं। काम, क्रोध, भय, निद्रा और वास का दमन करने ध्यान - मग्न होना सांख्य योग का साधन हैं।

सांख्य दर्शन के अनुसार व्यक्ति एक आत्म मनोदैहिक इकाई हैं जिसके तीन तल हैं - दैहिक, मानसिक तथा आत्मिक। इसमें आत्म मनोदैहिक इकाई के दैहिक जल पर तीन गुण - वायु, पित और कफ होते हैं। मानसिक तल पर तीन गुण - सत्व, रज तथा तन हैं, और आत्मिक तल निर्गुण होता हैं। दैहिक और मानसिक तल पर व्याप्त गुणों के संतुलन से स्वास्थ्य और असंतुलन से रोग की उत्पति होती हैं।

सांख्य दर्शन मनुष्य के दो पक्ष - पुरुष अर्थात् आत्मा और प्रकृति अर्थात् चित्त एवं देह होता हैं। चित्त अर्थात् मानस प्रकृति का सुक्ष्म रूप हैं और देह इस प्रकृति का स्थूल रूप हैं।

चित्त अर्थात् मानस का तात्पर्य बुद्धि, अहंकार और मन के समुच्चय से हैं। चित्त के त्रिगुणात्मक स्वरूप के कारण चित्त वृतियां उत्पन्न होती हैं अर्थात् व्यक्ति को अहंकार होता हैं, उसे मैं और मेरा का बोध होता हैं तथा मन की चंचलता के कारण व्यक्ति विभिन्न प्रकार से उलझनों में लिप्त होता हैं। आत्मा अर्थात् पुरुष निर्गुण, निर्विकार दृष्टा हैं किन्तु चित्त के साथ संबंधके कारण उसकी दृष्टि तद्रूप हो जाती हैं। पुरुष अर्थात् आत्मा और प्रकृति अर्थात् चित्त एवं देह के मध्य में इस तादात्म्य के कारण दुख दूर करने के लिए पुरुष और प्रकृति के मध्य के तादात्म्य को दूर किया जाना आवश्यक हैं। जब पुरुष त्रिगुणों के बंधनों से मुक्त होकर कैवल्य अवस्था को प्राप्त करता हैं, त्रिगुणातित हो जाता हैं। तब मोक्ष या निवार्ण की प्राप्ति होती हैं। चित्त वृतियों के निरोधन के लिए महर्षि पतंजलि ने योग प्रणाली का विकास किया। पतंजलि द्वारा रचित्त योग सुत्रों के आठ अंग हैं इसीलिए इसे अष्टांग योग कहते हैं।

15.10 परिध्यान प्रविधि (Meditation Therapy)

परिध्यान प्रणाली के विकास में चैतन्य- महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द एवं महर्षि महेश योगी का योगदान स्वीकार किया जाता हैं। इस प्रविधि का प्रभाव क्षेत्र आज समूचे विश्व में महर्षि योगी द्वारा स्थापित संस्थाओंके माध्यम से विस्तृत हुआ हैं।

महर्षि के अनुसार परिध्यान व्यक्ति के बोध को विस्तृत करता हैं, सृजनात्मक बुद्धि को विकसित करता हैं, संज्ञान की स्पष्टता में वृद्धि करता हैं तथा गहरी विश्रांति प्रदान करता हैं। यह पद्धति मन की स्वाभाविक प्रवृतियों को ही विकसित करके सीमाओं से परे जाकर असीमित बोध अर्जित करने में उसकी सहायता करता हैं। परिध्यान प्रविधि को किसी शिक्षण के सहयोग द्वारा सरलता पूर्वक सीखा जा सकता हैं। इसीलिए 1960 के दशक में इस प्रविधि के प्रति पश्चिमी देशों में रहने वाले आधुनिक जीवन शैली के लोगों का आर्कषण बढ़ा। यह प्रणाली व्यक्ति को शारीरिक विश्रांति की अवस्था में रहते हुए, विचारों के ढहराव की प्रक्रिया के माध्यम से चेतना की गहन अनुभूति प्राप्त करने में सहायता देती हैं। चेतना कि इस अवस्था में किसी विशिष्ठ तत्व का बोध नहीं होता हैं। महर्षि के अनुयायी परिध्यान को सृजनात्मक बुद्धि का विज्ञान बताते हैं। परिध्यान चिंतन प्रक्रिया व ध्यान प्रक्रिया से भी आगे या उत्कर्ष की और जाने की प्रविधि हैं।

15.11 परिध्यान पद्धति के चरण (Stage of Meditation)

परिध्यान सीखने के लिए महर्षि ने सात सोपानों वाले अधिगम प्रणाली को विकसित किया हैं। पहले दो सोपानों में इस प्रविधि के लाभ बताये जाते हैं, तत्पश्चात इस प्रविधि की क्रिया पद्धति बतायी जाती हैं। तृतीय चरण में प्रशिक्षक के साथ व्यक्तिगत साक्षात्कार संपन्न होता हैं। यदि प्रशिक्षु सब

कुछ समझ कर आगे परिध्यान को सीखना चाहता हैं तो आवेदन करता हैं। जब शिक्षक प्रशिक्षु को एक मंत्र देता हैं और उसका भली प्रकार उच्चारण करना सीखता हैं। चौथे चरण में पगशिक्षु सुबह और शाम 15.20 मिनट तक आंखे मून्द कर मन में मंत्रोच्चारणं करता हैं। जिसके फलस्वरूप विचारों का प्रवाह रोकने में सहायता मिलती हैं। और व्यक्ति को चेतना कि गहन अवस्था की प्राप्ति होती हैं। पांचवे, षष्टम और सप्तम सोपानों कि अवधि में एक प्रशिक्षण के साथ जुड़ सभी परीक्षार्थी व्यक्तिगत एवं सामूहिक वार्तालाप में सम्मिलित होते हैं। किसी प्रकार के संदेह या समस्या के निवारण के लिए अनुवर्ती कार्यक्रम की व्यवस्था की जाती हैं।

लारेन्स के अनुसार व्यक्ति प्राय: यह बताते हैं कि शरीर अविलम्ब विश्रांति का अनुभव करता हैं तथा विचार प्रक्रिया ठहर जाती है, शारीरिक संवेदना विलुप्त हो जाती हैं। किन्तु पूर्ण चेतना पहले से कहीं अधिक स्पष्ट एवं विस्तृत चेतन बोध का अनुभव करता है कभी-कभी परिध्यान की अवधि में लोगों को विचार प्रक्रिया पूर्णत: रूक जाने का अनुभव होती हैं, उन्हें केवल चेतना या बोध का अनुभव होता हैं, उसमें कोई तत्व नहीं होता हैं। इस प्रक्रिया द्वारा गहन सुखानुभूति प्राप्त होती हैं, व्यक्ति को ताजगी, शक्ति चित्त की स्पष्टता की प्राप्ति होती हैं।

वैज्ञानिक अध्ययनों द्वारा ज्ञात हुआ हैं कि परिध्यान द्वारा आक्सीजन ग्रहण और कार्बन डाई ऑक्साइड निष्कासन की दर में वृद्धि आती हैं। हृदयगति और वासगति में कमी आती हैं।

परिध्यान द्वारा अनिद्रा, ब्लड प्रेशर में लाभ बताया गया हैं। परिध्यान चेतना की तीन ज्ञात अवस्थाओं - जागृति, स्वप्न और गहन निद्रा से भी आगे की चौथी अवस्था विश्राम युक्त सजगता की अवस्था होती हैं।

15.12 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण (Assertiveness Training)

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण या चिकित्सा व्यवहार चिकित्सा की प्रमुख प्रविधि हैं। इसका उपयोग उन व्यक्तियों के उपचार करने के लिये किया जाता है जिन्हें अनुबंधित चिंता अनुक्रियाओं के कारण अन्य लोगों के साथ अन्तर्वेयक्तिक संबंधकायम करने में असर्मथता महसूस होती हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो अन्य व्यक्तियों के साथ उतम अंतर वैयक्तिक संबंधस्थापित नहीं कर पाते हैं जिससे उनमें हीनता, तुच्छता एवं चिंता का भाव उत्पन्न हो जाता हैं। ऐसे लोग अनावश्यक रूप से मानसिक रूप से तनाव में ग्रस्त रहते हैं। ऐसे लोग चिंतित, क्रोधित तथा उत्साहहीन लगते हैं। इनका आत्म-सम्मान कम हो जाता हैं तथा तरह-तरह के मनोवैज्ञानिक लक्षण विकसित हो जाते हैं।

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण में ऐसे लोगों को दूसरे पर प्रभाव डालने का प्रशिक्षण देकर आत्म सम्मान को उॅचा उठाया जाता हैं। दूसरे शब्दों में, ऐसे लोगों में निश्चयात्मकता गुण को मजबूत किया जाता हैं। निश्चयात्मकता से अर्थ अपनी भावनाओं की इस ढ़ंग से अभिव्यक्ति करने से होता हैं कि उससे दूसरों के अधिकार तथा मनोभाव को किसी प्रकार की कोई ठेस न पहुंचे।

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण के मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं-

1- अगर व्यक्ति में पर्याप्त सामाजिक कौशल नहीं हैं तो दृढ़ग्राही प्रशिक्षण का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों को यह बतलाना होता हैं कि वे अपने आप को किस तरह से प्रभावी ढ़ंग से अभिव्यक्त करे।

2- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की दूसरा उद्देश्य संज्ञानात्मक अवरोधों को दूर करना होता हैं ताकि व्यक्ति ठीक ढ़ंग से आत्म अभिव्यक्ति कर सके।

उक्त दोनो उद्देश्यों की प्राप्ति से व्यक्ति में एक उत्तम व्यक्ति होने का भाव विकसित होता है और उनमें स्पष्ट व्यवहार एवं चिंतन का एक ऐसा पैटर्न विकसित होता है कि व्यक्ति को उपयुक्त सामाजिक पुरस्कार मिलता है तथा अपनी जिंदगी से उत्तम होती है। दृढ़ग्राही चिकित्सा क्लासिकी अनुबंधन और साधनात्मक या क्रियाप्रसूत अनुबंधन में से किसी भी अनुबंधन के नियमों पर आधारित हो सकता है।

15.13 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background Assertive Training)

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर यदि हम ध्यान दें, तो यह स्पष्ट होगा कि इसके मौलिक प्रारूप का उपयोग अन्य कई चिकित्सीय प्रविधियों में इसका औपचारिक प्रादुर्भाव के पहले ही उपयोग किया जा चुका था। जैसे,मोरेनो द्वारा प्रतिपादित मनोनाटक में रोगियों को विशिष्ट भूमिकाओं को कराकर उन्हे स्वत: क्रिया करने एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। जार्ज केली द्वारा प्रतिपादित निश्चित भूमिका चिकित्सा में भी रोगी को एक ऐसे मॉडल की भूमिका करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जिसका व्यवहार उसके अपने व्यवहार से अधिक महत्वपूर्ण लगते है। सचमुच में दृढ़ग्राही प्रशिक्षण का प्रथम क्रमबद्ध वर्णन साल्टर द्वारा प्रतिपादित अनुबंधित प्रतिवर्ष चिकित्सा की माना गया है। साल्टर ने अवरोधित रोगियों को अपनी इच्छाओं को ठीक ढंग से अभिव्यक्त करने के ख्याल से कई उत्तेजनशील प्रविधियों का प्रतिपादन किया जिनमें निम्नांकित प्रमुख थे -

1- आनन वार्ता इसमें रोगी को अनुभव किये गये संवेग के अनुरूप आनन अभिव्यक्ति करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था।
2- अपने परस्पर विरोधी विचारों की अभिव्यक्ति करने का प्रशिक्षण दिया जाता था।
3- दूसरों के प्रशंसोक्ति को किस तरह स्वीकार करते हुए उन्हे किस तरह से धन्यवाद ज्ञापन किया जाना चाहिए।

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तित्व जोसेफ ओल्प को माना गया है जिन्होने 1949 में दृढ़ग्राही या निश्चयात्मक व्यवहार को चिंता अवरोधक माना है। ओल्प ने ऐसे दृढ़ग्राही व्यवहार को अन्तरवैयक्तिक चिंता का अवरोधक माना है और विशिष्ट दृढ़ग्राही कौशलों में रोगियों को सफलतापूर्वक प्रशिक्षित करके दृढ़ग्राही प्रशिक्षण के महत्व को सिद्ध कर सकने में समर्थ हुए।

15.14 दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की क्रियाविधि (Stage of Assertive Training)

यद्यपि दृढ़ग्राही प्रशिक्षण एकाकी परिस्थिति में अर्थात एक एक रोगी पर स्वतन्त्र रूप से किया जा सकता है, अधिकतर ऐसे प्रशिक्षण रोगियों का एक समूह बनाकर संपन्न किया जाता है। ऐसे प्रशिक्षण के मुख्य चार तत्व होते है जो इस प्रकार है-

1- पहले चरण में दृढ़कथन को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है तथा उसे आक्रमकता एवं विनम्रता से भिन्न किया जाता है।
2- दूसरे चरण में विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में रोगी के अधिकारों तथा अन्य व्यक्तियों के अधिकारों के वर्णन पर प्रकाश डाला जाता है।
3- तीसरे चरण में दृढ़कथन के राह में संज्ञानात्मक अवरोधों की पहचान करके उसे दूर करने की कोशिश की जाती है।
4- चौथे चरण में रोगी दृढ़ग्राही व्यवहार करने का अभ्यास करता है।

इस चौथे एवं अंतिम चरण को काफी महत्वपूर्ण माना गया है। इस चरण में चिकित्सक रोगी द्वारा किये जाने वाले व्यवहारों को करके उसे दिखाता है और इस तरह के चिकित्सक .दृढग्राही व्यवहार का एक मॉडल के रूप में कार्य करता है। उसके इस प्रयास को चिकित्सक पुनर्बलित करता है। तथा उसे और अधिक उन्नत बनाने के लिए तरह-तरह का सुझाव देता है। इस तरह कुछ रिहर्सल के बाद रोगी जिन्दगी की वास्तविक परिस्थिति में नयें विचारों एवं व्यवहारों को करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है । बाद के सत्रों में इस दिशा मे रोगी को मिली सफलताओं एवं असफलताओं का विश्लेषण किया जाता है। ऐसे सत्रों में फिर नये सामाजिक कौशलों का अभ्यास किया जाता है। यह पूरा क्रम को तब तक दोहराया जाता है जब तक कि रोगी को आगे प्रशिक्षण पाने की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की उपयोगिता काफी अधिक है। इससे कई तरह के रोगियों का उपचार सफलतापूर्वक किया जा सकता है। जैसे - दृढ़ग्राही प्रशिक्षण द्वारा वैवाहिक समस्याओं से ग्रसित पत्नि-पति, कॉलेज के ऐसे छात्र जिनमें अन्तरवैयक्तिक समस्याओं गभीर है, लज्जालू एवं अन्तर्मुखी वयस्क, औषध,व्यसनी, मद्यपान व्यसनी तथा आक्रमक प्रकृति वाले व्यक्तियों का उपचार आसानी से किया जाता है।

15.15 दृढ़गाही प्रशिक्षण का मूल्यांकन (Evaluation of Assertive Training)

दृढ़ग्राही प्रशिक्षण के कुछ लाभ तथा हानि है। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित है-

1- जब व्यक्ति में अपअनुकूलित व्यवहार का कारण आत्म निश्चयात्मकता की कमी होती है, तो इस तरह की चिकित्सा से रोगी को सर्वाधिक लाभ होता है। प्राय: यह देखा गया है कि लज्जालू, संकोचशील एवं अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में आत्म निश्चयात्मकता की कमी पायी जाती है। अत: ऐसे व्यक्तियों को इस चिकित्सा विधि से अधिक लाभ होता है।
2- कॉलेज छात्रों एवं उपचार ग्रह या मानसिक अस्पताल में भर्ती किये गए रोगियों के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि जिन व्यक्तियों को दृढ़ग्राही प्रशिक्षण मिला होता है, वे उन व्यक्तियों से अधिक उत्तम एवं लाभप्रद स्थिति में होता है जिन्हे ऐसा प्रशिक्षण नहीं मिला होता है।

इन लाभों के बावजूद दृढ़ग्राही प्रशिक्षण के कुछ हानियां है जो इस प्रकार है -

1- ओल्प के अनुसार दृढ़ग्राही चिकित्सा द्वारा उन दुर्भीतियों के रोगीयों का उपचार नहीं किया जा सकता है, जिनका संबंधअवैयक्तिक उद्धीपको से होता है।
2- दृढ़ग्राही चिकित्सा कुछ विशेष तरह की अन्तर्वैयक्तिक परिस्थितियों के लिए भी लाभकारी नहीं होता पाया गया है। जैसे - जब व्यक्ति को कुछ व्यक्तियों द्धारा तिरस्कृत कर दिया जाता है

तो दृढ़ग्राही व्यवहार से ऐसे व्यक्तियों की समस्या का समाधान न होकर बल्कि उनमें आक्रमक व्यवहार ही उत्पन्न होने लगता है।

इन अलाभों के बावजूद दृढ़ग्राही चिकित्सा की प्रभावशीलता, नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के बीच अधिक है तथा कभी वे क्रियाप्रसूत अनुबंधन तथा कभी क्लासिकी अनुबंधन के नियमों के अनुकूल इस चिकित्सा विधि का उपयोग करके रोगी का उपचार करते है।

15.16 प्लेसिबो प्रभाव (Placebo effect)

प्लेसिबो प्रभाव एक प्रकार की मनोवैज्ञानिक स्थिति हैं। जिसका उपयोग मनोचिकित्सक मनोचिकित्सा के अंतर्गत करते हैं। इस मनोचिकित्सा में चिकित्सक किसी भी पदार्थ का उपयोग विपरित प्रभाव देखने में करते हैं। जैसे पानी का प्रयोग एक दवाई के रूप में किया जाता हैं अर्थात पानी में दवाई के जैसी को वस्तु नहीं होती परन्तु फिर भी रोगी को ऐसा महसूस कराया जाता हैं कि वह दवाई ले रहा हैं। और रोगी भी ऐसा ही महसूस करता हैं जैसेकि कि वह दवाई ही पी रहा हैं। इसे ही ''प्लेसिबो प्रभाव अर्थात् स्थिति में परिवर्तन'' कहा जाता हैं।

इस चिकित्सा का प्रयोग मनोचिकित्सक उस क्लायंट पर उपयोग में लेते हैं जिन्हें किसी भी दवाई की आदत हो जाती हैं। उन्हें ऐसा लगता हैं कि जब तक वह सफेद या लाल दवाई नहीं लेगें तब तक उन्हें आराम नहीं मिल पाएगा। ऐसा स्थिति में चिकित्सक अपने क्लायंट को अपनी इस मनोस्थिति से बाहर लाने के लिए प्लेसिबों प्रभाव का उपयोग करते हैं। मनोचिकित्सक अपने क्लायंट को उस लाल या सफेद दवाई की जगह कोई भी लाल या सफेद पदार्थ की वस्तु या जिसका आकार व रंग दवाई जैसा ही होता हैं परन्तु वास्तव में वह दवाई नहीं होती हैं। खाने के लिए देता हैं। औा रोगी भी उसे यह जानते हुए भी कि यह दवाई नहीं हैं दवाई सझकर खा लेता हैं और ऐसा महसूस करता हैं कि उस अब आराम मिल गया हैं। क्योंकि उसने दवाई ले ली हैं।

प्लेसिबो प्रभाव का उपयोग कई प्रकार के रोगियों पर सफलता पूर्वक किया जा रहा हैं।

15.17 आत्म निर्देशन प्रशिक्षण (Self Instructional Training)

यह चिकित्सा विधि एक तरह का तनाव-टीका चिकित्सा है। इस चिकित्सा में पूर्वकल्पना यह होती है कि रोगी की समस्या का मूल कारण उसके कुसमायोजित विश्वास होता है जो व्यक्ति में नकारात्मक सांवेगिक अवस्था एवं तरह- तरह के कुसमायोजित व्यवहार उत्पन्न करता है। इस चिकित्सा विधि में यह निश्चित किया जाता है कि रोगी किन किन तरह के तनावों से ग्रस्त रहता है तथा उसके बाद फिर उसके संज्ञान में किस तरह से परिवर्तन लाया जा सकता है ताकि वह इन तनावों के साथ ठीक ढंग से समायोजन करके चिन्तामुक्त हो सके।

15.18 आत्म निर्देशन प्रशिक्षण के चरण (Stage of Instructional Training)

आत्म निर्देशन प्रशिक्षण के तीन चरण है जो निम्नाकिंत है-

1- सर्जनात्मक तैयारी की अवस्था - इस अवस्था में चिकित्सक तथा रोगी एक साथ मिलकर समस्या या तनाव उत्पन्न करने वाले उद्धीपकों या परिस्थितियों के प्रति रोगी का विश्वास एवं

मनोवृति का पता लगाते है तथा रोगी में व्याप्त उनमें संबंधित आत्म कथनों का पता लगाया जाता है। आत्म कथन से तात्पर्य वैसे कथन से होता है जो रोगी समस्या के बारे में अक्सर कहा करता है। चिकित्सक एवं रोगी दोनो मिलकर कुछ ऐसे नये आत्म कथन तैयार करते है जो रोगी के लिए अधिक समायोजी साबित होता है।

2- अधिग्रहण एवं पूर्वाभ्यास की अवस्था इस अवस्था में रोगी सामायोजित आत्म-कथनों को सीखता है तथा तनाव उत्पन्न करने वाली काल्पनिक परिस्थिति में ही उनका अभ्यास करता है-

3- उपयोग एवं अभ्यास की अवस्था - इस अवस्था में रोगी तनाव उत्पन्न करने वाली वास्तविक परिस्थिति में सीखे गये संज्ञानात्मक उपायों एवं अन्य नये नये समायोजन की प्रविधियों का उपयोग करता है। परिस्थिति को इस ढंग से सुव्यवस्थित किया जाता है कि रोगी को पहले हल्का फुल्का तनाव उत्पन्न करने वाली परिस्थिति में रखा जाता है और जैसे जैसे उसमें आत्म विश्वास आता जाता है, उसे अन्य गंभीर रूप से उत्पन्न करने वाले तनाव में रखकर उसमें आत्म विश्वास एवं नये नये समायोजी विश्वास उत्पन्न करने की कोशिश की जाती है।

आत्म निर्देशन प्रशिक्षण का सफलतापूर्वक उपयोग कई तरह की नैदानिक समस्याओं के उपचार में किया गया है। जैसे मैकेनवाम ने इस विधि का उपयोग चिंता के उपचार में, टार्क ने इसका उपयोग दर्द निवारण में तथा जेनी एवं वालरस्कीम ने टाईप ए व्यवहार के उपचार में सफलतापूर्वक किया है।

15.19 सारांश

- मनोनाटक में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता हैं।
- व्यक्ति जब अपने आंतरिक एवं स्वायत अनुक्रियाओं का नियंत्रण व्यवहारपरक विधियों से करता हैं, तो इसे बायोफीडबैक कहा जाता हैं।
- महर्षि पतंजलि ने योग प्रणाली का विकास किया।
- महर्षि के अनुसार परिध्यान व्यक्ति के बोध को विस्तृत करता हैं, सृजनात्मक बुद्धि को विकसित करता हैं, संज्ञान की स्पष्टता में वृद्धि करता हैं तथा गहरी विश्रांति प्रदान करता हैं।
- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण में संज्ञानात्मक अवरोधों को दूर करना होता हैं ताकि व्यक्ति ठीक ढ़ंग से आत्म अभिव्यक्ति कर सके।
- आत्म निर्देशन प्रशिक्षण का सफलतापूर्वक उपयोग कई तरह की नैदानिक समस्याओं के उपचार में किया गया है।

15.20 प्रश्नोत्तर

1- मनोनाटक प्रविधि को समझाइये? तथा मनोनाटक प्रविधि में किरदारों का वर्णन कीजिए।

2- मनोनाटक प्रविधि का उपयोग बताइयें?

3- बायोफीड बैक पद्धति पर प्रकाश डालिये? एवं इस पद्धति के चरण को समझाइये।

4- बायोफीड बैक पद्धति का मूल्यांकन कीजिए?

5- योग पद्धति को समझाइये?

6- परिध्यान चिकित्सा से आप क्या समझते हैं?

7- परिध्यान चिकित्सा के चरणों का वर्णन कीजिये?

8- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण को समझाइये? तथा दृढ़ग्राही प्रशिक्षण की क्रियाविधि बताइये।

9- दृढ़ग्राही प्रशिक्षण का मूल्यांकन कीजिए?

10- प्लेसिबो प्रभाव से क्या तात्पर्य हैं?

11- आत्म निर्देशन प्रशिक्षण व इसके चरणों को समझाइये?

15.21 संदर्भ सूची (Refrences)

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.

इकाई - 16

बिने परीक्षण, वेश्लर बुद्धि मापनी तथा अनुभवजन्य उपागम: एम एम पी आई का नैदानिक महत्व

Diagnostic value of different Psychological test:Binet,WAIS,MMPI

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 बिने परीक्षण

16.4 बिने परीक्षण का नैदानिक मूल्यांकन

16.5 वेश्लर बुद्धि मापनी

16.6 वेश्लर बुद्धि मापनी का नैदानिक मूल्यांकन

16.7 अनुभवजन्य उपागम: एम एम पी आई

16.8 सारांश

16.9 प्रश्नोत्तर

16.10 संदर्भसूची

16.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत विभिन्न बुद्धि परीक्षण के नैदानिक महत्व को दर्शाया गया हैं। इसमें बिने परीक्षण, वेश्लर बुद्धि मापनी तथा व्यक्तित्व परीक्षण : एम एम पी आई के बारे में बताया गया हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं-

- बिने परीक्षण की अहमियत नैदानिक दृष्टिकोण से काफी अधिक बतलायी गयी है। इसके दो कारण है- पहला तो यह कि बिने परीक्षण ऐसा माननीकृत बुद्धि परीक्षण है जिसकी और मनोवैज्ञानिकों का ध्यान गया तथा इस परीक्षण को समय समय पर संशोधन कर उसे और भी अधिक उत्तम बनाने का प्रयास जारी रखा गया।
- इस परीक्षण का निर्माण फ्रेन्च मनोवैज्ञानिक अलफ्रेड बिने द्वारा थियोडोर साइमन जो एक मेडिकल डाक्टर थे, की सहायता से की गयी। नैदानिक दृष्टिकोण से इस परीक्षण का सबसे महत्वपूर्ण संशोधन एल एम टरमन द्वारा 1916 में स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में किया गया। इस

संशोधन को स्टैनफोर्ड बिने के नाम से पुकारा गया। इस संशोधन की प्रमुख विशेषता यह थी कि इसमें बुद्धि लब्धि के संप्रत्यय का सबसे पहली बार समावेश किया गया।

- 1937 में इस परीक्षण का पुन: संशोधन किया गया और यह संशोधन टरमन तथा मेरिल द्वारा किया गया और इसे नया संशोधित स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण या संक्षेप में दी 1937 बिने कहा गया। इस संशोधन की खास विशेषता यह थी कि 1916 की तुलना में इसके माननीकरण को अधिक उन्नत बना दिया गया तथा इसकी वैधता को अधिक उत्तम किया गया।
- वेश्लर ने वयस्कों की बुद्धि की माप करने के लिए 1939 में एक अलग से वैयक्तिक परीक्षण का निर्माण किया जिसका नाम वेश्लर बेलेभ्यू बुद्धि मापनी रखा गया। इस मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि मापनी रखा गया। इस मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि की मापन आसानी से की जाती थी।
- WAIS-R के भी दो भाग थे - शाब्दिक मापनी तथा क्रियात्मक मापनी। शाब्दिक मापनी में 6 उप परीक्षण थे तथा क्रियात्मक मापनी में 5 उप परिक्षण थे। इस तरह से कुल मिलाकर इसमें 11 उप परीक्षण थे।
- माइनेसोटा मल्टीफैजिक व्यक्तित्व आविष्करिका वस्तुनिष्ठ व्यक्तित्व परिक्षणों में सबसे अधिक प्रयोग में आने वाले नैदानिक परिक्षण है। इस परिक्षण का निर्माण 1940 में हाथावे एवं मैककीन के द्वारा किया गया।
- इसका प्रकाशन 1943 में किया गया। मूलत: इस परीक्षण में 8 नैदानिक मापनियां थी परन्तु बाद में दो और नैदानिक मापनियों को जोड दिया गया। इस तरह से इस परिक्षण में कुल 10 नैदानिक मापनिया है जिसके द्वारा 10 रोगात्मक शीलगुणों का मापन होता है।

इन सभी बुद्धि तथा व्यक्तित्व परीक्षणों का विस्तृत वर्णन इकाई में आगे प्रस्तुत किया गया हैं।

16.2 उद्देश्य

- बिने परीक्षण को समझ सकेंगे।
- बिने परीक्षण का नैदानिक मूल्यांकन के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- वेश्लर बुद्धि मापनी को समझ सकेंगे।
- वेश्लर बुद्धि मापनी का नैदानिक मूल्यांकन का पायेंगे।
- अनुभवजन्य उपागम: एम एम पी आई व्यक्तित्व परीक्षण के बारे में जान सकेंगे।

16.3 बिने परीक्षण

बुद्धि परीक्षण के इतिहास में बिने परीक्षण की अहमियत नैदानिक दृष्टिकोण से काफी अधिक बतलायी गयी है। इसके दो कारण है- पहला तो यह कि बिने परीक्षण ऐसा मानकीकृत बुद्धि परीक्षण है जिसकी और मनोवैज्ञानिकों का ध्यान गया तथा इस परीक्षण को समय समय पर संशोधन कर उसे और भी अधिक उत्तम बनाने का प्रयास जारी रखा गया।

इस परीक्षण का निर्माण फ्रेन्च मनोवैज्ञानिक अलफ्रेड बिने द्वारा थियोडोर साइमन जो एक मेडिकल डाक्टर थे, की सहायता से की गयी। फ्रेंच सरकार ने मानसिक रूप से दुर्बल बच्चों की पहचान करने के लिए एक बुद्धि परीक्षण का निर्माण का कार्य-भार बिने पर सौपा था। बिने ने साइमन की मदद से

एक बुद्धि परीक्षण का निर्माण 1905 में किया जिसे तब बिने-साइमन मापनी के नाम से पुकारा गया। इस परीक्षण में कुल 30 एकांश थे जिनके द्वारा मूलत: बच्चों में भाषा का प्रयोग तथा चिन्तन एवं बोध आदि का मापन होता था। ये सभी एकांश बढ़ते हुए क्रम में सुसज्जित थे। यह एक वैयक्तिक रूप से क्रियान्वित परीक्षण था जिसका प्रथम संशोधन 1908 में किया गया। इस संशोधन की मुख्य विशेषता यह थी कि इसमें कुछ नये एकांशो को जोडे गए तथा कुछ संतोषजनक पुराने एकांशो को हटा दिया गया। 1908 के संशोधन के बाद इस परीक्षण में एकांशो की संख्या बढ़कर 58 हो गयी।

इस परीक्षण का अंग्रेजी रूपान्तर गोडाई द्वारा 1911 में अमेरिका में किया गया और विभिन्न मानसिक अस्पतालों एवं उपचार गृहों मे इसका प्रयोग मानसिक रूप में कमजोर बच्चों की पहचान में जोर शोर से किया जाने लगा। अमेरिका में इसके कई संशोधन फिर बाद में हुए। जैसे कुहमान नें इसका संशोधन1912 एवं 1913 में किया तथा हेरिंग ने इसका संशोधन 1922 में किया।

नैदानिक दृष्टिकोण से इस परीक्षण का सबसे महत्वपुर्ण संशोधन एल. एम. टरमन द्वारा 1916 में स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में किया गया। इस संशोधन ने परीक्षण में चार चांद लगा दिया। इसकी लोकप्रियता दिन दुनी तथा रात चौगुनी ढंग से बढी। इस संशोधन को स्टैनफोर्ड बिने के नाम से पुकारा गया। इस संशोधन की प्रमुख विशेषता यह थी कि इसमें बुद्धि लब्धि के संप्रत्यय का सबसे पहल बार समावेश किया गया। इस परीक्षण के दो तुल्य फार्म थे- L फार्म तथा M फार्म। 1937 में इस परीक्षण का पुन: संशोधन किया गया और यह संशोधन टरमन तथा मेरिल द्वारा किया गया और इसे नया संशोधित स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण या संक्षेप में दी 1937 बिने कहा गया। इस संशोधन की खास विशेष ता यह थी कि 1916 की तुलना में इसके माननीकरण को अधिक उन्नत बना दिया गया तथा इसकी वैधता को अधिक उत्तम किया गया। इसके अलावा परीक्षण के उपरी तथा निचली उम्र सीमाओं का विस्तार किया गया।

स्टैनफोर्ड बिने मापनी का तीसरा संशोधन 1960 में टरमन तथा मेरिल द्वारा ही किया गया और इसके द्वारा 2 साल के बच्चों से लेकर 22 वर्ष 11 महिना तक के वयस्कों की बुद्धि मापने का दावा किया गया। इस संशोधन में परीक्षण के तुल्य फार्म के स्वरूप को बनाये रखा गया। इस संशोधन में 1937 के उत्तम एकांशो को रखा गया तथा पुराने एवं अनुपयुक्त एकांशो को हटा दिया गया। अधिकतर चिकित्सकों का मत है कि 3 साल से 12 साल के बच्चों के लिए यह परीक्षण काफी प्रेरणात्मक है। इस परीक्षण का चौथा संशोधन 1986 में किया गया। इस संशोधन में स्टैनफोर्ड बिने मापनी को और भी अधिक सर्वोत्कृष्ट बना दिया।

स्टैनफोड बिने मापनी का संशोधन वर्ष -

1. प्रथम संशोधन - 1916
2. द्वितीय संशोधन - 1937
3. तृतीय संशोधन - 1960
4. चतुर्थ संशोधन - 1986

इस संशोधन की कई प्रमुख विशेषताएं है जो निम्नांकित है-

1- इस परीक्षण में 15 अनुच्छेद है जिनमें से 11 अनुच्छेद में शाब्दिक परीक्षणों को रखा गया है जिसके माध्यम से परिमाणात्मक चिन्तन, लघुकालीन स्मृति आदि का मापन होता है। शाब्दिक एकांशो पर उतना अधिक बल पहले के संशोधनों में नहीं दिया गया था।

2- पहली बार इस संशोधन में परीक्षण के विभिन्न अनुच्छेदों को बुद्धि के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित किया गया। इस संशोधित परीक्षण के सैद्धान्तिक मॉडल के तीन स्तर बनाये गए है। स्तर I (level I) पर स्पीयरमैन के g कारक को रखा गया है जिसे स्तर II (level II) पर लाकर बहुत कुछ कैटेल के सिद्धान्त के अनुसार तीन भागों मे बाटां गया है - ठोस क्षमता, तरल या विश्लेषणात्मक क्षमता तथा लघुकालीन स्मृति फिर तीसरे स्तर (level III) पर ठोस क्षमा के दो भागों में बांटा गया है - शाब्दिक चिन्तन तथा परिमाणात्मक चिन्तन। अन्त में प्रत्येक ऐसे क्षमता को मापने के लिए परीक्षण के एकाशों को एक खास ढंग से संबंधितकिया गया है।

1- इस संशोधित परीक्षण में मानसिक आयु के संप्रत्यय को हटा दिया गया है और बुद्धि लब्धि के संप्रत्यय को एक नया संप्रत्यय यानी मानक आयु प्राप्तांक द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है। SAS का निर्धारण प्रत्येक उप-परिक्षण पर व्यक्ति के निष्पादन की तुलना उसी आयु समूह के व्यक्तियों के निष्पादन से करके की जाती है। जैसे, यदि एक आठ साल का बालक अन्य आठ साल के बालकों की तुलना में उप परीक्षणों पर उत्तम निष्पादन प्राप्त करता है तो उसका SAS ऊँचा होगा परंतु यदि अन्य आठ साल के बालकों की तुलना में उसका निष्पादन खराब होता है, तो उसका SAS कम हो जाएगा। इससे स्पष्ट है कि SAS का अर्थ करीब करीब वही है जो IQ का था।

2- इस संशोधित परीक्षण का प्रत्येक उप परीक्षण में खुले प्रश्न या कार्य होते है जो सिलसिलेवार ढंग से कठिन होते जाते है यह परिक्षण के तीन उप-परीक्षण अर्थात शब्दावली परीक्षण, बोध परीक्षण तथा नकल परीक्षण से दिये गए उदाहरणों से परीक्षण की इस विशेषता का स्पष्टीकरण होता है-

शब्दावली परीक्षण

निम्नालिखित को परिभाषित करें-

अ. गेद

ब. सिक्का

स. वाद विवाद

द. टाल मटोल

बोध परीक्षण

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें:

अ. घरों में दरवाजे क्यों होते है?

ब. पुलिस क्यों होती है?

स. लोग कर क्यों देते है?

द. राजनैतिक पार्टी से लोग क्यों संबंधरखते है।

स्टैनफोर्ड बिने मापनी द्वारा 2 साल के बच्चों से लेकर 33 साल के वयस्कों तक की बुद्धि का मापन होता है। कम उम्र के बच्चों के 2 साल से 6 साल तक लिए चार -चार महीने का अंतराल देकर मानक तैयार किये गए है। 12 से 18 साल के व्यक्तियों के लिए एक एक साल के अन्तराल देकर

मानक तैयार किए गए है। 18 साल से 23 के वयस्कों के लिए 5.5 साल का अन्तराल देकर तथा 22 से 33 साल के वयस्कों के लिए 10 साल का अन्तराल देकर मानक तैयार किया गया है।

छोटे बच्चों के लिए कम ही समय का अन्तराल देकर मानक इसलिए तैयार किया गया है। छोटे बच्चों के लिए कम ही समय का अन्तराल देकर मानक इसलिए तैयार किये गये है क्योकि इस अवस्था में संज्ञानात्मक विकास तेजी से होता है। स्पष्टत: तब स्टैनफोर्ड बिने मापनी एक आयु मापनी है क्योकि इसमें आयु स्तर के अनुकूल एकाशों का समूहन किया गया है।

16.4 स्टैनफोर्ड-बिने का नैदानिक मूल्याकंन

स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण के कुछ गुण तथा परिसीमाएं है जिन पर नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने बल डाला है। इसके प्रमुख निम्नांकित है-

1- स्टेनफोर्ड बिने परीक्षण का सबसे आमूल गुण जो अन्य बुद्धि परीक्षणों में प्राय: देखने को नहीं मिलता है, वह यह है कि परीक्षण के वर्तमान प्रारूप द्वारा मौलिक परीक्षण में प्रस्तावित बुद्धि के मूल अर्थ को परिवर्तित नहीं किया गया है। मौलिक परीक्षण के दोनों गुणों अर्थात बुद्धि को चिन्तन, बोध तथा निर्णय के रूप में परिभाषित करना बुद्धि के आयु संदर्भीय मापन को स्टैनफोर्ड-बिने परीक्षण 1986 द्वारा कायम रखा गया। अन्य बुद्धि परीक्षणों के संशोधन में देखा गया है कि परीक्षण के मूल अर्थ एवं संरचना को पूर्णत: परिवर्तित कर दिये जाते है। ऐसी बात स्टेनफोर्ड बिने मापनी के साथ नहीं है।

2- अनेकों अध्ययनों से यह स्थापित हो चुका है कि स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण एक विश्वसनीय तथा वैध परीक्षण है। थॉर्नडाइक, हेगन एवं स्टाटलर, के अनुसार स्टैनफोर्ड-बिने के उप परीक्षणों की औसत विश्वसनीयता .88 तथा सभी आयु स्तरों पर संयुक्त SAS की विश्वसनीयता .95 से अधिक है। इस परीक्षण की वैधता .40 से .75 तक की है।

3- इस परीक्षण द्वारा बच्चों एवं वयस्कों दोनों की बुद्धि की माप होती है।

उपर्युक्त गुणों के कारण नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस परीक्षण का उपयोग काफी अधिक किया जा रहा है।

स्टैनफोर्ड-बिने की परिसीमाएं-

स्टैनफोर्ड-बिने की कुछ परिसीमाएं भी है जिनके निम्नलिखित प्रमुख है-

1- $2\frac{1}{2}$ वर्ष से $5\frac{1}{2}$ वर्ष के बच्चों की बुद्धि मापन के लिए इस परीक्षण को कुछ लोगों ने अधिक विश्वसनीय नहीं पाया है।

2- उसी तरह से कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि वैसे बच्चे जिनकी बुद्धिलब्धि 140 या इससें भी अधिक है, उसके लिए भी यह परीक्षण अधिक विश्वसनीय नहीं है।

इन हल्के फुल्के परिसीमाओं के बावजूद स्टैनफोर्ड बिने मापनी की लोकप्रियता काफी अधिक है तथा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के बीच इस परीक्षण की लोकप्रसिद्धि अधिक है। बिने - साइमन मापनी का भारतीय अनुकूलन भी एस. के. कुलश्रेष्ठ द्वारा किया गया।

16.5 वेश्लर बुद्धि मापनी

डेविड वेश्लर जो अमेरिका के न्युयार्क सिटी के बेलेव्यु अस्पताल में एक मनोरोग विज्ञानी थे, स्टैनफोर्ड बिने मापनी से बहुत संतुष्ट नहीं थे। यह बात 1935.38 की है जब स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण अपने दुसरे संशोधित रूप में द बिन्ट 1937 में प्रकाशित हो गया था। उस समय के इस स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण का एक प्रमुख दोष यह था कि उसके द्वारा वयस्कों की बुद्धि की माप नहीं होती थी। फलस्वरूप वेश्लर ने वयस्कों की बुद्धि की माप करने के लिए 1939 में एक अलग से वैयक्तिक परीक्षण का निर्माण किया जिसका नाम वेश्लर बेलेव्यु बुद्धि मापनी रखा गया।

इस मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि मापनी रखा गया। इस मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि की मापन आसानी से की जाती थी। इस मापनी के दो भाग थे - शाब्दिक मापनी तथा क्रियात्मक मापनी।

1955 में इस परीक्षण का संशोधित संस्करण प्रकाशित किया गया जिसका नाम वेश्लर वयस्क बुद्धि मापनी रखा गया। इस परिक्षण को 1981 में पुन: संशोधित किया गया जिसे WAIS-R कहा गया। WAIS-R के भी दो भाग थे - शाब्दिक मापनी तथा क्रियात्मक मापनी। शाब्दिक मापनी में 6 उपपरीक्षण थे तथा क्रियात्मक मापनी में 5 उप परिक्षण थे। इस तरह से कुल मिलाकर इसमें 11 उप परीक्षण थे।

WAIS-R की शाब्दिक मापनी के 6 उप-परीक्षणों एवं उनका वर्णन निम्नांकित है-

1- सूचना परीक्षण- इसमें 29 एकांश है जिनके द्वारा कुछ ऐसी सामान्य सूचनाओं के बारे में ज्ञान का मापन होता है जिसे एक सामान्य वयस्क से उम्मीद की जाती है।
2- बोध परीक्षण - इस परीक्षण में 16 एकांश या प्रश्न है जिनके द्वारा व्यक्ति से यह पुछा जाता है कि क्यों किसी चीज को किया जाना चाहिए या उसे अमुक परिस्थिति में क्या करनी चाहिए? इससे व्यक्तित में समझ या सूझ की स्तर का मापन होता है।
3- अंक विस्तार परिक्षण - इसमें तीन अंको से लेकर नौ अंको तक के क्रम को परीक्षक पढ़ता है जिसे सुनकर उसी क्रम में या विलोम क्रम में उन अंको को बोलना रहता है। इस परीक्षण द्वारा लधुकालीन स्मृति का मापन होता है।
4- शब्दावली परीक्षण - इसमें 35 शब्द होते हैं जिसे पढ़कर तथा लिखकर परीक्षक व्यक्ति को देता है। व्यक्ति को उन शब्दों को परिभाषित करना होता है या उसका अर्थ बतलाना होता है।
5- अंकगणितीय परीक्षण - इसमें 14 साधारण गणितीय समस्याएं होती है जिसे बिना कागज एवं पेंसिल की मदद से व्यक्ति को समाधान करना होता है। इससे व्यक्ति का परिमाणात्मक चिन्तन का मापन होता है।
6- समानता परीक्षण - इसमें 14 प्रश्न होते हैं और रोगी को प्रत्येक प्रश्न में दिए गये वस्तुओं के बीच समानता बतलाना होता है।

WAIS-R के क्रियात्मक परीक्षण के उपपरीक्षण निम्नांकित है-

1- चित्र पूर्ति परीक्षण - इसमें 20 चित्र होते हैं और प्रत्येक चित्र से कुछ महत्वपूर्ण अंश गायब होता है। व्यक्ति को यह बतलाना होता है कि कौन सा अंश गायब है। इसके द्वारा एकाग्रता तथा असंगतता के समझ की माप होती है।

2- चित्र व्यवस्था परीक्षण - इस परीक्षण में 10 समस्याओं होती हैं। प्रत्येक समस्या में 3 से 6 कार्ड होते है जिन्हें खास क्रम में सुसज्जित करने से एक कहानी बन जाती है। प्रत्येक समस्या के कार्डो को उल्टे पुल्टे कर दिया जाता है तथा व्यक्ति को उसे समय सीमा के भीतर अर्थपूर्ण ढंग से सुसज्जित करना होता है। इससे निर्णय करने की क्षमता, पुर्वाभास करने की क्षमता तथा योजना बनाने की क्षमता का मापन होता है।

3- ब्लाक डिजाइन परीक्षण - इस परीक्षण में 9 कार्ड 9 आकार चित्र बने होते है। दिए गए ब्लाक जिसके भाग लाल, उजला तथा उजला और लाल दोनो ही रंग से रंगे होते हैं, की मदद से व्यक्ति को विशिष्ट आकार चित्र के समान चित्र बनाना होता है। इस परिक्षण द्वारा अशाब्दिक बुद्धि जैसे दृष्टि गति समन्वय तथा विश्लेषण क्षमता आदि का मापन होता है।

4- वस्तु सज्जीकरण परीक्षण - इसमें चार ऐसी समस्याए होती है जिनके अंश सभी कटे होते है। व्यक्ति को प्रत्येक समस्या के सभी कटे हुए अंशों को जोड़ते हुए सुव्यवस्थित कर दिये गए समस्या की वस्तु को बनाना होता है। यह अत्यन्त ही सरल कार्य होता है और इसके द्वारा व्यक्ति के बोध क्षमता का मापन होने के साथ ही साथ दृष्टि पेशीय समन्वय का भी मापन होता है।

5- अंक प्रतीक परीक्षण - इस परीक्षण में व्यक्ति को संकेत प्रतिस्थापन कार्य करना पडता है जिसमें संख्याओं की एक लम्बी कतार होती है जिसके नीचे के खाली स्थानों को व्यक्ति को भरना पडता है। इस कार्य के लिए संकेत दिए रहते है जिसमें 1 से 9 तक अंक होते है और प्रत्येक अंक के साथ एक चिन्ह होता है। अंको के नीचे की खाली जगह में उपयुक्त चिन्ह को लिखना होता है। व्यक्ति 90 सेकेण्ड के भीतर जितने संकेतो को भर सकता या भरता है।

इस तरह से हम देखते है कि WAIS-R मे 6 शाब्दिक परीक्षण तथा 5 क्रियात्मक परीक्षण होते है। 6 शाब्दिक परीक्षणों पर व्यक्ति द्वारा प्राप्त मानक अंको को तथा 5 क्रियात्मक परीक्षण के मानक अंको को जोडकर इन दोनो मापनियों पर अलग-अलग प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है।

शाब्दिक मापनी तथा क्रियात्मक मापनी पर आये प्राप्ताकों को छोडकर सम्पूर्ण मापनी प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है। इन प्राप्तांको को विचलन बुद्धिलब्धि में बदल दिया जाता है जहां माध्य 100 तथा मानक विकास 15 होता है।

कई अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि WAIS-R की विश्वसनीयता तथा वैधता का स्तर काफी संतोषजनक है। काफमैन के अनुसार WAIS-R से केवल बुद्धिलब्धि प्राप्तांक ही नहीं मिलते हैं बल्कि उसके उप परीक्षण के प्राप्ताकों के पैटर्न से विशेष तरह के अनुमान निकालने में नैदानिक मनोवैज्ञानिकों को मदद मिलती है। कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने उप परीक्षण के प्राप्ताकों के इस पैटर्न के आधार पर रोगी के मस्तिष्कीय क्षति के बारे में सफलतापूर्वक अंदाजा लगाया है तो कुछ मनोवैज्ञानिकों ने ऐसे प्राप्ताकों के पैटर्न के आधार पर व्यक्तित्व गतिकी जैसे आवेगशीलता तथा सांवेगिक अस्थिरता के बारे में सफलतापूर्वक पता किया है।

वेश्लर ने बच्चों की बुद्धि मापने के लिए भी दो अलग अलग मापनी का निर्माण किया है जो निम्नांकित है-

1- Wechsler Intelligence Scale for Children (WISC)

2- Wechsler Pre school and Primary Scale of Intelligence (WPPSI)

इनका वर्णन निम्नांकित हैं -

1- **Wechsler Intelligence Scale for Children (WISC)** - WISC का निर्माण 1949 में 5 साल से 15 साल के बच्चों की बुद्धि मापने के लिए किया गया। 1974 में WISC को संशोधित कर और अधिक उन्नत बनाया गया तथा इसे WISC-R कहा गया है। 1991 में WAIS-R का नवीनतम संशोधित प्रारूप का प्रकाशन हुआ जिसे WISC-III कहा गया है। इसकी खास विशेष ता यह है कि इसमें WAIS-R के मौलिक ढांचा को बरकरार रखा गया है परंतु उसके पुराने एकांशो, काफी कठिन तथा आसान एवं संस्कृति भारित एकांशो को हटाकर उसके जगह पर अधिक वैध एकांशो को रखा गया है।

WAIS-R में भी दो तरह के मापनी थे - शाब्दिक मापनी तथा क्रियात्मक मापनी। शाब्दिक मापनी के छह उप परीक्षण थे जो निम्नांकित है-

1- सूचना परीक्षण
2- समानता परीक्षण
3- अंकगणितीय परीक्षण
4- शब्दावली परीक्षण
5- बोध परीक्षण
6- अंक विस्तार परीक्षण यह एक वैकल्पिक परीक्षण है जिसका प्रयोग किसी भी एक शाब्दिक परीक्षण के बदले में किया जा सकता है।

क्रियात्मक परीक्षण के भी छह उप परीक्षण है जो निम्नांकित है।

1- चित्र पूर्ति परीक्षण
2- चित्र व्यवस्था परीक्षण
3- ब्लाकॅ सुसज्जीकरण परीक्षण
4- वस्तु सुसज्जीकरण परीक्षण
5- संकेतीकरण परीक्षण
6- संकेत खोज परीक्षण: एक वैकल्पिक परीक्षण है जिसका प्रयोग संकेतीकरण परीक्षण के बदले किया जा सकता है।

स्पष्ट हुआ कि WISC-III के उपपरीक्षण बहुत हद तक WAIS-R के उप परीक्षण के समान और इसमें वैसे प्रश्न तथा कार्य होते हैं जो बच्चों के लिए उपयुक्त होता है। इस परीक्षण में भी मानक अंको के आधार पर शाब्दिक परीक्षण पर प्राप्तांक क्रियात्मक परीक्षण पर प्राप्तांक तथा दोनों को जोडकर सम्पूर्ण मापनी प्राप्तांक ज्ञात किया जाता है तथा उन्हे फिर विचलन बुद्धि लब्धि में बदल लिया जाता है।

WISC-III की विश्वसनीयता तथा वैधता कई अध्ययनों में भी काफी संतोषजनक पाया गया है। शाब्दिक बुद्धिलब्धि प्राप्तांक, क्रियात्मक बुद्धिलब्धि प्राप्तांक तथा सम्पूर्ण मापनी बुद्धिलब्धि प्राप्तांक के अतिरिक्त WAIS-R को चार प्रत्यक्षज्ञानात्मक संगठन, ध्यानभंगता से स्वतन्त्रता तथा गति संसाधन इसमें प्रथम दो बहुत हद तक क्रमश: शाब्दिक एवं क्रियात्मक बुद्धिलब्धि के ही समान है।

WAIS-R का निर्माण 1968 में वेश्लर द्वारा 4 साल से लेकर $6\frac{1}{2}$ साल के बच्चों की बुद्धि को मापने के लिए किया गया। इसका संशोधित प्रारूप 1989 में प्रकाशित किया गया जिसे WAIS-R कहा गया जिसकी खास विशेषता यह है कि इसमें अब 3 साल के आयु के बच्चो की बुद्धि को मापना भी संभव हो पाया है। इस परिक्षण के करीब करीब आधे एकांश WISC-R से लिए गए हैं तथा इस परीक्षण में भी शाब्दिक परीक्षण तथा क्रियात्मक मापनी है। इस परिक्षण के शाब्दिक परीक्षण में छह उप परीक्षण है तथा क्रियात्मक मापनी में पांच उप परीक्षण हैं। इस तरह से कुल मिलाकर ग्यारह उप परिक्षण है। शाब्दिक मापनी के छह उप परीक्षण इस प्रकार है-

1- सूचना परीक्षण
2- शब्दावली परीक्षण
3- अंकगणितीय परीक्षण
4- समानता परीक्षण
5- बोध परीक्षण
6- वाक्य परीक्षण -

यह एक वैकल्पिक परीक्षण है जिसका प्रयोग किसी भी शाब्दिक मापनी के बदले में किया जा सकता है।

क्रियात्मक मापनी के पांच उप परीक्षण निम्नांकित है-

1- पशु घर परीक्षण
2- चित्रपूर्ति परीक्षण
3- भूल भूलैया परीक्षण
4- ज्यामितीय डिजाइन परीक्षण
5- ब्लॉक डिजाइन परीक्षण

2- **Wechsler Pre school and Primary Scale of Intelligence (WPPSI)** - WPPSI में भी परीक्षणों को छोड़कर बाकी सभी परीक्षण वही है जो WAIS-R के थे। वे ती नये परीक्षण हैं- पशु घर परीक्षण, वाक्य परीक्षण तथा ज्यामितीय डिजाइन परीक्षण। वाक्य परीक्षण में बच्चों को परीक्षक द्वारा बोले गए वाक्य को बोलकर ही दोहराना होता है। पशु घर परीक्षण में बच्चा को रंगीन सिलिंडर को पशुओं के चित्र से संबंधितकरना पडता है। पशु घर परीक्षण एक तरह का वैकल्पिक परीक्षण है जिसका उपयोग किसी भी क्रियात्मक परीक्षण के बदले किया जा सकता है। ज्यामितीय डिजाइन परीक्षण में बच्चों को कई तरह के ज्यामितीय डिजाइन एवं आकारों को दिए गए कागज पर पेंसिल के सहारे बनाना होता है।

प्रत्येक उप परीक्षण पर आये प्राप्तांक को एक मानक प्राप्तांक में जिसका माध्य -10 तथा मानक विचलन -3 होता है, में बदल दिया जाता है। फिर उसके आधार पर शाब्दिक, क्रियात्मक एवं सम्पूर्ण मापनी प्राप्तांक ज्ञात किया जा सकता है और उसे विचलन बुद्धि लब्धि में जिसका माध्य 100 एवं मानक विचलन 15 होता है, बदल दिया जाता है।

WAIS-III तथा WISC-R के समान WPPSI भी एक काफी विश्वसनीय एवं वैध बुद्धि मापनी है। शाब्दिक एवं क्रियात्मक परीक्षण की औसत विश्वसनीय ता .90 पाया गया है तथा वैधता गुणांक .75 से .80 तक पाया गया है।

वेश्लर द्वारा प्रतिपादित तीनों मापनियों (WAIS-R, WISC-III तथा WISC-III) एक तरह का बिन्दु मापनी है जिसमें प्रत्येक विषय क्षेत्र के लिए एक अलग प्रात्पांक दिये जाते है।

16.6 वेश्लर मापनी का नैदानिक मूल्यांकन

वेश्लर द्वारा निर्मित WAIS-R, WISC-III तथा WPPSI का संयुक्त मूल्यांकन एनासटेसी द्वारा काफी संतोषजनक ढंग से किया गया। इस मूल्यांकन में इन परीक्षणों के कुछ ऐसे गुण एवं दोषों पर प्रकाश डाला गया है जो नैदानिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपुर्ण है। इन परीक्षणों के गुणों को इस प्रकार बतलाया गया है-

1- WAIS-R, WISC-III तथा WPPSI की तुलना अन्य वैयक्तिक रूप से क्रियान्वित बुद्धि परीक्षणों से करने पर यह स्पष्ट होता है कि इन परीक्षणों में माननीकरण प्रतिदर्श का आकार बड़ा था तथा उसमें जीवसंख्या के प्रतिनिधित्व का गुण था। एनासटेसी का मत है की इस तरह का प्रतिदर्श के आधार पर जो मानक तैयार किए गए हैं, उनके आधार पर प्राप्ताकों की होने वाली व्याख्या अधिक वैज्ञानिक एवं निर्भरयोग्य होती है।

2- वेश्लर के इन तीनों परीक्षणों की नैदानिक उपयोगिता बच्चों एवं वयस्कों की बौद्धिक स्तर का पता लगाने में इतनी अधिक बतलायी गयी है कि अधिकतर चिकित्सकों द्वारा इसे नैदानिक मूल्यांकन का एक अपरिहार्य साधन माना गया है।

वेश्लर मापनी के अवगुण - वेश्लर मापनी के कुछ अवगुण भी बतलाए गए हैं जो निम्नांकित है-

1- यदि हम वेश्लर के इन तीनों मापनियों की तुलना स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण से करें तो पायेंगे कि इन तीनों मापनियों के क्रियान्वयन करने में तुलनात्मक रूप से समय एवं श्रम दोनों ही अधिक लगते है। कुछेक नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि नैदानिक मूल्यांकन करने में कभी कभी वेश्लर मापनी के इस परिसीमा के कारण कोई दूसरा बुद्धि परीक्षण के क्रियान्वयन के लिए मजबूर होना पडता है।

2- एनासटेसी का कहना है कि इन तीनों मापनियों का सबसे अधिक कमजोर बिन्दु यह है कि इसकी वैधता से संबंधित आनुभविक आंकडों की कमी है। ऐसी परिस्थिति में इन मापनियों पर आधारित नैदानिक मूल्यांकन की वैधता एवं निर्भरता पर स्वभावत: शंका होने लगती है।

3- इन परीक्षणों के बावजूद वेश्लर मापनी जैसा दूसरा कोई मापनी अभी नैदानिक मूल्यांकन के लिए उपलब्ध नहीं है।

इसकी लोकप्रियता का सबूत इससे भी मिल जाता है कि अमेरिका के बाहर भी इस परीक्षण का उपयोग काफी हो रहा है। भारत में वेश्लर मापनी का खासकर WISC-III का भारतीय अनुकूलन पी. रामा लिंगास्वामी द्वारा करके इसे भारतीय परिस्थिति में भी काफी उपयोगी बनाया है। इसका अनुकूलन स्पैनिश भाषा में भी किया जा चुका है तथा वेश्लर के अनुसार गत 30 वर्षो से इसका सफलतापुर्वक उपयोग किया जा रहा है। लोपेज एवं टाउसिंग के अनुसार इसका उपयोग हिस्पैनिक संस्कृति के लोगों की बुद्धि मापने के लिए भी सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

16.7 अनुभवजन्य उपागम :एम एम पी आई

माइनेसोटा मल्टीफैजिक व्यक्तित्व आविष्करिका वस्तुनिष्ठ व्यक्तित्व परिक्षणों में सबसे अधिक प्रयोग में आने वाले नैदानिक परिक्षण है। इस परिक्षण का निर्माण 1940 में हाथावे एवं मैककीन की द्वारा किया गया तथा इसका प्रकाशन 1943 में किया गया। मूलत: इस परीक्षण में 8 नैदानिक मापनियां थी परन्तु बाद में दो और नैदानिक मापनियों को जोड दिया गया।

इस तरह से इस परिक्षण में कुल 10 नैदानिक मापनिया है जिसके द्वारा 10 रोगात्मक शीलगुणों का मापन होता है। इस तरह से MMPI का मूल उद्देश्य रोगी के व्यक्तित्व के रोगात्मक शीलगुणों का मापन करना होता है न कि सामाजिक शीलगुणों का। बुचर 1984, के अनुसार इस मापनी की लोकप्रियता इसी बात से साबित हो जाती है कि करीब 46 से अधिक देशों में 115 भाषाओं से अधिक में इसका अनुवाद किया जा चुका है।

इस परीक्षण में मौलिक रूप से 550 एकांश थे जिनका चयन अनुभवजन्य नियमों या कसौटी रूप-रेखा पर आधारित है। प्रत्येक एकांश का उत्तर दिये गए तीन उत्तरो में से चुनकर करना होता है, वे तीन उत्तर है।

'सही', 'गलत', 'नहीं कह सकते'

MMPI के कई संशोधित प्रारूप तैयार किए गए है जिनमें सबसे नवीनतम संशोधन को MMPI-2 के नाम से जाना जाता है। यह संशोधन बुचर, डाहस्टोम, ग्राहम, टेलेगन तथा केमर द्वारा किया गया।

MMPI-2 में 10 नैदानिक मापनी है तथा तीन मुख्य वैद्यता मापनी है। निटलेज, वर्नस्टीन तथा मिलिक के अनुसार इन तीन वैद्यता मापनी के अतिरिक्त एक और वैधता मापनी है जिसे ? से संकेतिक किया जाता है तथा इसमें उन एकांशो को रखा जाता है जिसका उत्तर व्यक्ति नहीं दे पाता है। इन सभी चार वैधता मापनियों का संबंध आविष्करिका के वैधता से कुछ भी नहीं है बल्कि इनके द्वारा विभिन्न तरह की वैसी मनोवृत्तियों का पता चलता है जिनमें परिक्षण पर की अनुक्रियाए विकृत हो जाती है।

इन सभी मापनियों में कुल मिलाकर 641 एकांश है परतुं 74 एकांश एक मापनी से दूसरे मापनी में सामान्य होने से MMPI-2 में कुल 567 एकांश बच जाते है। MMPI-2 के दो फार्म है- व्यस्क फार्म जिसका उपयोग वयस्कों के व्यक्तित्व मापन में होता है तथा किशोर फार्म जिसका उपयोग केवल किशोरों के व्यक्तित्व मापन के लिए होता है तथा इसे MMPI-2 कहा गया है। MMPI-2 का क्रियान्वयन एक समूह में या फिर अकेले ही एक व्यक्ति पर किया जा सकता है।

इसके सभी 10 नैदानिक मापनी का वर्णन इस प्रकार है -

नैदानिक मापनी

1- **रोग भ्रम** - इस मापनी के कुल 32 एकांश है और इसके द्वारा उस प्रवृति की माप होती है जिसमें व्यक्ति अपने शारीरिक स्वास्थ्य एवं शारीरिक कार्य के बारे में जरूरत से ज्यादा चिंता दिखलाता है।

2- **विषाद** - इस मापनी में कुल 57 एकांश है और इसके द्वारा भावात्मक विकृति से संबंध प्रवृतियां जैसे उदासी, क्षमता में ह्रास, अभिरूचि एवं उर्जा में कमी आदि का मापन होता है।

3- **रूपांतर हिस्टीया -** इस मापनी के 60 एकांश है और इसके द्वारा एक ऐसा स्नायुविकृत प्रवृति का मापन होता है जिसमें रोगी मानसिक संघर्ष एवं चिंताओं से छुटकारा पाने के लिए कोई न कोई शारीरिक लक्षण विकसित कर लेता है।

4- **पुरुषत्व – नारीत्व** - इस मापनी में 56 एकांश है तथा इसके द्वारा व्यक्ति में सामाजिक एवं नैतिक मानकों को अवहेलना करने वाली प्रवृतियां तथा दंडात्मक अनुभूतियों से भी कुछ न सीखने की प्रवृति का मापन होता है।

5- **स्थिर व्यामोह** - इस मापनी में 40 एकांश है जिनके द्वारा व्यक्ति में असामान्य शक करने की प्रवृति तथा दंडात्मक एवं उत्कृष्ठता से संबंधितगलत विश्वास या भ्रांन्ति का मापन होता है।

6- **मनौदौर्बल्यता** - इस मापनी मे कुल 48 एकांश है जिनके द्वारा व्यक्ति में मनोग्रस्ति, बाध्यता, असामान्य डर आदि का मापन होता है।

7- **मनोविदालिता** - इस मापनी में 78 एकांश है और इसके द्वारा व्यक्ति में असामान्य चिंतन या व्यवहार करने की प्रवृति का मापन होता है।

8- **अल्पोन्माद** - इस मापनी में 46 एकांश है और इसके द्वारा व्यक्ति के सांवेगिक उत्तेजन, अतिक्रिया तथा विचारों का बिखराव मापन होता है।

9- सामाजिक अन्तर्मुखता - इस मापनी में 69 एकांश है और इसके द्वारा व्यक्ति के कुछ विशेष प्रवृतियां जैसे शर्मिलापन, अन्य लोगों में अभिरूचि न दिखाने की प्रवृति तथा असुरक्षा आदि का मापन होता है।

16.8 सारांश

- बुद्धि व्यक्ति की एक सार्वजनिक क्षमता हैं जिसके सहारे व्यकित विवेकशील चिंतन करता हैं। उद्देश्य पूर्ण क्रिया करता हैं तथा वातावरण के साथ प्रभावकारी ढ़ंग से समायोजन करता हैं।
- बुद्धि के नैदानिक मापन के लिए प्रमुख साधनों या परीक्षणों का विस्तृत वर्णन इकाई में किया गया हैं इनमें बिने परीक्षण तथा वेश्लर बुद्धि मापनी प्रस्तुत इकाई में हैं।
- बिने परीक्षण की अहमियत नैदानिक दृष्टिकोण से काफी अधिक बतलायी गयी है। इसके दो कारण है- पहला तो यह कि बिने परीक्षण ऐसा माननीकृत बुद्धि परीक्षण है जिसकी और मनोवैज्ञानिकों का ध्यान गया तथा इस परीक्षण को समय समय पर संशोधन कर उसे और भी अधिक उत्तम बनाने का प्रयास जारी रखा गया।
- वेश्लर ने वयस्कों की बुद्धि की माप करने के लिए 1939 में एक अलग से वैयक्तिक परीक्षण का निर्माण किया जिसका नाम वेश्लर बेलेभ्यू बुद्धि मापनी रखा गया।
- वेश्लर मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि मापनी रखा गया। इस मापनी द्वारा वयस्क की बुद्धि की मापन आसानी से की जाती थी।
- माइनेसोटा मल्टीफैजिक व्यक्तित्व आविष्करिका वस्तुनिष्ठ व्यक्तित्व परिक्षणों में सबसे अधिक प्रयोग में आने वाले नैदानिक परीक्षण है।
- एम एम पी आई परिक्षण का निर्माण 1940 में हाथावे एवं मैककीन के द्वारा किया गया।

16.9 प्रश्नोत्तर

1. बिने परीक्षण को समझाइये?
2. बिने परीक्षण का नैदानिक मूल्यांकन के बारे में आपको क्या जानकारी प्राप्त हुई?
3. वेश्लर बुद्धि मापनी के बारे में संक्षिप्त में समझाइयें?
4. वेश्लर बुद्धि मापनी का नैदानिक मूल्यांकन करिये?
5. अनुभवजन्य उपागम: एम एम पी आई व्यक्तित्व परीक्षण के बारे में आप क्या जानते हैं?

16.10 संदर्भ सूची (Refrences)

- Korchin, S.J.: Modern Clinical Psychology
- Kendall and Norton Ford : Clinical Psychology
- Wolman : Handbook of Clinical Psychology
- Anderson and Anderson : Introduction to Projective Techniques
- Singh, A.K. (2001). Advanced Clinical Psychology
- Rim & Masters Behaviour Therapy: Academic Press.